कोहनूर

लेखक
पं० अम्बिकाप्रसाद चतुर्वेदी,
एम० ए० एल० एल० बी०

प्रकाशक
हरिदास एण्ड कम्पनी

कोहनूर

अथवा

सुख, सौन्दर्य्य और सद्ज्ञान

(Beauty, Pleasure and Knowledge)

लेखक—

पं० अम्बिकाप्रसाद चतुर्व्वेदी,

एम०ए० एल०एल० बी०

(वकील छिंदवाड़ा सी० पी०)

प्रकाशक

हरिदास एण्ड कम्पनी।

कलकत्ता

२०१ हरिसन रोड के "नरसिंह प्रेसमें"

बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा

मुद्रित।

सन १९१८ ई०

प्रथम संस्करण १००० **मूल्य** २)

साहित्य-प्रेमी सज्जनोंको यह पूर्णतया विदित ही है कि, छिंदवाड़ेमें एक "हिन्दी-ग्रन्थ-प्रसारक समिति" की स्थापना इसी वर्ष हुई है, जिसका उद्देश्य अङ्गरेज़ी तथा अन्यान्य भाषाओंके उत्तमोत्तम ग्रन्थोंका अनुवाद कराकर एवं अनेक नये-नये प्रकारके उत्तम ग्रन्थोंको लिखवाकर प्रकाशित करा, हिन्दी-साहित्यकी अल्प सेवा करना है। इस वर्ष हमारी समितिके उप-सभापति बाबू ब्रजमोहनलाल वर्मा बी० ए० द्वारा अनुवादित "फाहियान और हुएनसंगकी भारत यात्रा" नामक, प्राचीन भारतके गौरवको

बतलाने वाला उत्तम ऐतिहासिक ग्रन्थ हम अपने प्रिय पाठकोंकी भेंट कर ही चुके हैं। अब समितिने उत्तमोत्तम उपन्यासोंके निकालने का कार्य भी हाथमें लिया है। सर्वानुमतिसे हमारी समिति के सभासद पण्डित अम्बिकाप्रसादजी चतुर्वेदी एम० ए०, एल० एल० बी० रचित "कोहेनूर" नामक अत्यन्त ही रोचक, सरस, शिक्षाप्रद, सर्वाङ्गपूर्ण उपन्यास—जो हिन्दी साहित्य की एक बहुतही बड़ी क्षतिकी पूर्ति करने वाला है, जिसमें दर्शन शास्त्र के अनेकों गूढ़ प्रश्नोंका बहुतही चित्ताकर्षक ढँगसे सरलता-पूर्वक हल करनेका श्रीयुत चतुर्वेदी जीने प्रयत्न किया है—सर्व ग्राह्य और सर्वमान्य समझा जाकर उसीका हिन्दी अनुवाद पाठकोंकी भेंट करनेका निश्चय किया गया। यह कार्य पण्डित ग़रीबदासजी अग्निहोत्रीको सौंपा गया। उन्होंने अपना कार्य बड़ी सावधानीके साथ, शीघ्र ही, सरल और मनोरञ्जक भाषामें बहुतही उत्तम विधिसे किया है, इसलिये हमारी समिति आपकी और श्रीयुत चतुर्वेदीजी की बहुत ऋणी है और आप दोनों महोदयोंको उसे इस प्रकार सहायता देनेके लिये हार्दिक धन्यवाद देती है।

"समिति" साहित्यप्रेमी देशभक्त पं० हरिदासजी की भी बहुतही आभारी है, जिन्होंने श्रीयुत चतुर्वेदीजीसे इस उपन्यासके कॉपीराइट को ख़रीदकर, कई कठिनाइयोंके आनेपर भी, इसे अच्छे काग़ज़ और उमदा टाइपमें प्रकाशित कर, सर्वाङ्ग-सुन्दर बनानेमें किसी भी प्रकार की कोताही नहीं की।

लीजिये पाठकगण, यह सर्वोत्तम उपन्यास आपहीको अर्पण किया जाता है। आप इसे अपनाकर हमारे उत्साह को बढ़ाइये।

यह बात सूचित करनेमें हमको बहुतही आनन्द होता है कि, एक अति मनोहर सामयिक महत्वपूर्ण बातोंसे भरा हुआ देश-भक्ति-परिपूर्ण स्वतन्त्र "भारतप्रेमी" उपन्यास श्रीयुत पं० भगवतप्रसादजी शुक्ल-रचित आप लोगोंको शीघ्र ही भेंट किया जावेगा।

हमारी "समिति"ने आर्थिक व धार्मिक विषयोंपर कुछ ग्रन्थ तैयार करानेका काम भी हाथमें लिया है। दो मासके अन्दरही देशकी सच्ची आर्थिक दशा बतलानेवाला और हमारी दशा सुधारनेका मार्ग प्रदर्शन करनेवाला एक अनूठा ग्रन्थ शीघ्रही प्रकाशित करके देश-प्रेमी सज्जनोंको समर्पण किया जावेगा। स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकानन्दके सम्पूर्ण ग्रन्थोंके हिन्दी अनुवाद करनेका कार्य भी सुचारु रूपेण चल रहा है। शीघ्र ही आपको इन अलौकिक ग्रन्थों के पढ़नेका अवसर मिलेगा।

अन्तमें, पाठकगणसे हमारी यही प्रार्थना है कि, इस पुस्तकमें कुछ भूल-चूक व दोष रह गये हों, तो उनके लिये वे हमको क्षमा प्रदान करेंगे। आशा है, हिन्दी-साहित्य-प्रेमी

सज्जनगण हमें हर प्रकारसे सहायता देकर हमारे उत्साहको बढ़ाते रहेंगे । इति शुभम् ।

विनीत—

मानननीय, प्यारेलाल मिश्र ।

बैरिष्टर एट-ला

मैम्बर० सी० पी० लैजिस्लेटिव काउन्सिल,

सभापति

हिन्दी-ग्रन्थप्रचारक समिति

छिन्दवाड़ा सी० पी०

कोहनूर।

पहला परिच्छेद ।

रेलगड़ी ।

प्रिय वसन्त ऋतु के आगमन से आगरेको विशाल नगरीने एक अपूर्व्व शोभा धारण करली है। छोटे से छोटा पत्ता, छोटी से छोटी वस्तु, चरागाह, वन-उपवन प्रभृति सब ही में एक नवीन छटा विद्यमान है। प्रत्येक प्रकारके रंग-बिरंगे सफेद, पीले, लाल, सिन्दूरी, नीले, गुलाबी आदि नाना प्रकार के पक्षियों ने अपनी क्रीड़ामय

आवागमन और मधुर गान तथा चहचहाट से उक्त मनोरम शोभा को औरभी चित्ताकर्षक कर दिया है। कोयल की कुहुक और चण्डूल के सरस गान से ऐसा प्रतीत होता है, मानो वे पक्षी अपनी-अपनी विरहिणियोंके विरहमें विह्वल हो उन्हें ढूँढ़ने के लिये पुकार रहे हों। इस समय की प्रकृति की शान्तिमयी मूर्त्ति, यमनातट का मन्द-मन्द शीतल समीर-प्रवाह तथा अन्यान्य दृश्यों के सौन्दर्य से देखनेवालेका मन हाथों से निकल जाता है और उसे ऐसा भान होता है, मानो वह इन्द्र-भवन या नन्दनकाननमें भ्रमण कर रहा हो। अस्तु।

भगवान् भुवन-भास्कर अपनी दिव्य एवं प्रतापमयी कान्तिको पूजनीया मातेश्वरी यमुना की शान्ति और विश्राम-दायिनी गोद से शनैः शनैः हटाकर श्यामवर्ण लोक की यात्रा के लिए प्रस्थान कर रहे हैं। उक्त दृश्यकी शोभापर मुग्ध हो, वे अपने तईं नाना प्रकार से धिक्कारने लगे। उनका चित्त चलायमान हो गया। उन्होंने यमुना मैया की शान्तिपूर्ण आनन्दमयी मृदुल और निर्मल गोद में औरभी विश्राम लेना चाहा, किन्तु उनके तेजस्वी अश्वोंने उनको अपने इस विचार पर स्थिर न रहने दिया। यदि उनके अश्व उनके विचार में बाधक न होते, तो वे शायद ही वहाँ से विदा होते!

इस समय दिवाकर क्षितिज की धवल दीवारों पर बहुत कुछ चढ़ चुके हैं। पर उनकी आत्मा अब भी श्री यमुनाजीके

निर्मल जल में प्रतिबिम्ब-रूपमें झिलमिला रही है। वहाँ के सूक्ष्म जलाशय—पोखरे—भी उनके दर्शन करके शनैः शनैः भाफ के रूप में परिणत हो, इस प्रकार लोप होते जाते हैं, मानो वे अपने आत्माको उक्त दिव्यात्मा में मिलाने के लिए अहंभाव का नाश कर रहे हों।

रात्रिके विश्रामके पश्चात् श्रमजीवी लोग डगमगाती चाल से अपने-अपने खेतोंकी ओर जाते हुए नज़र आते हैं। रेलवे स्टेशनपर बड़ी चहलपहल है। कुलियोंका समुदाय इस समय प्लेटफार्मपर जमा हो गया है। मालूम होता है, थोड़ी ही देरमें रेलगाड़ी गड़गड़ाती हुई आनेवाली है। नहीं नहीं, वह देखो, रेलगाड़ी भकभक करती हुई स्टेशनपर आही तो गई। गाड़ीके आते ही स्टेशनपर खलबलीसी मच गई। रेलवे सरवैण्ट यानी रेलके कर्मचारी अपनी ऐंठमें इधर-उधर घूमने लगे। गोरे सिपाही भी अपनी मस्तानी चालसे खट-खट करते हुए और सीटी बजाते हुए इधर से उधर और इधर से उधर टहलने लगे।

कुली लोग डब्बोंके सामने खड़े होकर कुली-कुली कह कर चिल्लाने लगे। मुसाफिर गाड़ी से उतरने के लिए जल्दी करने लगे। कई प्रकार के मधुर और कर्कश शब्दों का मिश्रित कोलाहल श्रोताके चित्तपर एक अपूर्व ही चित्र अङ्कित करता था। आर्य्य रमणियों का चलने में ठोकर खाना, ठिठकना, बच्चों का आनन्दपूर्ण क्रंन्दन, मित्रों का आगत-स्वागत, विप्रति-

दारों और सम्बन्धियों की आपसकी विदाई, नवविवाहिता युवतियोंका जुदाईके कारण स्नेहपूर्ण अश्रुपात, वरको आत्म-श्लाघा, अङ्गरेज़ बालकोंका ष्टेशनकी सीढ़ियोंपर क्रीड़ामय चढ़ना उतरना और इधर-उधर भागना, गोरे सिपाहियों के भारी-भारी बूटोंका कर्कश शब्द, अङ्गरेज़ युवकोंका मुँहमें चुरूट दबाए स्वजातीय रमणियों के हाथ में हाथ डाले स्वच्छ-न्दतापूर्वक विचरना, एवं स्वभाव से ही लज्जावती और संकोच-वती आर्य ललनाओं का लजाना और शर्माना दर्शकके चित्तपर एक ऐसा अनोखा भाव अङ्कित करता था, जिसका विस्मरण होना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। यद्यपि उस दिनकी अपूर्व्व शोभाको व्यापारियोंके हार्दिक हास्य-परिहास और युवतियों के मनोमुग्धकर रूपलावण्यपूर्ण चन्द्राननोंकी शोभा और कान्तिने विशेष शोभा-सम्पन्न कर दिया था; तथापि वह सारी शोभा एक दिव्य कान्तिपूर्ण व्यक्ति में समाकर कुछ फीकीसी हो रही थी।

वह व्यक्ति एक सुन्दरी-शिरोमणि ललना थी। उसके सौन्दर्य्यका बखान करना, इस लेखककी लेखनीकी सामर्थ्य से बाहर है। उसका प्रत्येक अङ्ग-प्रत्यङ्ग सुघड़ाई से पूर्ण था। उसकी नाकको देखने से ऐसा प्रतीत होता था, मानो तोतेने स्वयं अपनी नाक देकर उसके मुख-सौन्दर्य्यको प्रकाशित कर दिया है। उसके सरस और मृदुल अधरों के देखने से ऐसा जान पड़ता था, मानो वे वसन्त ऋतुकी नई नई कोंपलें

हो। केश-गुच्छ भौंरे की श्यामताको भी मात-करनेवाले थे और वे अपनी अजीब अदाके साथ उसके सुन्दर सुडौल कन्धोंपर पड़े हुए अपनी अजब आनबान दिखा रहे थे। उसकी आँखों की पुतलियोंकी तो शोभा ही निराली थी। देखनेसे ऐसा मालूम होता था, मानो किसीने चलते-फिरते दो मनोहर नीलम जड़ दिये हों। वह रमणी मँझोले क़द की थी। नाम उसका "गुलाब" था। वह दूसरे दर्जेकी गाड़ी में अपने सिरको दाहिने हाथ के सहारे रक्खे हुए किसी गहरे सोचमें निमग्न थी। उसकी मनोहर आँखोंसे आसुँओंकी धाराएँ बह-बहकर उसके गुलाबी गालोंपर एक अनोखा सौन्दर्य्य प्रदर्शित कर रही थीं।

प्रातःकाल के शीतल मन्द समीर तथा बाल-सूर्य्यके मृदुल प्रकाशने उस युवतीके दुखित चित्तको बहुत कुछ शान्त कर दिया था; परन्तु फिर भी उसका सिसकना बन्द नहीं हुआ था। रमणी की ऐसी स्थितिमें ही एक फैशनेबिल नवयुवकने उसी डब्बेमें प्रवेश किया। वह उससे कुछ दूर पर एक निकटवर्त्ती बेञ्च पर बैठ गया। उसे देखते ही युवती बिना कुछ बोले-चाले ज़रा सिकुडकर एक ओर सम्हलकर बैठ गई।

उस युवकका नाम राजकुमार था। वह आगरा कालेज की बी० ए० क्लासका विद्यार्थी था। उसकी बातचीत और पहनाव-पोशाक से उसका उच्चकुल-सम्भूत होना सहज ही प्रतीत होता था।

राजकुमारके आसन ग्रहण करने के प्रायः ५ मिनिट बाद ही, गाड़ी सीटी देकर भकभक करती हुई, आगरा ष्टेशन से चल दी। प्रायः दश मिनिट तक डब्बेमें गाड़ीकी गड़गड़-घड़घड़-ध्वनिके सिवा पूर्ण शान्ति रही। कुछ देर बाद राजकुमार वहाँकी शान्तिको भङ्ग करके मधुर स्वर से बोला—"श्रीमती जी! धृष्टता क्षमा कीजिए और कृपा करके अपने इस प्रकार रोने-कलपनेका कारण बताकर अनुग्रहीत कीजिए।"

यह प्रश्न करके राजकुमार कुछ क्षण तक जवाबका इन्तज़ार करता रहा, मगर जबकि बहुत देर तक भी उसे कुछ जवाब न मिला तो वह कहने लगा—"श्रीमती! दया करके कहिये तो सही, मामला क्या है? आप इस प्रकार से क्यों रो रही हैं? आप पर क्या दुःख पड़ा है? परमेश्वरके लिए कुछ तो बताइये, मुझे आपकी इस हालत पर तर्स आता है। बन्दा हर तरहसे आपके दुःखको दूर करनेके लिए तयार है। अगर मुझ नाचीज़ से आपका कुछ भी दुःख दूर हो सकेगा, अगर मैं आपके कुछ भी काम आ सकूँगा, तो अपना अहोभाग्य समझूँगा। कहिये, कहिये, बात क्या है? कुछ भी क्यों न हो, मैं हर तरह से आपकी ख़िदमत के लिए तैयार हूँ।"

इन मधुर और सहानुभूति-पूर्ण शब्दों ने युवतीके चित्तपर असर किया। वह रूपयौवन-सम्पन्ना युवती लजाती-लजाती कोयल के से मधुर स्वरमें बोली—"महोदय! आपने जो मेरे

साथ सहानुभूति प्रकट की है, उसके लिए मैं आपको अशेष धन्यवाद देती हूँ और साथ ही नम्र निवेदन करती हूँ कि, आप मेरे अभाग्य और दुःखको देखकर दुखित न हों।"

उस रमणीके अन्तिम वाक्योंको सुनकर राजकुमार सहम गया। उसके कोमल चित्तपर एक भारी धक्का लगा। उसका शरीर थरथर काँपने लगा। आँखों के सामने अँधेरासा छा गया। मुँहसे बात न निकली। कुछ देर के बाद वह अपने को सम्हालकर और धैर्य्य धरकर बोला—"यदि मैं आपके किसी कामके भी योग्य हूँ, यदि मैं आपका कुछ भी उपकार कर सकता हूँ, तो आप मुझे अपना हितु-मित्र या भाई अथवा जो कुछ भी समझें—समझकर मुझे अपनी विपद्पूर्ण कहानी से अवगत कीजिए। श्रीमती जैसी रूपलावण्ययुक्त ललनाका इस प्रकार बिना किसी साथी-संगी के अकेले सफर करना मुझे तो बड़ाही कौतुहलजनक मालूम होता है!

"क्या कहा? साथी-संगी बिना! नहीं नहीं, मेरा साथी था; परन्तु वह परले सिरेका दग़ाबाज़ और अधर्मी निकला। उसने मुझे बड़ा धोखा दिया। उसने मेरे साथ बड़ी भारी निर्दयता और बेरहमीका बर्ताव किया। वह मुझे धोखा देकर, मुझे इस संसारमें अकेली भटकनेको छोड़कर, न जाने कहाँ चला गया? उसने मैं कहींको न रक्खी। भगवान् ही जाने अब मेरा क्या हाल होगा!" यह कहकर वह सुन्दरी फिर बिलख-बिलख कर रोने लगी।

एक रूपवती को ऐसी असहाय साथी-संगी-विहीन अवस्थामें देखकर, ऐसा कौन कठोरहृदय होगा, जिसे तर्स न आवे? अस्तु। राजकुमार तो एक कुलीन वंशज और शिक्षित युवक था। उसे रमणीकी उस दशापर बड़ी दया आई। वह दुःखित चित्तसे ठण्डी साँसे लेता हुआ बोला—"श्रीमती! उस दुष्टको दुष्टके नामसे पुकारनेमें भी कलङ्क है। मुझे बड़ा आश्चर्य है कि, उस पाषाण-हृदयने आप जैसी रूपलावण्यवती कोमल बालाको ऐसी स्थितिमें छोड़नेका साहस कैसे किया! खैर, जो होना था सो हुआ। अब आप कुछ भी चिन्ता-फिक्र न कीजिए। यह दास हर तरहसे आपकी सेवा के लिए मौजूद है। यह आपकी सहायता करने से हरगिज़ पीछे न हटेगा। कृपया, आप अपने दुःख-रूपी अश्रुकी धार को इस तरह ढीली न छोड़िये।"

इस तरहसे समझा-बुझा और ढाढस बँधाकर उस युवकने दुःखिनी युवती के पास जाकर उसके आँसू पोंछने के लिए उस के बिल्कुल पास आसन ग्रहण कर लिया।

राजकुमार के इस काम से युवती ने किसी प्रकार का सङ्कोच न किया। वह उसके पास उसकी बाईं तरफ बैठी रही। कुछ देरके बाद राजकुमारने फिर बातचीतोंका सिलसिला चलाया और पूछा—"आप किस शुभ स्थान को सुशोभित करनेवाली हैं?" प्रत्युत्तरमें युवती हिचकिचाती हुई बोली—"यह हतभागिनी ग़ाज़ियाबाद, अपने पितृ-गृहको, जाती है।"

राजकुमार—पर कृपया यह तो बतलाइये कि, आप किस स्थानसे आरही हैं ?

गुलाब—अपनी सुसराल ग्वालियरसे।

राजकुमार—आप इस प्रकारकी निर्जन स्थितिमें क्योंकर पहुँचीं ?

युवती सङ्कोच को विदा कर मृदु स्वरमें बोली :—"महाशय ! इस सब का कारण हत-भागिनीके प्रणय-सम्बन्ध से ही समझिये, जो मेरे माता-पिताने एक ६० वर्षीय धनाढ्य अफीमची से कर दिया था। शीघ्रही मैं उस अफीमची से उकता गई और मदान्ध हो दुर्बुद्धि की चेरी बन उसीके एक गुमाश्ते को अपना सतीत्व भेंट कर बैठी। उभय पक्षमें आयुकी समानताकी शक्तिने ऐसा कौशल दिखाया कि, उसीके उद्वेगमें आ, मैं गुमाश्तेके सरस और छली वचनोंके जालमें मछलीकी तरह कूद पड़ी। धीरे-धीरे वह मुझे पतिगृहसे भाग चलनेके लिये उभाड़ने लगा। मैंने भी मनमें स्वतन्त्र हो, उस छलियाके साथ विहार कर, शेष जीवन उसीको अर्पण करनेकी ठान ली। जिसका मुख्य कारण उसकी झूठी शपथ, आजन्म सेवक-समान शुश्रूषा करनेका प्रण, विनय, आतुरता, नम्रता और किलकिञ्चित विलाप ही था। इन्हीं बातोंने मुझे अन्धा बना डाला और मैं उस कपटीकी कपटपूर्ण बातोंमें आ, निज सम्मति प्रदान कर, कल रात्रिको अपने पिण्डरोगी पतिसे विलग होने और उस धूर्तके साथ भाग आनेको उद्यत होगई।

दुर्भाग्यवश मेरा पति भी घरमें नहीं था। उस समय वह किसी निकटवर्त्ती ग्राम को अपनी एक दूकानका निरीक्षण करने गया था। इस प्रकार मैं आज आपके सामने उपस्थित हूँ।

"रात्रि को जब मैं अपने दुष्ट कर्म पर पछतावा करती हुई निद्रा-देवीकी गोदमें पड़ी हुई गोते खारही थी, उसी समय वह दुष्ट मेरे बहुमूल्य आभूषणों तथा मणि-माणिक आदि पर हाथ फेर, मुझ अभागिनी को अकेली छोड़, न जाने कहाँ चल दिया! अब ऐसी दीन-हीन निर्जन दशामें मुझे सिवा मेरे पितृगृहके और किसीका सहारा नहीं दिखता। वहाँ पहुँच, पिताके समक्ष सारे पुण्य-पाप स्पष्ट-स्पष्ट कह, उनसे क्षमा मागूँगी। आशा भी है कि, वे भूतपूर्व असीम वात्सल्यके कारण मुझे इस समयभी तिरष्कृत न कर सहानुभूति दर्शानेसे पीछे न हटेंगे।"

राजकुमार—यदि पिता आपको स्वीकृत करनेसे हिचकिचाये तो?

गुलाब—फिर मैं......ऐं ऐं......

गुलाबको इस घबराई हुई दशामें देख राजकुमार बोला,—"श्रीमती! मेरे पिता एक धनाढ्य ज़मींदार हैं। उन्होंने मुझे शिक्षार्थ आगरेमें रख दिया है। किसी विशेष कार्य के लिये ही मैं उनके पास जारहा हूँ। वे मुझे मेरी इस विद्यार्थीदशामें भी यथेष्ट द्रव्य उदारता-पूर्व्वक देते हैं। उससे मेरा और आपका, दोनोंका, गुज़ारा बखूबी हो सकता है। इसलिये यदि

आप अपने पिताकी क्रोधाग्निसे बचना चाहें, उनके कोपानलमें भस्म न होना चाहें, तो आप मुझे अपना साथी बनावें। यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करेंगी, तो आपकी बड़ी दया होगी। शिक्षाप्राप्तिके बाद मैं स्वयं अपना कारोबार देखने लगूँगा। उस समय मैं सारे संसारके सामने आपको अपनी चिरसंगिनी स्वीकार करनेमें ज़रा भी न हिचकूँगा। मुझे उम्मीद है कि, आप एक ऐसे व्यक्ति को, जो अपने अन्तर्हृदय से आपको अपनी हृदयेश्वरी समझकर विनीत भावसे आपका सेवक बनने की प्रार्थना कर रहा है, अपना सेवक बनाने और उसकी सेवा स्वीकार करनेमें ज़रा भी आनाकानी करना उचित नहीं समझेंगी। आपही विचार देखें, कि ऐसा करना कहाँ तक न्यायसङ्गत होगा? मैं आपकी लावण्यरूपी वेदी पर बलि होनेके लिये स्वयं प्रस्तुत और उद्यत हूँ। आपका एक भावपूर्ण दया-कटाक्ष एवं प्रेमपूर्ण एक मधुर शब्द ही मुझे संसार में जीवित रखनेके लिये काफी है। यदि आप मेरी इस समयकी उद्दण्डता और धृष्टताको क्षमा करें, तो मैं निर्लज्ज होकर साफ-साफ कहनेको तैयार हूँ कि, मै आप पर पूर्णतया मुग्ध हो चुका हूँ। आपकी सुवासित मनोहर काली-काली ज़ुलफोंने मुझे अपने जालमें फँसा कर पागल बना दिया है। यद्यपि आपके नेत्रोंके कुटिल बाणोंने मेरे शरीर को विषम आघात पहुँचा छिन्न-भिन्न कर डाला है; तथापि अब भी उक्त वज्राघात आपके एक दयापूर्ण कटाक्ष

एवं मधुर सम्भाषण रूपी अमृतसे आरोग्य लाभ कर सकता है।"

उपरोक्त बात राजकुमारने बड़े ही नम्र और विनीतभावसे कहकर युवतीके हाथ को अपने हाथ में लेना चाहा,—परन्तु रमणी इस बात पर राज़ी न होकर ज़रा पीछे हट गई और बोली—"मैं इस स्वतन्त्रता—आज़ादी—के प्रदान करने योग्य नहीं। मैंने अपनी आतुरता के उद्वेगमें ही आपसे सब कुछ साफ़-साफ़ कह दिया। किन्तु इससे आपको किसी प्रकार भी उत्तेजित हो सीमा-रहित कार्य्य न करना चाहिये। अब तक जो मेरे और आपके दर्म्यान होचुका है, उसे क़तई भूल जाइये और अपने स्टेशन पर उतर कर अपने घर का रास्ता लीजिए एवं अपने ही घर का सुखानुभव करके सन्तुष्ट हूजिए।"

राजकुमार युवतीके उपरोक्त उत्तरसे निराश न हुआ। वह उसकी ओर बढ़कर नम्र भाव से बोला—"भला, यह कैसे हो सकता है? आप जैसी सौन्दर्य्यपूर्ण देवीको कौन भूल सकता है? असम्भव है! असम्भव है!! मुझसे यह हरगिज़ नहीं हो सकता। यदि इन्द्र इन्द्रपुरीको भूल सकता है, तो मैं भी आपको भूल सकूँगा। हे प्राणेश्वरी! हे हृदयेश्वरी! हे मेरी सर्व्वस्व! मुझे अब आप उस स्वर्गीय आनन्दसे, जिसकी कुछ आभा मुझमें व्याप्त होचुकी है, निर्दयता-पूर्व्वक विलग न कीजिये। मुझपर कृपा कीजिए और अपने कमलमुखसे मुझे अपने योग्य प्रेमपात्र होनेकी

स्वीकृति दीजिए। आपकी इस कृपासे मेरे आनन्दकी सीमा न रहेगी। मैं अपने तईं पूर्ण भाग्यवान समझूँगा। देवि! अधिक कहने से कोई लाभ नहीं। मैं हर तरह से आपकी प्रेमपाशमें आबद्ध होगया है। मुझे जो कहना था, सो कह चुका। अब जो इच्छा हो सो कीजिए।"

उपरोक्त बात कहते-कहते ही राजकुमार इतना मदान्ध हो गया कि, उसने हया-शर्म और लज्जाको तिलाञ्जलि देकर युवतीका हाथ अपने हाथमें लेलिया और उसपर एक चुम्बन-रूपी मुहर लगादी।

राजकुमारका यह बर्ताव देखकर युवती को ज़रा भी क्रोध न आया, बल्कि वह प्रेममें शराबोर होकर टकटकी बाँधे हुए राजकुमारकी ओर देखती रही। इसके बाद वह किसी आन्तरिक प्रेरणा से खिन्न होकर अचानक अपने स्थानसे उठ बैठी। युवक भी अपनी जगहसे उठ बैठा। इसके बाद उसने फिर युवती के कोमल करको अपने हाथमें ले लिया और कहने लगा—"प्रिये! सच तो कहो, मैं आपके मौनव्रत से क्या धारणा कर सकता हूँ?"

प्रत्युत्तरमें गुलाबने अपनी मनोमुग्धकर सुरीली बोलीमें कहा—"महाशय! क्या कहूँ? अब अधिक कुछ न पूछिये। सच तो यह है कि, अब मेरा मन मेरे हाथमें ही नहीं रहा। मेरा चञ्चल मन मेरा न रहकर आपके प्रेमपाशमें जकड़ गया—आपके ऊपर न्योछावर होगया!"

पाठक ! युवती के उपरोक्त शब्दोंने राजकुमारके चित्त पर क्या काम किया होगा, उसे आप लोग स्वयं ही समझ सकते हैं। उस समय उसका वही हाल हुआ, जैसा कि एक प्यासे को पानी के बजाय अमृत मिलजाने से होता है। उसने शीघ्र ही रमणी को अपनी छाती से लगा लिया। कुछ देर तक उस अपूर्व्व आनन्दका अनुभव करके वह सुकुमारी भी चुपचापसे अपने प्रणयीकी गोदसे अलग होकर प्रसन्नचित्तसे अपने स्थान पर जा बैठी। उन दोनों प्रेमियोंमें फिर बातचीत आरम्भ हुई:—

राजकुमार—आपका शुभ नाम ?

युवती—मुझे गुलाब कहते हैं।

राजकुमार—वाह! बहुत ही उपयुक्त नाम रक्खा है। आपका जैसा रूप है वैसा ही नाम भी है। अहा! मैं बड़ा भाग्यवान हूँ, जो सारे भारतीय उद्यानका सर्व्वोत्तम पुष्प मेरे हाथ लगा!

युवती—प्राणेश! लोग आपको किस नामसे.........?

राजकुमार—प्रिये! राजकुमार आपके सामने मौजूद है।

युवती—धन्य है आपके माता-पिताको, जिन्होंने आपका ऐसा उपयुक्त नामकरण किया! आप सचमुच राजकुमारोंके ही समान हैं। राजकुमार आपसे अधिक सुन्दर नहीं हो सकते।

आत्मप्रशंसा पर मुग्ध होकर राजकुमारने फिर अपनी प्रेयसीका आलिङ्गन और चुम्बन किया। ये लोग तो इसतरह आनन्दमें मस्त थे ही कि, गाड़ी इनलोगों के उतरनेके स्टेशन पर पहुँच गई।
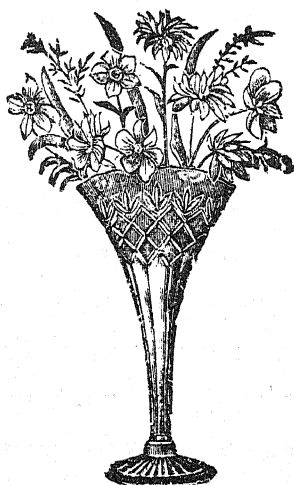
दूसरा परिच्छेद ।

विवाहोत्सव ।

युगल जोड़ी दोपहरके कुछ बाद हाथरस पहुँच गई । राजकुमारने युवती के रहनेके लिए एक सुन्दर सुसज्जित कमरा नगरकी भीड़-भाड़से अलग ले लिया । उसमें सब तरहके ज़रूरी-ज़रूरी सामान जुटा दिये । सब तरहके आराम का बन्दोबस्त करके राजकुमार अपने घरकी ओर चल दिया । जानेके पहले उसने युवती की सेवा-टहलके लिये एक दासी भी नियत करदी ।

राजकुमारके घर पर पहुँचते ही सारा घर आनन्दकी लहरोंसे उमड़ आया । उस समयके आनन्दके अपूर्व दृश्यको लिखकर दर्शानेमें काठकी लेखनी कहाँ तक समर्थ हो सकती है ? जब कि प्रेममूर्त्ति माता का लाड़ला और आज्ञाकारी मातृभक्ति पुत्र परदेश से लौटकर घर आता है, उस समयके वात्सल्य रूपी हर्ष का क्याही अपूर्व्व मनोरम भाव होता है !

राजकुमारने दौड़कर माँ को प्रणाम किया । माँ ने

गद्‌गद्‌ होकर पुत्र का चुम्बन कर आशीर्व्वाद दिया। इसके बाद राजकुमार पिताकी ओर बढ़ा। वृद्ध पिता राजकुमारको अपने चरणोंमें पड़े हुए देख ऐसे आनन्दमग्न होगये कि, आशीर्व्वाद देना तक भूल गये। उनके नेत्र प्रेमाश्रुओंसे डबडबा आये। नेत्रोंसे आँसुओं के टपक पड़नेकी सम्भावना सी प्रतीत होने लगी।

यथोचित आगत-स्वागत के बाद राजकुमारके भोजनकी बारी आई। अब क्या कहना था? उसके छोटे भाई उसकी थाली के इर्दगिर्द जमा होगये। इसीसे राजकुमारके प्रेममय स्वभाव का थोड़ा-बहुत परिचय मिल सकता है। अस्तु।

राजकुमार सब भाइयोंसे बड़ा था। वह अपने छोटे भाइयोंको बहुत ही प्यार करता था। वह इतना नम्र और विनयी था कि, जनता केवल सम्पर्क मात्रही से उस पर दयाभाव रखने लगी थी। हाथरस भरमें सभी उसे प्यार करते थे, सभी उसे चाहते थे। सभी उसके मित्र थे। नगरमें कोई भी उसका शत्रु नहीं था।

सन्ध्या होते ही राजकुमार अपने नवीन प्रणय-मन्दिर की ओर चल दिया। वहाँ उसे हार्दिक स्वागत मिला। राजकुमार उत्साहित कर बोला—"प्रिये! मुझे विश्वास है कि आप अपने तईं इन गत २४ घण्टोंमें इस स्थितिमें देखकर किसी प्रकार भी दुःखित न समझोगी।"

प्रत्युत्तरमें युवतीने निःसङ्कोच होकर कहा—"दुःखी कैसे समझ सकती हूँ, जब कि मैं आपकी शरणमें आगई हूँ ?"

युवतीके उक्त वाक्यने राजकुमारके चित्तपर एक विचित्र ही भाव अङ्कित कर दिया। वह बोला—"प्रिये! आपकी प्रेम-पीयूष धारा के सिञ्चनसे मैं अपने तईं धन्य समझता हूँ! अपने आनन्द को किस तरह प्रकाशित करूँ, यह समझ के परे है। मैं अष्ट पहर चौंसठ घड़ी यही इच्छा किया करता हूँ कि, मैं सदाही आपकी सेवामें लगा रहूँ।"

रातके साढ़े दश बजे तक दोनोंमें प्रेमालाप होता रहा। इसके बाद राजकुमार अपने घरको लौट गया। घर पहुँच कर वह निद्रादेवीकी गोदमें आराम से सो गया।

दूसरे दिन प्रातः समय भगवान-भास्कर यमुना मैयाकी गोदमें उदय न होकर हमारी कथाके आधारार्थ शोभायमान भूमिके एक मनोरम दृश्य पर उदय होते हुए दिख रहे हैं। उनकी पूर्व-वर्णित कान्ति और आजकी कान्तिमें एक भारी अन्तर दिखाई देरहा है। ज़रा विचार कर देखनेसे स्पष्ट हो जाता है कि, आजकी कान्ति चिन्तायुक्त है। आस-पासके घिरे हुए बादलोंकी घटाने भी प्राकृतिक सौन्दर्य्यको मलिन कर दिया है।

राजकुमार जिस कामके लिये घर आया है, वह अत्यन्त आवश्यक है। उसकी छोटी बहिन का विवाह शीघ्रही होने वाला है। बरातकी अगवानीके लिये बड़ी धूमधामसे तैया-

रियाँ होरही हैं। घरसे कुछ ही दूर पर एक सुन्दर शोभायमान मण्डप रचा गया है। उसमें प्रवेश करनेके लिये धनुषाकृत्ति के चार द्वार चार दिशाओंमें निर्म्माण किये गये हैं। मण्डपके खम्भों तथा द्वारों पर रङ्गबिरंगी काग़ज़ोंकी कारीगरी इस निपुणता और चतुराई से की गई है कि, देखनेवालेका मन मोह लेती है। यही दशा मण्डपकी भीतरी चाँदनी की भी है। उसमें नाना प्रकारके काग़ज़ोंके रङ्गबिरंगे फूल इस खूबीसे लगाये गये हैं कि, उनको देखनेसे असल फूलोंका धोखा होता है। हाँडियों और झाड़-फानूसों की क़तारें दूर तक चली गई हैं। सामयिक शोभा सम्पादनार्थ मण्डपकी काग़ज़ी दीवारें बड़ी चतुराई से बनाई गई हैं। उनके बीचमें यथोचित अन्तर पर खिड़कियों का प्रबन्ध भी बड़ी उत्तमतासे किया गया है, जिनसे कि भीतर बैठने वालोंको स्वच्छ वायु के मिलनेमें रुकावट न हो। फर्श पर क़ीमती रङ्गीन दरियाँ क़ालीन और ग़लीचे बिछाये गये हैं। चारों ओर के चार कद्दे-आदम आइनोंने मण्डपकी शोभा को औरभी मनोरम कर दिया है।

उक्त प्रबन्ध बारात आनेके पाँच दिन पहले ही से बड़ी खूबी के साथ हो चुका था।

राजकुमार उन पाँचों दिनोंमें बिला नागा अपनी प्यारीसे मिलने जाता रहा। जब कभी मौक़ा मिलता, वह उसके मधुर वार्तालाप का रस पान करनेसे न चूकता था। इन्हीं

पाँच दिनोंमें प्रेमाग्नि ऐसी भड़की कि, उभयपक्ष एक दृढ़ प्रेमबन्धन में आबद्ध होगया।

पाठको! अब इनको प्रेमियों को यहीं छोड़कर बरात की ओर चलना उचित मालूम होता है। अस्तु।

रातके नौ बजे हैं। वृद्ध ज़मींदार महाशय नगरके अन्यान्य गण्यमान्य पुरुषोंको साथ ले बरात की अगवानीके लिये तैयार खड़े हैं। दूल्हे समेत बरातने नगर-प्रवेश किया। बरातके घोड़ों की हिनहिनाहट, गाड़ी और बग्गियों की घर-घर ध्वनि, गहने और ज़ेवरों की झङ्कार, मित्रोंके आनन्दपूर्ण आलाप-संलाप, बालकोंकी मनोरम क्रीड़ाओं एवं बाजोंके मनोहर रव से ऐसा मालूम होता था, मानो इन सबने मिलकर पूर्वोक्त प्राकृतिक उदासी और मलिनताको बिल्कुल ही उड़ा देनेका बीड़ा उठा लिया है। अँगरेज़ी बाजों की तुली हुई चढ़ाव-उतारकी ध्वनिने बेचारे उल्लूओं तक की ख़बर ले डाली। बरातकी चकाचौंध लगानेवाली रोशनी ने उन बेचारों को अन्धा बना दिया। वे घबरा उठे। इसके सिवा निशाकर भी अपने उज्ज्वल प्रकाश सहित बरातियों की अगवानी के लिये उपस्थित होगये थे। छोटे-छोटे तारोंके बीचमें उनका राजसी आसन ग्रहण करना आकाशरूपी विशाल धनुष में एक अपूर्व्व ही छटा दर्शाता थी, जिसके दर्शनमात्रसे बरातियों के ऊपर उनकी पूर्ण सहानुभूतिका परिचय मिलता था। बसन्तके शीतल मन्द समीरने इस दृश्यको और भी शोभामय

कर दिया था। इस समय महाआलसी मतिमन्द पुरुषमें भी फुरती और चुस्ती आ सकती थी। यहाँतक कि संसार-त्यागी वैरागी भी वैराग्यहीन होकर इस आमोद-प्रमोदमें सम्मिलित हो आनन्द लूटने का मोह न त्याग सकता था।

वीणा सितार तथा अन्यान्य बाजोंकी मधुर झङ्कार और वेश्याके हाव-भाव-पूर्ण गानेपर बराती लोग ऐसे लट्टू होगये थे कि, वे अन्यान्य मनोरञ्जक खेल-तमाशोंको छोड़कर उसी स्थानपर आजुटे और एक मुँहसे वाह वाह करने लगे। उस समय ऐसा मालूम होता था, मानो ईश्वरने इन्द्रपुरीके एक आदर्श रूपको संसारी जीवोंके मनोरञ्जनके लिए इस भूतलपर भेज देनेकी कृपा की है। वेश्याकी मुख-कान्ति स्वर्गीय अप्सराके सदृश प्रतीत होती थी। उसकी रूपलावण्य-पूर्ण गौर मूर्तिपर पीतपटके नाना प्रकारके रेशमी गुच्छोंकी सजावटने उसकी सुन्दरताको दुबाला कर दिया था। सभीकी नज़र उसी मोहिनी पर थी। वह भी सब लोगोंके लक्ष्य बन जानेके लिए, सभीको अपने जालमें फँसानेके लिए—अहङ्कारसे अपने कामको बड़ी चतुराई और सफाईसे सम्पादन करती हुई मन ही मन प्रफुल्लित हो रही थी। वरकी उम्र कोई २२ सालकी होगी। वह एक विशाल सजे हुए घोड़े पर सवार था। घोड़ेपर ज़रदोज़ीके कामकी रेशमी झूल पड़ी हुई थी और तरह-तरहके सोने चाँदीके गहने भी उसे पहना दिये गये थे। वरका क़द ऊँचा था। उसके उच

समयके हावभावको देखकर देखनेवाला एकदम कह सकता था कि, वह अपनी उस स्थितिकी ज़िम्मेदारीसे भली भाँति परिचित है। बरात नगरमें होती हुई ज़मींदार महाशयके मकान तक बड़े आरामसे पहुँची। बरात के दरवाज़े पर पहुँचते ही वर घोड़े से उतार लिया गया और उसका मण्डपमें प्रवेश कराया गया। वहाँ पहुँचते ही बरातियोंने अपने मनोरञ्जनार्थ नाच वगैरः का सारा इन्तज़ाम दुरुस्त पाया। नाचनेवाली तवायफ का नाम नूरजहाँ था।

कुछ समयके पश्चात विवाह-संस्कार प्रारम्भ हुआ। जिस समय वर अपने विवाहके बहुतसे संस्कारोंके संकटसे पार होनेमें मग्न था, उस समय उसके बन्धु-बान्धव और मित्र नूरजहाँके मधुर गान और सुरीली तान पर मस्त होकर आनन्दकी उपलब्धि कर रहे थे।

मण्डपके भीतर एकत्रित समाजमें एक सुन्दर क़ालीनपर पाँच पुरुष बड़ी सजधजसे बैठे हुए हैं। उनमें जो सबसे सुन्दर हैं, वह अपने तईं नवाबी खा़न्दानमें पैदा हुआ समझ कर फूले नहीं समाते। आपका नाम नव्वाब बहादुर निज़ामुद्दौला है, इसीसे उन्हें भविष्य में आदर-सूचक शब्दोंहीमें अङ्कित करनेमें भलाई है। यद्यपि आपकी आर्थिक दशा बहुत अच्छी नहीं है, तथापि आपके पूर्वजोंका मुग़ल-वंशज होना तो निश्चय ही है। उनका इस विवाहमें सम्मिलित होनेका कारण विशेषकर राज-

कुमारका सहपाठी होनाही कहा जा सकता है। राजकुमारने उन्हें आमंत्रित किया है। इसीसे हमारे पाठक नव्वाब साहिबको अपने चार लँगोटिया यारोंके साथ इस मण्डपमें उपस्थित पाते हैं।

गानेकी तान मण्डपमें गूँज रही है। नवाब साहब भी लट्टू हो रहे हैं। कभी-कभी आप वेश्याकी ओर तिरछी चितवनसे देख "शाबास! वाह वाह!! बहुत अच्छा! वाह वो वाह! वल्लाह कैसी सुरीली आवाज़ है! एक्सिलेण्ट! (सर्वोत्तम) नायाब!" इत्यादि शब्दोंसे उसका उत्साह बढ़ानेमें भी कमी नहीं करते।

इस समय रात्रि विशेष रूपसे ढल चुकी है। गाना भी खूब जमा है। नूरजहाँ की प्रत्येक कार्यवाही दिव्य और अद्वितीय प्रतीत होती है। उसके स्वरमें भी एक अपूर्व ही माधुरी व्यापने लगी है। मजाल क्या कि वह ज़रा भी ताल स्वरसे बाहर होकर गाती हो। अब क्या था, आई नवाब साहबकी बर्बादी। लगे रुपया फूँकने। थोड़ी ही देरमें वे आपेसे बाहर होगये और शीघ्रही अपने सारे द्रव्यको निकृष्ट विषय-वासनाके उपहारमें उस धूर्त्ता, चञ्चल की थैलीमें झोंक चुके। इतनेमें भी हमारे नवाब साहब कब शान्त होनेवाले थे? बेचारी सुनहली क़ीमती अँगूठियाँ घड़ियाँ इत्यादि भी उसी गुरुत्व-केन्द्रकी ओर आकर्षित होने लगीं। इसी आमोद-प्रमोदमें जबकि गाना खूब जम रहा था और हमारे नवाब साहब

अपना माल-असबाब उस मोहिनीको अर्पण कर उसके प्रेम-कटाक्षोंसे घायल हो मरणासन्न हो रहे थे, और जबकि एकत्रित जनता उनकी इस मूर्खतापर हँस रही थी ; ठीक ऐसे ही समयमें न जाने किस प्रकार मण्डपकी छतमें अचानक ही तीक्ष्ण और भयङ्कर ज्वाला प्रज्वलित हो उठी। एकत्रित जनतामें बड़ी खलबली मच गई। सब लोग द्वारोंकी ओर झपटे। इस गड़बड़ीमें किसीको भी अपनी छुटाई-बड़ाईका ध्यान न रहा। एक दूसरेको धक्का दे वहांसे निकलने को दौड़े। जिससे जैसे बना, वैसे ही उसने अपनी भरसक कोशिश की। कई तो 'जिसकी लाठी उसकी भैंस'वाली लोकोक्तिको भी चरितार्थ करनेसे न सकुचे। जहाँ देखो वहाँ ही भागो दौड़ोके शब्द सुनाई देते थे। कई गिरते, कई पड़ते, कई लाँघते, कई कूदते, झपटते-दौड़ते दिखाई देते थे। दुपट्टे टोपी और पगड़ियोंकी दुर्गति तो हमारे पाठक स्वयं सोच सकते हैं। लोगोंकी इस घबराहटके बीच ऊपरके झाँड़ी फानूस भी फूट गये। उनसे फूटकर गिरे हुए काँचके टुकड़ोंने भी एकत्रित जनताके साथ,जो तित्तर-बित्तर हो भागनेमें दत्तचित्त थी, बड़ीही निर्दयताका सलूक किया। किसीके सिर, तो किसीके नाक, और किसीके गाल तथा ओठोंहीसे रुधिर-प्रवाह जारी था। सारङ्गी तबला तो पददलित होकर चकनाचूर होगये। कौन क्या कहकर चिल्लाता है, इस बात का कुछ अनुमान भी नहीं किया जा सकता था।

किसी तरह ले देकर हमारे नवाब साहब अपनी जानको सुरक्षित ले जलते हुए मण्डपसे बाहर आगये, पर उनकी दूसरी 'जान' नूरजहाँ बेचारी का तो कुछ पता ही नहीं कि क्या हुई। उसका इस गड़बड़ीसे सुरक्षित रहना तो कौन कहे, थोड़ा बहुत शारीरिक दण्ड भोगकर निकल आना भी एक कठिन व्यापार था। हमारे नवाब साहबको यह बात भली तरह विदित होगई, और उन्होंने अपने चार मित्रों से उसे वहाँसे सुरक्षित निकालनेका बड़ा आग्रह किया। इसमें उनके साथियोंको सफलता भी हुई। वहाँसे निकाली जानेपर नूरजहाँ मूर्च्छित होगई। नव्वाबने उसे उसी दशा में एक गाड़ीमें डलवाकर अपने डेरेका रास्ता लिया।
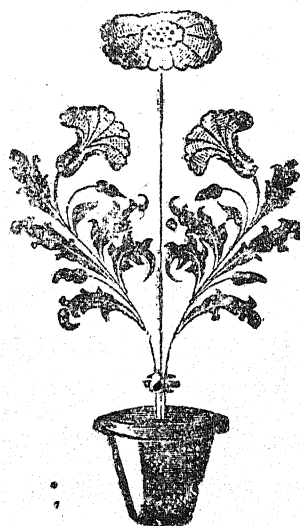
तीसरा परिच्छेद ।

मिलन ।

जब नूरजहाँ होशमें आई तो क्या देखती है कि, वह अपने बाँयें हाथपर सिरको टेके एक मख़मली गद्दे पर आराम कर रही है; और पास ही नवाब साहब भी उसकी उस स्थिति पर चिन्ता करते हुए बैठे हैं। नवाब पर नज़र पड़ते ही वह मुस्करा उठी, और लज्जितसी हो नीचेको देखने लगी। जिस कमरेमें नूरजहाँ पड़ी थी, वह नवाब साहबके महलका एक हिस्सा था। उसकी सजावट भी बढ़ी-चढ़ी हुई थी। खिड़कियोंके ऊपरके परदे बेलबूटेदार रेशमी कपड़े के थे। कमरेमें चारों ओरसे सुगन्धित वायु आ आकर मनको आनन्दित कर रही थी। खिड़कीके पासही बिजलीका पङ्खा अपना राग अलाप रहा था। हाँडी और नाना प्रकारके लेम्पोंके काँचके लटकन प्रकाशसे कई प्रकारके रङ्ग-बिरङ्गे रङ्गोंमें परिवर्तित हो, कमरेकी शोभाको

और भी बढ़ा रहे थे। वहीं एक चमकीली टेबिलके ऊपर एक कोनेमें ग्रामोफोन और हारमोनियम बाजे भी रक्खे थे। जो टेबिल बीचमें रक्खी थी, उसके आस-पास मखमली गद्दे दार कई अच्छी कुर्सियाँ भी रक्खी थीं। टेबिलके बीचमें कई प्रकारके गुलदस्ते और शर्बतकी बोतलें रक्खी हुई थीं। दीवारोंकी ओर गौरसे देखनेसे बिजलीकी घन्टियाँ भी दिखाई दे रही थीं, जिनका सम्बन्ध महलके प्रत्येक भाग से था। अस्तु। पाठकोंसे मेरा निवेदन है कि, आप लोग फिरसे मेरे रागमें मस्त होनेकी तैयारी करलें।

नूरजहाँ कुछ समयके पश्चात् फिरसे मूर्च्छावस्थामें आगई और कुछ देरके बाद पुनः सचेत होगई। आँख खोलते ही उसे बिजलीकी घण्टियोंकी तीक्ष्ण आवाज़ने चकरा दिया। पर पासही नवाब साहब के प्रेम-कटाक्षका अनुभव कर वह होशमें आ फिरसे लज्जित हो गई। दूसरी बार नूरजहाँ जिस तरह मूर्च्छावस्थामें आई, उसका जानना भी आवश्यक है।

पहले होश में आने पर उसने नवाबसे पूछा:—"मैं इस हालतमें कबसे हूँ? मैं यहाँ किस तरह पहुँची— और कहाँ हूँ?"

नवाब—आप मुझ ख़ाकसारकेही ग़रीबख़ानेकी पाक कर रही हैं।

नूरजहाँ—क्या वक्त होगा?

नवाब—अभी रातके अढ़ाई बजे हैं।

नूरजहाँको यह सब बात-चीत स्वप्नवत प्रतीत होती थी। एकान्त स्थान तथा नवाब साहब के सभ्य बर्तावने उसके चित्तके संशयको नाश कर दिया। उसे शीघ्र ही मण्डपकी आग तथा उसके कारण मनुष्योंका घबराकर इधर-उधर भागना इत्यादि स्मरण हो आया और वह एक बार फिर काँप उठी। उसे काँपते हुए देख नवाब साहबने उसे धीरेसे सोफे परसे उठा बिठाल दिया और कानमें मधुर स्वरसे कहा,—"अब आप ज़रा भी न घबराइये; आप हर तरहसे आराममें हैं।" इन शब्दोंकी झङ्कार कानमें पड़ने और सचेत होकर बैठनेके कारण उसने अपनी सुध-बुध सम्हाल ली और वहाँसे उठकर एक दूसरे सोफे पर जा बैठी, जो नवाब साहब के बाज़ूमें पड़ा था। यह देख नवाब साहब बोले,—"वल्लाह! मुझे आज ये देख अज़हद खुशी है, कि आप जैसे खूबसूरत फूलको मेरा झोंपड़ा आराम पहुँचानेमें कारगर हुआ।"

प्रत्युत्तरमें नूरजहाँने तिरछी नज़रसे नवाबकी तरफ देखकर कहा—"मेरी जान बच गई, इसका शुक्रिया मैं आपको किस तरह अदा करूँ, समझमें नहीं आता? मुझे वह खतरनाक नज़ारा, जिससे न जाने मैंने किसतरह छुटकारा पाया, अब भी दीवाना बना रहा है। मैं इस बातका दम भरती हूँ कि, मेरी जानका बचना सिर्फ आपकी रहमदिली का बायस है; वरना न जाने लौंडी का जिस्म कब का खाक का ढेर हो

गया होता। मैं इस बातको दावेसे कह सकती हूँ कि, मैं आपके इस अहसानको अपने किसी भी भारीसे भारी एवज़से पूरा नहीं कर सकती।" नवाबने उत्तर दिया,—"आपके ऊपर नज़र पड़ते ही मुझे मुहब्बतके काँटोंने डस लिया था। इसी वजह से आपको जान बचाकर मैंने अपने अन्दरूनी हुक्मको माननेके अलावा और कुछ नहीं किया, इसीलिये आपके शुक्रगुज़ार होने की ज़रूरत नहीं है। आपकी चमकीली आँखें और चेहरेकी खूबसूरतीने मेरे दिलको लुभा लिया है। खुदान ख्वास्ता अगर आप जल ही मरतीं, तो आप सच ही समझिये कि, आप की मुहब्बतका भूखा मेरा यह दिल भी उसी खतरनाक ढेर में शामिल हुए बिना न मानता। जब इस ज़िन्दगीकी खुशी ही यहाँसे कूच कर जाती, तब मेरा यह जिस्म किसके सहारे रहता? इन्हीं सब बातोंसे आप ग़ौर फरमा सकती हैं कि, मुझे आपके इन लम्बे-चौड़े शुक्रानोंके सुनने का हक़ नहीं।" यह कहकर नवाब कुछ लज्जित से होगये और तिरछी चितवन से फिर नूरजहाँ की ओर देखने लगे। नवाब की उक्त चितवनमें एक निराली ही छटा प्रतीत हो रही थी, जिसका आशय यह था कि हमारे नवाब साहबकी प्रेम-ज्वाला पूर्णतया प्रज्वलित हो चुकी थी, उसे शान्त करने के लिए वे अपनी प्यारीका हृदयालिङ्गन करने के लिये उतावले हो रहे थे।

नूरजहाँके अपूर्व सौन्दर्य एवं मतवाली आँखोंने नवाबके चित्तको लूट लिया था। वह नवाबके हाव-भाव देखकर ही ताड़ गई कि, थोड़ी ही देरमें नवाब उसे हृदयालिङ्गन करनेसे न चूकेगा। अतएव वह अचानक बोल उठी—"मुझे जोर की प्यास मालूम होती है, मिहरबानी करके एक प्याला पानी अता फरमाइये ; गला सूख रहा है।" नवाब साहब फौरन उठ बैठे और अपनी प्यारीके लिये शर्बत लानेको टेबिलके पास गये। लौटती बार न जाने किस तरह उनका पैर बिजली के तारोंसे टकरा गया। टक्करके कारण विद्युत-सञ्चारकी टिपरी निकल गई ; जिस से विद्युत-प्रवाह वेग से प्रवाहित होने लगा। उस से नवाब को ऐसा तेज़ धक्का लगा कि, वह शीघ्रही शर्बत के भरे हुए गिलास समेत भड़ से ज़मीन पर गिर पड़े। गिरते ही उनका बायाँ हाथ अचानक बिजली की घण्टियोंकी मूँठ पर जा पड़ा। अब क्या था ? लगी टनाटन टनाटन होने। नवाब साहब की माँ के कमरेमें भी इस टनाटन ने धूम मचा दी। बेचारी को चैन न लेने दिया। आख़िर, लाचार होकर उठी और अपने कमरेके दरवाज़े खोल, दासी को साथ ले, बेटे के कमरे की ओर चल दी। जल्दी में नवाब की माँ और दासी में मुठभेड़ भी हो गई। ख़ैर, किसी तरह सम्हल-सम्हलाकर वे दोनों नवाबके कमरेमें पहुँच गईं। इनके पहुँचनेके पहले ही नूरजहाँ नवाब को गिरते देखकर, उनकी मदद के
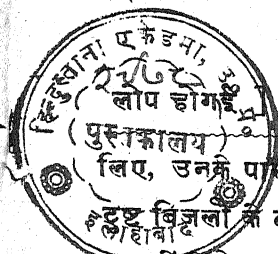
लिए, उनके पास पहुँच गई थी ; पर उस बेचारी पर भी उन दुष्ट बिजली के तारोंने तर्स न खाया ; उसे भी नवाब की बगलमें बेहोश डाल अपनी दुष्टता का परिचय दिया। इसी कारण नवाब की माँ ने वहाँ पर नवाब को एक सुन्दरी युवती के साथ फर्शपर मूर्च्छित पड़ा पाया। वह बेचारी दासियोंकी सहायतासे उन दोनोंकी बेहोशी दूर करने में लग गई।

नूरजहाँको साफ हवा पहुँचाने के लिए दासीने जल्दी में उसके शरीरकी कुर्ती फाड़ डाली।

कुरती के फटते ही उसका सारा शरीर आरसीके समान साफ दीखने लगा। उसकी छाती के बीचों-बीच एक हलके नीले रङ्गके लहसनका चिह्न था। उस चिह्नपर नज़र पड़ते ही दासीने एक ज़ोरकी चीख़ मारी। दासी की चीख़ सुनते ही नवाब की माँ ने उधर देखा। दैववशात् उसकी नज़र भी उसी चिह्न पर पड़ गई। कुछ देर तक नूरजहाँके चेहरे की ओर टकटकी बाँधकर देखने के पश्चात् नवाब की माँ उद्विग्न होकर चिल्ला उठी—"हैं! यह क्या!! मेरी बेटी!!!" बस यह कहती-कहती वह भी बेहोश होकर गिर पड़ी।"

चौथा परिच्छेद ।

लोप होगई ।

परिवर्त्तनशीलता प्रकृतिका सहज स्वभाव है । इस के नियम अटल-अचल और अद्वितीय हैं । इसकी शृङ्खलासे कोई भी अलग नहीं । जिस तरह घड़ीके डायलके काँटे अपनी स्थितिमें शनैः शनैः परिवर्त्तन भोगते जाते हैं; पृथिवीकी परिक्रमासे दिन, मध्याह्न और रात्रि होती है; वर्षा से ग्रीष्म, ग्रीष्म से शीत प्रभृति होते हैं ; उसी प्रकार भाग्यचक्रसे मनुष्य को सुखके बाद दुःख, दुःख के बाद सुख, धनाढ्यताके बाद निर्धनता, निर्धनताके बाद धनाढ्यता इत्यादि अनिवार्य्य रूप से होते हैं । नदियाँ सीधी समुद्रकी ओर जाती हैं; समुद्रका वही जल भाफके रूपमें परिणत होकर वायुमण्डलमें पहुँच मेघके रूप में बदल कर फिर नदियों में आ जाता है । इस जगत् की प्रत्येक वस्तु चलायमान है— इस संसारमें कुछ भी स्थिर नहीं । यह सारी परिवर्त्तनशीलता एक स्वभावसिद्ध कर्म है । यदि यह न होती, तो इस

संसारमें किसी भी वस्तुका विशेष रूप दृष्टिगोचर न होता। हमारे अस्तित्व, पोषण और ज्ञानकी सीमाएँ किसी एक नियम पर निर्भर है। इसलिए इसी नियमसे बाध्य होकर हमें भी विवश हो, पूर्ववर्णित तीन व्यक्तियोंको कुछ समय के लिए उनको उसी कुदशामें छोड़, अपने पाठकों को अपनी इच्छाके विरुद्ध फिर से उसी मण्डप की ओर ले जाना पड़ता हैं, जहाँसे नूरजहाँ दैवयोगसे बचा ली गई थी।

अग्निमय मण्डपकी प्रचण्ड ज्वाला ही जन-समुदायको आकर्षित करने के लिए बस थी। एकत्रित सभ्य आग लगते ही विवाह-मण्डप से निकलकर उस स्थानके पास आ गये, जो नाचके लिए निर्द्धारित किया गया था। अतएव दूल्हा और दुलहिनके सिवा उस विशाल मण्डपमें और कोई न रहा। पण्डितजी ज़ोर-ज़ोर से मन्त्रोच्चारण करके हवन करा ही रहे थे कि, इतने में वहाँ मुँहपर नक़ाब डाले चार नक़ाबपोश घुस-आये और बातकी बात में वे दुष्ट दुलहिन को लेकर नौ दो ग्यारह होगये। यह काम इस दक्षता और फुरतीसे किया गया कि, दूलह और जो लोग वहाँ उपस्थित थे उनसे कुछ भी करते-धरते न बन पड़ा। सब एक दूसरेका मुँह ताकने लगे। किसीको भी दुष्टोंको उनके दुष्ट कर्म से रोकनेका मौक़ा न मिला। सड़कपर एक मोटर गाड़ी खड़ी हुई भों-भों करके अपना पिशाची राग अलाप रही थी। वे दुष्ट नक़ाबपोश फौरन ही उस मोटरमें जा

चढ़े। उनके बैठते ही ड्राइवरने हैण्डिल घुमाया और गाड़ी बड़ी तेज़ीसे धकधक करती हुई रवाना होगई।

तमाम महलमें हलचल मच गई। सबके चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। घोड़े वगैर: वाहन बड़ी तत्परता से तय्यार किये जाने लगे। एक घोड़ेपर दूल्हा और दूसरेपर राजकुमार सवार होकर दोनों ही उस मोटर के पीछे दौड़े। उस समयके शोकजनक और कष्टप्रद दृश्यको लिखने की अपेक्षा उस का चित्त में अनुमान कर लेना ही अच्छा है। अस्तु।

बेचारे ज़मींदार महाशयके दुःखका पारावार न रहा। आँखों से आँसुओंकी धाराएँ बह निकलीं। अन्तःपुर-वासिनी स्त्रियोंके रोने-चीख़ने और विलपने को देखकर पत्थर का हिया भी फटा जाता था।

आग लगते ही मण्डपके सब लोग भाग गये थे, इसलिए विशेष क्षति न हुई थी। थोड़े बहुत जलने के निशानों के सिवा टूटे हुए काँचों से भी कुछ जख़्म लोगों के बदन पर हो गये थे।

मण्डप जलकर धीरे-धीरे ख़ाक होने लगा। हाँडी, झाड़ फ़ानूस और तस्वीर प्रभृति सजावटके सामान गिर-गिर कर चूर होने लगे। ठीक ऐसे ही समय उन दुष्टात्मा नक़ाबपोशोंने बेचारी दुलहिन पर आक्रमण किया।
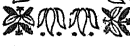
पाँचवाँ परिच्छेद।

संन्यासी।

मोटर गाड़ीको पकड़नेकी चेष्टामें विफल-मनोरथ और निराश होकर दोनों साले बहनोई अपने घर लौट आये। यह हाल देखकर वृद्ध ज़मींदारकी दुर्दशापर सभी को तर्स आता था। सभी अपनी-अपनी सहानुभूति दिखाते थे। पुलिस की जाँच-पड़ताल और तहक़ीक़ात से यह पता लगा कि, मण्डपमें आग लगनेके कुछ समय पहले ही से एक मोटरगाड़ी वहाँ आ डटी थी। इसके सिवा एक शख़्स सन्देह-युक्त दशामें वहाँ टहलता हुआ दिखाई पड़ा था। आग प्रायः फासफोरस और तेज़ाबके ज़रिये से लगाई गई थी। आग लगने के पीछे की गड़बड़ी में उन दुष्टोंको भागने का मौक़ा अच्छी तरह से मिल गया।

इस प्रकार की घटना का होना वरके लिए एक ज़बर्दस्त मान-हानि की बात थी, उसके हृदय में इस घटनासे बड़ी भारी

चोट लगी—एक काँटासा चुभ गया, जो प्रति क्षण उसके हृदय में भयङ्कर रूप से खटका करता था। उसने अपने बूढ़े श्वसुर के सामने प्रण किया कि, या तो मैं अपनी अर्द्धाङ्गिनी को खोज निकालूँगा या उसकी तलाश में अपने जीवन से ही हाथ धो बैठूँगा।

देखिये, ईश्वर की विचित्र लीला! कहाँ तो बेचारा शादी करके गृहस्थ-सुख भोगने की तय्यारी में था और कहाँ सब तरह से निराश और नाउम्मेद होकर अपने श्वसुर से उपरोक्त भयङ्कर प्रतिज्ञा करके अपने घरको लौट रहा है! उस लीलामय परमात्माके कार्य्य बड़े विलक्षण हैं! वरका स्वभाव अतीव नम्र और कोमल था, इसलिए उसके चित्त पर इस घटना से बड़ा भारी आघात पहुँचा। उसके सामने नैराश्य रूपी समुद्र उमड़ आया!

बरात शोकाकुल अवस्थामें लखनौ को लौट आयी। वर केवल एक सप्ताह तक अपने घर रहा। पीछे उसके हृदय में ग्लानि और चिन्ताका ऐसा प्रभाव पड़ा कि, उसे अपना घर भयानक जनशून्य स्थानसा प्रतीत होने लगा। एक दिन रातके समय, सबकी आँख बचाकर, गेरुवे वस्त्र पहनकर, साधु-वेषमें वह घर से निकल गया।

इस नवीन साधु के साथ-साथ विचरने के पहले हमारे पाठकोंको राजकुमार का थोड़ा बहुत समाचार जानना किसी

प्रकार अरुचिकर न होगा। इसवास्ते पहले वही सुनाते हैं। अस्तु।

राजकुमार के चित्त में भी भगिनी-विरह का भारी धक्का लगा है। वह हर समय चुप रहता है। आज-कल उसने प्रायः मौनव्रतसा धारण कर लिया है। जब देखो तब वह व्यग्र और उदास रहता है। हर समय उसे चिन्ता छाई रहती है। कभी-कभी तो उसके हाव-भाव पागलों के से मालूम होने लगते हैं। गुलाबका और उसका प्रेमबन्धन ढीला पड़ता जाता है। वह कुछ ही दिन अपने घर ठहरा। अब वह अपनी मनोरमा प्रेयसी गुलाबको लेकर आगरे लौट आया है।

सच है, जो प्रेम केवल विषय-वासनाके शान्त करने के लिए—अनेक प्रकारके हाव-भाव कटाक्ष और रूप एवं सौन्दर्य्यकी झलक पर उन्मत्त होकर किया जाता है, वह चिरकाल तक स्थायी नहीं रहता। सहृदय पाठको! ठीक यही हालत हमारे राजकुमारकी भी हुई।

उपरोक्त घटनाके कारण राजकुमार की भीतरी और वाहरी दोनों प्रकार की स्थितियों में भारी परिवर्त्तन होगया है। वह पहले जैसा हँसमुख और प्रेमी नहीं दिखता। अब वह औरही आदमी हो गया है। कभी-कभी तो उसे इस अनर्थका का कारण गुलाब ही मालूम होती है। द्वेष भाव

नित्यप्रति बढ़ता ही जाता है। अन्तमें परिणाम यह हुआ है, कि दोनों प्रेमियों को लाचार हो एक दूसरे से विदा माँगनी पड़ी है। अब इस विषयमें ज़ियादा न कहकर हम इतना ही कहना काफी समझते हैं कि, आज गुलाब राजकुमार से नाराज़ होकर, देहली का टिकट लेकर, देहली की ओर प्रस्थान करती है। ईश्वर मङ्गल करे!
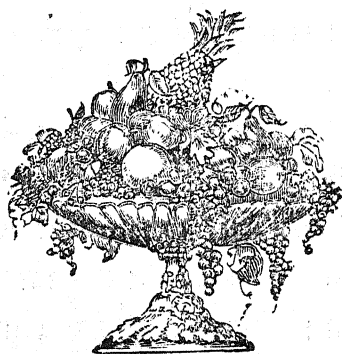
छठा परिच्छेद।

माता, पुत्र और पुत्री।

प्रिय पाठको! चलिये एक बार नवाब साहबके महलमें फिरसे चक्कर लगा आवें। देखें, वहाँ का क्या हाल है? पर वहाँ चलनेके पहले आपको यह अवश्य जान लेना उचित है कि, कि हमारे नवाब साहबने पूर्वोक्त घटना घटने के पहले नूरजहाँ को कभी न देखा था। वह बरातमें गायिका होकर आई थी। यदि दुर्भाग्यवश पूर्वोक्त घटना न घटती, तो नूरजहाँ निश्चय ही बरातके साथ लखनो को लौट जाती। वह असलमें लखनो ही में रहती थी। बस यही कारण था कि, नवाब साहबने उसे पहले कभी न देखा था।

नूरजहाँ षोडशी सुन्दरी है। उसके रूपलावण्य का क्या कहना? उसके मुखका सौन्दर्य्य नवविकसित कमल की लालिमा को भी लजाने वाला है। उसकी बड़ी-बड़ी सुन्दर सुडौल आँखें मृग के नेत्रोंको भी नीचा दिखानेवाली हैं।

उसके प्रत्येक अङ्ग-प्रत्यङ्गमें एक अलौकिक शोभा है। उसके अधर, उसकी नासिका प्रभृतिको देखनेसे ऐसा प्रतीत होता है, मानो ईश्वरने उसे निज हाथों से फुर्सतके समय गढ़ा है और उसे रूपलावण्य देने में कुछ पक्षपात से भी काम लिया है।

जब नवाब साहब की नज़र पहले-पहल उस सुन्दरी पर पड़ी, तो न जाने क्यों उनका चित्त हठात् उसकी ओर आकर्षित होगया। वह उसकी रूपमाधुरी पर मुग्ध होगये। नवाब तो विषय-वासना से मतवाले होरहे थे, इसलिये उनके दिलमें कपट-प्रेमके सिवा विशुद्ध प्रेम कहाँ से उदय हो सकता था? इस कारण उन्होंने अपने मनमें समझा कि वेश्या भी उनको और कपटपूर्ण प्रेमसे देखरही है।

नवाब साहब देखनेमें बिल्कुल ही ख़राब नहीं थे। वे एक उच्चकुल-सम्भूत उदारहृदय पुरुष थे। मगर उनकी उदारता का फल बुरे कामोंके ही भाग्यमें बदा था। बाज़-बाज़ वक्त उनके मामूली बर्तावमें असभ्यताकी झलक ऐसी तेज़ीसे आजाती थी कि, सभ्यता उन से कोसों दूर भाग जाती थी। विद्या-सम्बन्धी ज्ञान भी उनके पास बहुत ही थोड़ा था। जो कुछ था, उसका ख़ात्मा उर्दू और फारसीकी कविताओंमेंही होगया था। अँगरेज़ी भी वे टूटी-फूटी लिख और बोल सकते थे। पिताके मरनेके बाद बचपन से ही उन्हें कोई समयोचित सलाह देनेवाला न मिला। इसी कारण लम्पट

और खुशामदियोंने उनका स्वभाव एक विचित्र ही प्रकारका बना दिया। खैर इतनी ही थी कि, इन औगुणोंके होते हुए भी उनके हृदयमें अब भी सद्भावों के लिये कुछ स्थान अवशेष था। हमारे वही उदारचित्त नवाब साहब इस समय अपनी माँ और नूरजहाँके साथ अपने कमरेमें बेहोशीकी हालतमें पड़े हुए नज़र आरहे हैं।

नवाब साहबकी लौंडी अल्लारक्खी बहुत ही चतुर चालाक और होशियार थी। वह इनलोगों की यह हालत देखकर ज़रा भी न घबराई। उसने बड़ी चतुराईसे बेहोशी दूर करने वाली चीजें सुँघा-सुँघाकर एवं अन्यान्य उपाय करके उनकी बेहोशी दूर करदी। जब नवाब साहब की माँ को होश हुआ, तो उनकी नज़र पहले तो अपने पुत्र और पीछे नूरजहाँ पर पड़ी। वह कुछ कहना चाहती थी, किन्तु उद्वेगके कारण कुछ न कह सकी।

माँ को सामने देखते ही नवाब साहब कामान्ध होने पर भी शर्माकर सकुच गये। उनके मनमें ऐसा खयाल था कि, हमारी वालिदा शरीफ़ हमें रातके समय एकान्तमें एक सुन्दरी के साथ देखकर नाराज़ होंगी। इसीसे वे कुर्सी पर चुपचाप सिर नीचा किये हुए बैठे थे और अपनी माँ की झिड़कियों की प्रतीक्षा कर रहे थे। इसी बीचमें नूरजहाँको भी होश होगया। उसने अपने सामने एक वृद्धाको देखकर शर्म के मारे अपना मुँह ढक लिया और सिकुड़कर एक ओर बैठ

गई। नूरजहाँ का जैसा पेशा था, उसके अनुसार उसे लजाने-शर्माने और सिकुड़ने की ज़रूरत न थी, पर उसके ऐसा करने का कारण यह था कि, उसे इस पेशेमें क़दम रक्खे अभी थोड़े ही दिन हुए थे। इसीसे उसमें अब तक हया-शर्म बनी हुई थी।

जिस वक्त वहाँ की ऐसी हालत थी, नवाब साहब अपनी माता से क्षमा माँगनेके लिये कुर्सी से उठ खड़े हुए और कहने लगे—"प्यारी माँ, अच्छी माँ, मेरी इस बेअदबीके लिये मुझे माफ फरमाइये। मैं बड़ा गुनाहगार हूँ। तोबा! तोबा! मुझे सख्त अफ़सोस है कि, मैं आपके रूबरू इस तवायफ के साथ घरमें बैठा हूँ। अम्मा! माफ़ करो। रहम करो। मैंने इसे बरातके मण्डप की आगसे बचाया है, इसीसे इसे यहाँ ले आया हूँ। अम्माँ, अब तो मैं इसपर दिलोजान से कुर्बान हूँ। इस वक्त मुझे इसकी मुहब्बत के सामने बहिश्त भी कुछ नहीं मालूम होता। आपकी मरज़ी हो सो करो; बन्दा आपका खाक़सार ग़ुलाम है।

नवाबकी ये बातें सुन उसकी माँ बड़े असमञ्जसमें पड़ गई। उसके मुँहसे एक भी शब्द न निकला। वह चुपचाप कुर्सी पर बैठी-बैठी उसकी बातें सुनती रही। आख़िरकार उससे न रहा गया। वह बोली—"मेरी लड़की और तवायफ!! अरे बेहया, तू क्या बक रहा है? खुदाबन्दकरीम! खैर

कर और इस नालायक़को गुनाह से बचा, यही मेरी आज़ू है।"

नूरजहाँ और नवाब वृद्धाकी ये बातें सुनते ही एकदम सन्न होगये। उनकी आँखोंके सामने अँधेरासा छा गया, माथा चक्कर खाने लगा। वे दोनों वृद्धा की बातों का मतलब ज़रा भी न समझ सके। नवाब साहबने मनमें ख़याल किया कि, बुढ़ापेके कारण अम्माँजान की अक्ल मारी गई है, इसीसे वाही-तबाही बकती है। नवाब ही क्यों, कोई भी सुनने वाला वृद्धाके उक्त कथन पर विश्वास न कर सकता था। भला नवाब और एक वेश्या का भ्रातृ-भगिनी सम्बन्ध किसके ख़याल में आ सकता था?

इस कारण वहाँ जो स्त्रियाँ आकर जमा होगई थीं; बड़े अचम्भे में पड़ गईं। सभी असल बातकी खोजमें थीं। सभी जानना चाहती थीं, कि वृद्धाका कथन कहाँ तक सच है। बहुत कुछ सोचने-विचारने पर भी उन्होंने बुढ़िया की बात पर मुतलक़ यक़ीन न किया। अपने मनमें कहने लगीं—"इस बुढ़िया को ऐसी बेसिर पैर की बातें बनाने से क्या लाभ?"

इतनेमें नूरजहाँ उठी और बुढ़िया के क़दमों में गिरकर कहने लगी—"अम्माँ, आप ग़लती पर हैं। कहाँ आप एक आला ख़ान्दान और कहाँ मैं एक मामूली तवायफ़! भला, मुझ नाचीज़ लौंडीका आपके साथ रिश्ता होना किस तरह मुमकिन है?"

नूरजहा को इस हालतमें अपने क़दमोंमें पड़ी देख बुढ़िया का मातृप्रेम एकदमसे उमड़ आया। आँखोंसे प्रेमाश्रु बहने लगे। उसने गद्‌गद्‌ हो उसे अपनी छातीसे लगा लिया। उसको चूमचाट और पुचकार कर बोली—“हे खुदावन्द करीम! आज तुझे लाखलाख शुक्रिया अदा करती हूँ कि, तैंने मुझ पर रहम करके मेरी खोई हुई बेटी मुझे फिर बख़्शी! अय मेरे मीर! कलही मैं आपकी दरगाह पर रेशमकी चादर चढ़ाऊँगी और सोनेका प्याला नज़र करूँगी।” इसके बाद वह अपने पुत्र से कहने लगी—“बेटा! खुदा के लिये रहम कर और इसके निस्बत सब हाल साफ़-साफ़ और सच-सच बयान कर। मेरा दिल बेतरह घबरा रहा है। मुझे पूरी उम्मीद है कि, खुदावन्द अल्लाहताला ने तुम दोनोंको अब तक बेगुनाह और पाक साफ रक्खा है।”

माता के सवालोंके जवाबमें नवावने कहा—“अम्माँ, मैं अपने ईमान पर साबित क़दम हूँ, हर तरह इस मामले में बेगुनाह और पाक-साफ हूँ। आप ख़ातिर जमा रखिये कि, उस खुदावन्द करीम और हज़रत मुहम्मद साहबकी मिह-रबानी और नेकरहमीसे इस खतरनाक अज़दहेके ज़हर से बिलकुल बचा हुआ हूँ।”

नवाब की धार्मिक बात सुनकर माँ को सब तरह से यक़ीन होगया। यद्यपि नूरजहाँ बिल्कुल निर्दोष और

सत्यव्रत-धारिणी युवती न थी, परन्तु नवाबके साथ उसका अनुचित सम्बन्ध न देख, माँ को बड़ी प्रसन्नता और सन्तोष हुआ।

अपनी माँ की ऐसी हालत देख नवाब ने माँ से पूछा—"आप इसका मेरी हमशीरा—बहिन—होना किस तरह साबित करती हैं ?"

माताने सारा क़िस्सा मुख़्तसिर तौर पर कह सुनाया और छाती का लहसुन दिखाकर उसका सारा शक रफा कर दिया।

पाठकगण! अभी तक आपका भ्रम दूर न हुआ होगा। इसलिये हम नूरजहां के सम्बन्धमें कुछ लिखकर आपका शक रफा करना मुनासिब समझते हैं। असल बात यों है कि, इस बुढ़िया बेगमकी एक लड़की थी। नाम उसका नूरजहाँ था। जब वह तीन वर्ष की थी, तब वह बच्चागाड़ी में बिठलाकर एक नौकरके साथ मैदानमें हवा खाने के लिए भेजी गई थी। जिस समय उसकी गाड़ी एक जनशून्यस्थान पर पर पहुँची, उस समय न जाने कहाँ से एक मनुष्य आया और झपट कर उस असहाया बालिका को गाड़ी से उतार, अपनी बग़ल में दबा ले भागा! नौकरने उस आदमी से लड़ना चाहा। वह चिल्लाया-चीख़ा भी बहुत, मगर उस दुष्टके एक सोटे ने ही उसका काम तमाम कर दिया। वह बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़ा।

सन्ध्या होगई। अँधेरा छागया, चिराग़ बत्ती जल गये। मामूली से ज़ियादा वक्त गुज़र गया, किन्तु बच्चो को लेकर नौकर घर न आया, तब घर वालोंको चिन्ता होने लगी। चारों ओर आदमी छोड़े गये। खोजते-खोजते बहुत देरके बाद टूटी बच्चागाडी और बेहोश नौकर का पता लगा। नौकर घर लाया गया। इस समाचारने महलमें कुहराम मचा दिया। सभी स्त्रियाँ रोने-पीटने लगीं। घरमें दुःखका समुद्र सा उमड़ आया। यथासमय पुलिसमें ख़बर दी गई। जासूसों को अच्छे-अच्छे इनाम दिये जाने का वचन दिया गया। पुलिसने खूब खोज की। जासूसोंने भी अपनी जासूसीमें कोई बात उठा न रक्खी, मगर बालिका का पता न चला। लोगोंमें ऐसी चर्चा होने लगी कि, किसी दुष्टने ज़ेवरोंके लालचसे लड़की को मार डाला होगा और ज़ेवर लेलिये होंगे। पर असल में यह बात नहीं थी। उस दुष्टने उस बालिका को लेजाकर एक वेश्या के हाथ बेच दिया था। उस वेश्या ने उसे अपने ही पेशेकी तालीम दी।

वर्षों के बाद खोई हुई नूरजहाँ के वक्षस्थलमें लहसुन का निशान देखनेसे बेगम साहिबाको पूर्णतया विश्वास होगया कि यह नूरजहाँ, जो इस समय गायिकाके रूपमें है, मेरी प्यारी बेटी नूरजहाँ के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकती।

हमें विश्वास है कि, अब कि हमारे प्रेमी पाठकों को नूरजहाँ

का यह कच्चा हाल जानकर तसल्ली होगई होगी। अब किसी तरह का शक न रहा होगा। इसलिये अब हम नवाब साहब की अन्तरङ्ग बातोंके विषयमें लिखना मुनासिब समझते हैं। उम्मीद है कि, हमारे मनचले पाठक भी हमारी इस बात से सहमत होंगे।

सातवाँ परिच्छेद।

नवाब साहबकी मजलिस।

रात के आठ बजे हैं। नवाब साहब अपने महलके बरामदे के सामने बैठे हुए शीतल मन्द समीरका आनन्द उपभोग कर रहे हैं। सामने ही एक सुन्दर फूल-बाग़ है। फूलोंके गमले महल के हर ओर, और बरामदे में जा बजा क़रीने से सजे हुए हैं। बाग़ीचेके चारों ओर लोहे का सुन्दर रेलिङ्ग लगा हुआ है। बाग़के बीचों-बीच एक सुन्दर फव्वारा अपनी निराली ही बहार दिखा रहा है। चन्द्र की निर्मल चाँदनी खिलकर अपनी अपूर्व्व शोभा प्रदर्शित कर रही है। ग्रीष्मऋतु का आगमन होनेके कारण प्रकृति देवी इस समय महलकी फूल-वाटिका के अङ्ग-प्रत्यङ्गमें मन्द-मन्द मुस्कराहट भरकर प्रसन्न होरही है। हरी-हरी दूब जो फव्वारे के चारों ओर चक्कर लगाकर महलके बरामदे तक पहुँची है, ऐसी मालूम होती है मानों हरी मख़मल का सुन्दर ग़लीचा बिछा हुआ है। बरामदेके फर्शपर एक बड़ी

शतरञ्जी बिछी हुई थी। उस शतरञ्जी पर बीचोंबीचमें एक बढ़िया मख़मली गद्दा बिछा हुआ था, जिस पर जा बजा सुन्दर-सुन्दर तकिये और मसनदें लगी हुई थीं। उनमेंसे एक सर्व्वोत्तम मसनदके सहारे हमारे नवाब साहब सानन्द बैठे हुए थे। उनके पास ही उनके हम-उम्र नौजवान यार दोस्त डटे हुए थें। सब लोग आपसमें गपशप करते हुए सुनहली हुक्के का मज़ा लेरहे थे। उनके मित्रोंमेंसे एक का नाम मुरादबख़्श, दूसरे का प्यारेलाल, तीसरे का जहाँदार ख़ाँ और चौथे का नाम रामप्रसाद था। इनलोगों में आपस में गहरा मेलजोल होनेके कारण ये आपसमें एक दूसरे को अधूरे नामसे पुकारते थे। इन महानुभावोंके विषयमें हमें अधिक लिखनेकी कुछ वैसी आवश्यकता नहीं। उनकी निम्नलिखित बातचीत से पाठकोंको स्वयं ही सब हाल मालूम हो जायगा। अतएव पाठक चलिये, चुपचाप बरामदे के एक कोनेमें बैठकर उनकी रसीली गुफ्तगू का मज़ा लूटिये।

नवाब—प्यारे! क्या तुम बतला सकते हो कि, मेरी उम्र क्या है?

प्यारे—हुज़ूर! भला, मैं इसका क़यास कैसे कर सकता हूँ? मैंने तो कभी इसके जाननेकी कोशिश भी नहीं की। पर हाँ, जो कुछ हुज़ूर वाला की सूरत-शकल क़दोकामत और गुफ़्तगू से अन्दाज़ा किया जा सकता है, वह यह है कि, मैंने आज तक अपनी उम्रमें आप जैसा अक़्लमन्द, ख़ूब-

सूरत, जवाँमर्द, बातका धनी नौजवान नहीं देखा। कल शहरके क़ाज़ी साहब भी कोतवाल साहब से यही कह रहे थे और खुदावन्दकरीम से इस बात की इल्तजा कर रहे थे कि, वह आपको हमेशा इसी तरह अपनी बड़ी से बड़ी न्यामतें अता फरमावे और हर तरह की आफ़त नागहानी और बलाओं से आपको महफूज़ रक्खे।

प्यारेलालकी वाक्‌चातुरी पर नवाब साहब मुस्करा दिये। मुरादबख़्श ने यह बात ताड़कर चुपकेसे रामप्रसादके कानमें कुछ इस तरह से कहा कि, नवाब साहब साफ़-साफ़ सुन न सकें।

उसने कहा—"अरे रामप्रसाद! देख तो सही, यह नालायक चाँद हमारे नवाब साहब की ख़ूबसूरतीके सामने कैसा शर्मा रहा है कि, उसने अपना सफेद मुँह शर्म के मारे बादलों की चादर में छिपा लिया है।

रामप्रसाद और मुराद की कानाफूसी सुनकर नवाब साहबने फर्माया—"सचमुच ही आज चाँद की रोशनी कुछ धुँधली नज़र आती है।"

मुराद—जी हुज़ूर! वाक़ई ...

राम—बेशक।

जहाँ०—इसमें तअज्जुबकी कौनसी बात है? चाँद की क्या मजाल जो हुज़ूर के रूबरू बेपर्द निकल सके?

पाठको! आप कहीं इस भ्रम में न पड़ जायँ कि, चन्द्रमा

का प्रकाश सचमुच ही कम हो गया था अथवा उसको बाद-लोंने ढक लिया था। वह तो सदा की भाँति रौशन था, मगर हमारे नवाब बहादुर के साथियोंकी नज़रमें उसपर पर्दा पड़ा हुआ था। सच तो यह है कि, उन्हींकी अक्ल पर पर्दा पड़ा हुआ था, जिसको बाबत निम्नलिखित वार्तालापसे सब कुछ मालूम हो जायगा।

जहाँदार—हज़रत अल्लाताल्लाने हमारे हुजूरवालाको खुदही खूबसूरतीका बाना पहनाकर इस जहान में भेजा है। क्यों, आज सवेरेको उस कुएँवाली नाज़नीनकी मज़ेदार बात मालूम है न? मुराद! ज़रा कयास तो करो, वह ज़िक्र किस के बाबत होगा?

मुराद—क्या खूब! आपके बिना कुछ कहे मुझे क्या इल्म हो सकता है? मैं कोई नजूमी या ज्योतिषी तो नहीं हूँ यार! बराहि मिहरबानी बतलाइये तो बात क्या है?

मुराद इस तरह से चालाकीके साथ जहाँदारके सवालके मामले में अनजानसा बनगया। जानता वह सब था। यदि वह चाहता, तो उसे यह बतला देना कोई बड़ा काम न था कि, जहाँदार ने जिसकी निस्बत सवाल किया था, वह हमारे हरफ़न मौला नवाब साहबके सिवा और कोई नहीं हो सकता। मगर उसे तो रङ्ग चढ़ाना था, इसलिए बातचीत का सिलसिला औरही तरह छेड़ा।

जहाँदार—भाई मुराद ! उस माहेलक़ाकी गुफ्तगू हमारे हुज़ूर हीके निस्बत थी ।

उपरोक्त बात सुनते ही नवाब साहब फूलकर कुप्पा हो गये । खुशीके मारे आपे में न समाये और जहाँदारसे कहने लगे—"सच कह यार ! क्या वाक़ई वह औरत मेरी ही निस्बत गुफ्तगू कर रही थी ?"

जहाँदार—जी हाँ जहाँपनाह ! वह औरत जो ज़िक्र कर रही थी, उसमें एक अजीब तअज्जुबअङ्गेज़ बात है। वह अपनी एक साथिन से कह रही थी—"बीबी ! न जाने क्या बात है कि, नवाब साहब तीन चार रोज़ से इस राह से नहीं गुज़रे । भला, उन्हें मुझ बेकस ग़रीबिनी का ख़याल क्यों होने लगा ? मगर मैं तो क़स्द कर चुकी हूँ कि, अगर वे इस राह से न गुज़रेंगे—मुझे अपने दर्शन न देंगे—मुझे उनके दीदार नसीब न होंगे, तो मैं इस दुनियासे इस तरह चलती हुई नज़र आऊँगी, जिस तरह एक छोटा पौधा आफ़ताब की रोशनी बिना ग़ारत और नेस्तनाबूद हो जाता है। या अल्लाह ! जो खुशक़िस्मत उनकी बीबी बनेगी, उसके नसीबे का तो क्या कहना ! वह तो बहिश्तकी हूरोंसे भी बढ़कर होगी । मेरी क़िस्मत ऐसी कहाँ ! मै तो उन्हें देख कर ही अपने दिल को समझा लेती हूँ ।" वह यह कहती-कहती ज़रा शर्माई और उसने एक आह सर्द खींची। उसकी यह कहानी सुनकर दूसरी बोली—"बहिन ! मेरा भी यही

हाल है। अपना दुखड़ा किसके सामने रोऊँ ? अपने दिल को किसको सुनाऊँ ? मैं तो उनका नाम ले लेकर जीती हूँ। मेरी दानिस्तमें तो वे हाथरस के यूसुफ हैं।" उसकी बात ख़तम भी न हुई थी कि, तीसरी चट से बोल उठी—"वाह ! खूब कही बहिन ! वे हाथरसके ही नहीं, सारे हिन्दुस्तानके यूसुफ हैं।" उसकी बातके ख़तम होते न होते ही एक और बीचमें ही बोल उठी—"दुनिया जो चाहे सो कहे, मगर मैं तो उन्हें सारी दुनियाका यूसुफ समझती हूँ। अगर यह बात न होती, तो हरेक औरत खुदा से क्यों इल्तजा करती कि, उसे नवाब साहब जैसा ही शौहर मिले।" हुज़ूर ! क्या अर्ज़ करूँ ? तमाम हाथरस की औरतें हुज़ूर वाला की खूबसूरती पर जीजान से फिदा और दीवानी हो रही हैं। क्या यह बात तअज्जुबअङ्गेज़ नहीं है ? हुज़ूर! और सुनिये, उन नाज़नीनों की बातोंके बीचमें ही एक हिन्दू कमिसन परी बोली—"अरी बहिनो ! इस झगड़ेमें क्या रक्खा है ? यों क्यों नहीं कहतीं कि, वे ब्रज के कन्हैया हैं और हम सब उनकी गोपियाँ हैं। उसकी बात सुनकर मैंने कहा—"वाह ! क्या खूब मिसाल दी है ? कहाँ हमारे हुज़ूर वाला और कहाँ एक ग्वालेका लड़का !" इसी तरह की दिलचस्प और मज़ेदार गुफ्तगू चल रही थी कि, इतनेमें उन औरतों में से किसी का मनहूस खाविन्द वहाँ आ निकला। बस फिर क्या था, उन बेचारी माहेलकाओं

को खामोशी अख्त्यार करनी पड़ी, जिसका मुझे सख्त अफ़सोस है ।

जहाँदारखाँ की बातोंसे नवाब साहिब के मुसाहिबों, दोस्तों और स्वयं नवाब साहबको इस बातका पक्का इतमीनान होगया कि, वे परले सिरेके खूबसूरत हैं और यही वजह है कि सारे शहर की मस्तूरात—स्त्रियाँ—उनपर दिलोजानसे फिदा हैं। यहीं तक खैर हो सो नहीं, मुरादबख्शने मौका देखकर औरभी निमक मिर्च लगाना शुरू किया। वह बोला—

"जहाँपनाह! आपकी लासानी खूबसूरती ने सारे हिन्दुस्तानकी कमसिन हसीनों को दामे मुहब्बतमें फँसा लिया है। वे लोग किस तरह आप पर अपना तन-मन न्योछावर करने को तैयार हैं, इसका बयान करना मेरे लिये बहुत ही दुश्वार हैं। जिस तरह गुलाबके फूल की खुशबू का मज़ा और लोग लेते हैं, मगर वह खुद उस से महरूम रहता है; जिस तरह आँख सब कुछ देख सकती है, मगर वह अपने तईं नहीं देख सकती; जिस तरह आईनेमें और सब का अक्स पड़ता है, मगर खुदका नहीं,—वही हाल हुजूर की खूबसूरतीका है। उसे और सब लोग देख-देखकर आहें सर्द खींचते हैं, पर हुज़ूर वालाको उसका मुतलक़ खयाल नहीं।

एक मौक़े की बात मुझे इस वक्त याद आई है। एक दफा मैं कलकत्ते गया था। वहाँ मुझे हिन्दुस्तानकी मामी-

गिरामी सबसे बढ़िया तवायफ गौहरजानके मकान पर जाने का मौक़ा मिला। जिस वक्त मैं उसके कमरे में दाखि़ल हुआ, उस वक्त वह अकेली ही बैठी हुई थी। उसके हाथमें एक फोटो था, जिसे वह बड़े ग़ौर से देख रही थी। मेरे पैरों की आहट पाते ही उसने उस फोटो को कई बार चूम, अपने सीने से लगा, अपनी चोली में छिपा लिया। इसके बाद उसने बड़ी तहज़ीब-तमीज़ और शाइस्तगी से मुझसे बैठने को कहा। कुछ देर बाद मैंने रुख़्सत माँगी। इसी अथना में एक अजीब तमाशा नज़र आया। क्या देखता हूँ कि, उसकी चोली से एक फोटो गिरा। मैं उसे देनेही को था कि, उसे देखकर मैं खुद हक्काबक्का होगया। क्योंकि उस फोटो की मुशाबहत हुज़ूर से बिल्कुल ही मिलती-जुलती थी।"

यह कहकर मुराद अपनी गुफ्तगू की मज़ेदारी का अन्दाज़ा करनेके लिये, थोड़ी देर ख़ामोश रह और खाँसकर मुँह पोंछने लगा। उसे यह देखकर कि मेरी लच्छेदार बातोंका अहले-मजलिस पर पूरा-पूरा असर हुआ है, अज़हद ख़ुशी हुई! नवाब साहब की खुशी का तो कहना ही क्या? वे फूलकर कुप्पा होगये। नवाब साहब में सबसे बड़ा ऐब खुदीका था। उनको अपनी तारीफ बहुत ही अच्छी लगती थी। अगर कोई उनकी तारीफ़ करके उन्हें अपने क़ाबूमें किया चाहता, तो वे चिकनी-चुपड़ी बातों और खुशामद से फौरन उसके वशमें हो जाते थे।

नवाब साहब पर अपनी लच्छेदार बातोंका असर होता देख, मुराद फिर और भी नोन मिर्च लगाकर कहने लगा—"जहाँपनाह ! जिस वक्त उस परी पैकरको मेरे रङ्ग-ढँगसे यह गुमान हुआ कि, मैं फोटो को पहचान गया हूँ, वह बहुत ही खुश हुई और मुझसे फौरन ही सवाल किया—"कहिये जनाब ! क्या आप जानते हैं कि यह किसका फोटो है ?" उसे इस बातका मुतलक़ इल्म नहीं था कि, यह फोटो जहाँपनाह का है। उसे तो वह फोटो इत्तिफाक से एक फोटोग्राफर के पास मिल गया था। उस फोटो पर हुजूर का नाम वगैरः तो कुछ था ही नहीं; नहीं तो वह हुज़ूर की निस्बत कुछ ज़रूर जान लेती। कमबख़्त फ़ोटोग्राफर भी तो इस बातको न जानता था कि, फोटो किसका है और और फोटोवाला कहाँ रहता है।

जब मैंने फोटो का पहचानना क़बूल कर लिया, तब तो गौहर की हालत अजब वहशियोंकीसी होगई। वह मेरी खुशामदें कर करके कहने लगी—"मियाँ साहब ! मैंने आज तक अपनी उम्र में ऐसा खूबसूरत नौजवान कहीं नहीं देखा। जिस दिन मैं इस फोटो की पुतली को अपनी इन आँखों से चलती-फिरती देखूँगी, उस दिन मैं अपनी ऐन खुशक़िस्मती समझूँगी। ओह ! उस वक्त मेरी क्या हालत होगी, मैं खुद ही नहीं कह सकती। अगर खुदा की मिहरबानी या अपनी खुशक़िस्मती से उसे अपनी आँखोंसे कभी देखूँगी, तो उस

पर अपना तनमन निसार करके उसकी बिना दामों की लौंडी हो जाऊँगी और उसकी क़दमबोसी को अपनी ख़ुशक़िस्मती का बाइस समझूँगी।"

"हुज़ूर! मैं तो उसकी बातें सुन अजब कसमकशमें पड़ गया। मुझे उसकी उस वक्तकी हालतपर बहुत ही तर्स आया। सभी सोच सकते हैं कि, ऐसी एक हसीन कमसिन नाज़नीनकी वैसी बातों पर किसे हमदर्दी न होगी? संगदिल से संगदिल का भी दिल पसीजे बिन न रहेगा। उस मौक़े पर मुझसे एक ख़ता होगई। उसके लिये मैं बारम्बार दस्तबस्ता मुआफ़ी का ख़्वास्तगार हूँ। बात यह है कि, मैंने उससे इस बातका वादा कर दिया कि, मैं आपके माशूक़को आपसे मिलाने में हर तरह दिलोजान से मदद करूँगा। इतनाही मैंने अच्छा किया कि, मैंने उसे आपके नाम, पते और सकूनतसे महरूम रक्खा। इस वादे से ही मेरा उससे पीछा छुटा, नहीं तो वह तो मेरे गले का हार होगई थी। वह मेरे साथ आपके पास आने को बिल्कुल ही आमादा होगई थी। ख़ुदा खैर करे, मैंने बड़ी-बड़ी मुश्किलोंसे उससे अपनी जान बचाई। मगर उसने अपना फोटो हुजूर के क़दमों में पेश करने को मुझसे बहुत कुछ मिन्नत-समाजत की। मुझसे यह नादानी हुई कि, मैंने उसका वह फोटो हुजूरवालाके क़दमोंमें बिना हुजूरकी इजाज़तके पेश कर दिया।"

उस तस्वीरको देखते ही लाला रामप्रसाद यों उठ बोले—

"वाह जनाब वाह! खुदाने खूब फुर्सतमें गढ़ी है। सचमुच ही हिन्दुस्तान में इसका जोड़ा नहीं। भाई, ज़रा इसकी कमर तो देखिये, इसकी कमर ने तो यूरोपियन लेडियोंकी कमरको भी मात कर दिया। आँखें तो ग़ज़ब की जोवनदार और रसीली हैं। नाक तो सूआसारी ही है। इसके सभी अङ्ग क़ाबिल-तारीफ़ हैं। बहिश्तकी हूरें भी इसके सामने पानी भरती हैं। यदि मुझे यह एक घड़ी को भी मिल जाय, तो मैं अप्सराओं से भी नफ़रत करने लगूँ।" यह कहता-कहता वह फोटो की तरफ़ एकदम प्रेममग्न होकर देखने लगा।

इतनेमें प्यारेलाल बोला—अगर किसी को हिन्द की ज़ुलेखा कह सकते हैं तो वह यह है।

नवाब साहब—नहीं नहीं, इसकी सूरत-शकल और क़दो-क़ामत वगैरः से तो इसे "नूरेजहाँ" कहना बहुत मुनासिब होगा।

मुराद—मुझे तो यह सब्ज़परी और जहाँपनाह गुलफाम-हिन्द मालूम होते हैं। खुदाने दोनों की जोड़ी इस जहानको बख़्शी है।

जहाँदार—बेशक।

रामप्रसाद—दरीं बेशक (इसमें सन्देह नहीं)।

नवाब साहब—इसमें ज़रा भी शक नहीं कि, खूबसूरती को खूबसूरती ही खींचती है।

मुराद—अगर हुज़ूर पुरनूरकी यही मन्शा है, तो मैं आग

और तलवार को भी कुछ न समझूँगा। हुजूर का हौसला पूरा करनेके लिये अपने ख़ूनको भी पसीने की तरह बहाने को मुस्तैद हूँ।

प्यारे—हुजूर के लिये बन्दा तो जलती आगमें भी कूदना कुछ नहीं समझता।

रामप्रसाद—अगर यह सर भी जहाँपनाह के कुछ काम आवे तो तैयार है।

जहाँदार—हुजूर! राजापुरके नवाब साहब जब सुनेंगे कि, परी पैकर गौहरने आपको अपना दिल दे दिया है, तब तो उनको बुरी हालत होगी। उनके दिल के टुकड़े-टुकड़े हो जायँगे।

मुराद—और नवाब जावद तो मेरे ख़यालसे दीवाने ही हो जायँगे।

रामप्र०—(मनमें) नवाब हाथरस भी अपनी बेवकूफी के बाइस कुछ कम पागल नहीं होगये हैं। पर हमें क्या? हमें तो हाँमें हाँ मिलानेसे मतलब। (प्रकाश्यमें) हुज़ूर की खूब-सूरती क्या ऐसी-वैसी है? गौहरके हुजूर पर लट्टू होनेमें मैं तो कोई तअज्जुब की बात नहीं समझता।

मुराद—बेशक, तअज्जुब की कोई बात नहीं।

नवाब साहब—मुझे भी अब यही मालूम होता है कि, मेरा दिल अब मेरा नहीं रहा। इस तस्वीर ने उसे चुरा लिया।

रामप्र०—(धीरे से) अच्छा हुआ, अगर बिल्कुल ही चुरा लिया जाता तो और भी अच्छा होता। उसका रहना न रहना बराबर है। (ज़ोर से) हुजूर! बड़े ही खुश-क़िस्मत हैं, जो ऐसी कमसिन हसीन परी आपके हाथ लगी।

मुराद—(धीरे से) आपका दिल फोटो ने चुरा लिया है। हमलोग जनाबको उससे मिलानेमें क्या अशर्फियाँ चुराने में कमी करेंगे? (ज़ोर से) हुजूर! वह दिन कब देखने को मिलेगा, जब मैं इस बाँकी जोड़ी को मिला देनेमें कामयाब हूँगा?

अन्तमें इस सारी बातचीत का यह नतीजा हुआ कि, नवाब साहबने मुराद को गौहरजान के लानेके लिए कलकत्ते भेजना निश्चित किया। मुराद ने इस चालाकी से अपने हाथ किस तरह साफ किये, अपने तईं कैसा मालामाल किया, यह बात पाठकों को स्वयं ही आगे चलकर मालूम हो जायगी।

नवाब साहबने स्वत: एक प्रेमपत्र लिखकर मुरादके हाथ सौंपा। उस पत्रको लेकर वह कलकत्ते गया। वह पत्र फारसी ज़बान में था। उसका हिन्दी भाषान्तर हम अपने प्रिय पाठकों की भेंट करते हैं:—

"हृदयेश्वरी! भारत की अपूर्व्व और अद्वितीय सौन्दर्य्य देवी!

"अपने इन मित्र महोदय से, जो आपकी सेवा में मेरा पत्र

उपस्थित करेंगे, यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि, आपने मुझे अपना प्रेमपात्र स्वीकार किया है और तुच्छ फोटो को अपने हृदय में स्थान दिया है, इससे मैं अपने चित्र के भाग्य की अपेक्षा अपने भाग्य को कम समझता हूँ। मुझे इस बात का बड़ा डाह है कि, मेरा स्थान मेरे फोटोने ले लिया। यह भी भारी दुःख है कि, मुझसे पहले मेरा मित्र आपके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त करेगा। मुझे अपने मनके भाग्य पर भी बड़ी ईर्षा है, जो मुझसे पहले आपके श्याम केश-गुच्छों में भौंरे की तरह जा घुसा है। मुझसे आपकी जुदाई सही नहीं जाती। अच्छा हो, यदि आप कृपाकरके अपने मधुर सम्भाषण और शुभ दर्शनों द्वारा अपने भक्त को वियोग-वेदना से बचालें। मैं हर तरह से आपके प्रेम-पाश में आबद्ध होगया हूँ। दया कर दर्शन दीजिये और मुझे इस संसारमें जीता रखिये। यदि आप मेरी बातों पर ध्यान न देंगी, तो ये प्राण इस चोले को छोड़ चलते बनेंगे। अधिक कहना व्यर्थ है, मेरे प्राण आपमें बसे हुए हैं।

"मेरा सारा भविष्य-सुख आपही की कृपा पर निर्भर है। मैं हर तरह-से आपके चरण-पङ्कजोंका दास हूँ। मुझे सुख प्रदान करनेमें विलम्ब न कीजिये। मेरा क्षण-क्षण वर्षों के समान बीत रहा है। काल—कल्पसा मालूम होता है, काटे नहीं कटता। तुम्हारा सच्चा प्रेमी—

नवाब निज़ामुद्दौला।"

जब पत्र हर तरह से लिखा जा चुका, तब नवाब साहब ने उस पर अपनी मुहर-सील लगाकर मुराद के हवाले किया और उसे उसके स्थान पर पहुँचाने का हुक्म दिया।

इस कार्रवाई के बाद, रात अधिक हो जाने के कारण, सब लोग अपने-अपने घरको विदा होगये। महल के बाहर आकर वे सब लोग एक जगह इकट्ठे हुए और ऐसे खिल-खिलाकर हँसे कि, दो तीन सोते हुए पच्छी जाग उठे और आफ़तसी समझ घोंसलों से बाहर निकलकर फड़फड़ाने लगे। हँसती-हँसती मित्रमण्डली आगे बढ़ी और दूसरे दिन सवेरे मुरादमियाँ के घर मिलनेका निश्चय करके सबने अपने-अपने घर की राह ली।
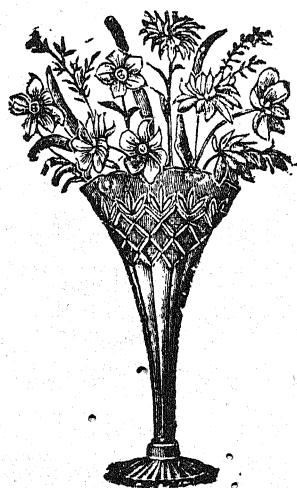
आठवाँ परिच्छेद।

षड़यंत्र-रचना

नवाब साहबने स्वप्नमें भी कलकत्ते की मशहूर गौहरजान को न देखा था। उन्होंने उसकी तस्वीर मैचबॉक्स और ग्रामोफोनके रिकार्डों पर ही देखी थी। उन्होंने उसे कभी अपने सामने न देखा था। हाँ, उन्होंने उसकी सौन्दर्य्य-महिमा का गुणगान अवश्य सुना था। उन्होंने सुना था कि, वह हिन्दुस्तान की प्रत्येक भाषा और राजभाषा अँगरेज़ीमें बड़ी खूबीसे गा सकती है। उन्हें विश्वास था कि, उसका अनुपम सौन्दर्य्य प्रत्येक पुरुष को अपनी एक नज़रमें अपना दास बना सकता है। उसका नयन-बाण हर किसी को घायल कर सकता है।

उन्हें यह भी मालूम था कि, उसका रूप-रङ्ग मैचबाक्स के चित्रों और ग्रामोफोन के सूचीपत्रों की तस्वीर से बिलकुल निराला है। वे चित्र तो चित्रकारोंके ख़याली चित्र हैं।

नवाब साहबसे उनके दोस्तोंने यह भी कह दिया था कि,

वह बड़ी धनी और अहङ्कारी है। बहुत से लक्ष्मीके लालों को, जो उसे अपनी प्रेमपात्री बनाया चाहते थे, उससे बड़ी भिड़कियाँ खानी पड़ी हैं। इस पर भी मूर्ख नवावने अपने तईं सचमुचही लाजवाब खूबसूरत समझकर अपने खुशामदी दोस्तों की धूर्त्ततापूर्ण बातें सच समझलीं। उन्हें सोलह आने विश्वास होगया कि, गोहर उन्हें अपना प्रेमपात्र बना चुकी है। मगर असल बातकी तह तक वे न पहुँच सके। जो लोग खुशामदपसन्द होते हैं, उनकी सदाही दुर्दशा होती है। यथार्थ में बात कुछ भी नहीं थी, भला गोहर जैसी धनी और नामी वेश्या उन पर क्यों मरने लगी? मगर नवाब साहब के भूखे यारों को तो अपना जाल बिछाना था। परिणाम यह हुआ कि, नवाब साहब उनके जालमें फँस गये।

दूसरे दिन चारों यार मियाँ मुरादके मकान पर इकट्ठे होकर आगे के लिय बन्दिशें बाँधने लगे।

रामप्रसाद—कहो दोस्त मुराद! तुम अपना बेशक़ीमत काम कब शुरू करोगे?

मुराद—बस, एक हज़ार का तोड़ा मिलनेकी देर है। जहाँ नवाब साहबके खज़ाने से तोड़ा हाथ लगा कि, पौ बारह पच्चीस है।

जहाँदार—यार! तूने तो उसे अच्छा उल्लू बनाया। भई, नवाब तो अजब क़िस्म का अहमक़ है। बेवक़ूफसे बेवक़ूफ भी ऐसी बात पर यक़ीन न करेगा।

मुराद—तुम लोग क्या समझते हो ? मैंने तो गौहर ख्वाबमें भी नहीं देखी। वह तो निरी सफेद गप है। गौहर से मेरी मुलाक़ात और बातचीत होना ऐसाही नामुमकिन है, जैसा कि चाँदमें रहनेवालोंसे मिलना और उनसे गुफ्तगू करना। भैया! तुम मेरी चालोंको नहीं समझते, ये तो मेरे चकमे हैं। अगर ऐसे-ऐसे चकमों से काम न लूँ, तो नवाब कब दावमें आवे ? सोचो तो, गौहर भी कहीं उस नादान से मुहब्बत कर सकती है ? गौहर का नवाब पर आशिक़ होना, वैसा ही नामुमकिन है जैसा कि चाँद का खुद अपने ऊपर आशिक़ होना।

रामप्र०—भाई! नवाब ने तो बेवकूफी की हद ही कर दी! देखो तो पागल तस्वीर पर ही लट्टू हो गया!

मुराद—अभी उन्हें दुनिया का हाल बिल्कुल ही मालूम नहीं। उन्हें तो सारी दुनिया मुहब्बत की ज़ंजीरों से जकड़ी हुई दिखती है। उनका तो जानआलम और अञ्जुमनआरा का सा हाल है। पढ़ा है कि, जानआलम तोते से उसका ज़िक्र सुनकर ही उसपर आशिक़ हो गया था। हमारे नवाब बहादुर दूसरे जानआलम हैं। तभी तो उन्होंने मुराद की बातोंपर एतबार कर लिया और गौहर की मुहब्बतका दम भरने लगे!

प्यारेलाल—खैर, जो हुआ सो ठीक। पर आपने इस ताऊन की कोई दवा भी सोची ? मुझे तो हरगिज़ भरोसा

नहीं कि, आप गौहर के पास कलकत्ते जाकर उससे इस मुहब्बत का ज़िक्र भी छेड़ें और उसे फुसलाने में कामयाब हों। वह बड़ी बेढब औरत है।

मुराद—क्या आप मुझे इतना बेवकूफ समझते हैं कि, मैं उस अक्लके अन्धे के लिए कलकत्ते तक जाऊँगा। मर भले ही जाऊँ, पर उस घमण्डी और परले सिरेकी गुस्ताख़ औरत गौहर और उसके ख़ादिमोंकी झिड़कियाँ खाना मुझे हरगिज़ गवारा नहीं।

रामप्र०—तब आपका क्या इरादा है ?

मुराद—इस से आपको क्या मतलब ? पर हाँ, इतना कह देने में कोई हर्ज नहीं कि, मैं कलकत्ते नहीं जाऊँगा, पर उस बेवकूफ नवाब की तबियत हर तरह से खुश कर दूँगा। उन्हें यह ख़्वाबमें भी न मालूम होगा कि, हमने उनके साथ चाल चली है। खुदा को याद रक्खो, इस मामलेमें अपने हाथ खूब रँगे जायँगे—और अपन मालामल हो जायँगे।

प्यारे—भाई! तुम्हारी बातें सुनकर तो मेरी अक्ल ही काम नहीं करती। बड़े तअज्जुब की बात है कि, कलकत्ते भी न जाओगे और काम भी पूरा कर दोगे। मुझे तो तुम्हारी इस बातपर यक़ीन ही नहीं आता। भाई, कहीं सब भण्डा न फूट जाय—बना बनाया ईंटका घर मिट्टी न हो जाय।

मुराद—प्यारे! तुम तो अजब अहमक़ हो! मालूम होता

है, तुम्हारी अक्ल कहीं चरने गई है! क्या तुम्हें मालूम नहीं कि, नक़ल भी कोई चीज़ है। बहुत बार नक़लके सामने असलको नीचा देखना पड़ता है।

प्यारे—अच्छा अच्छा, अब समझा। शायद तुम खुद ज़नानी पोशाक पहनकर गौहर का स्वाँग भरोगे।

प्यारेकी बात सुनते ही मुराद एकदम खिलखिला कर हँस पड़ा। उसके हँसने से प्यारे झेंप गया। फिर क्या था? मुरादके दोनों साथी भी खूब हँसने और उसे उल्लू बनाने लगे। इस तरह जब हँसीका दौरदौरा कम हुआ, तो मुराद बोला—

"प्यारे! तुम्हारे दिमाग़में सिवा ईंट पत्थरोंके कुछ नज़र नहीं आता। भई, ज़रा अक्ल से काम लिया करो। मान लो, मूँछ मुँड़ाकर मैं औरत भी बना, तो क्या यह मुमकिन है कि नवाब मुझ सण्ड-मुसण्डेको गौहर समझ लेगा? औरतका स्वाँग भर मेरा औरत हो जाना वैसा ही नामुमकिन है, जैसा कव्वेका मोरके पङ्ख लगाकर मोर बन जाना। भाई साहब! आप ख़ामोश होकर तमाशा देखते जाइये! देखिये, कैसे-कैसे गुल खिलते हैं!

मुराद की बातपर विश्वास करके सब यार लोग अपने-अपने घरों को चल दिये।

नवाँ परिच्छेद ।

षड़यन्त्रमें सफलता ।

दूसरे दिन मियाँ मुराद अपना असबाब-सफर लेकर हाथरस-सिटी ष्टेशन पर पहुँच गये। उनके यार लोग उन्हें पहुचाने के लिये ष्टेशन तक आये। मुराद ने दूसरे दर्जेका टिकट ख़रीदा और बड़ी शानोशौक़त के साथ मित्रोंके हाथ में हाथ डाले प्लेटफार्म पर टहलने लगा। उधर बेचारे तीसरे दर्जे के मुसाफिरों का बुरा हाल था! जैसे तैसे टिकट लेलेकर, अन्दर घुसनेके कटहरे के पास आकर जमा होगये। टिकट कलेक्टर बाबू दरवाज़े पर खड़े थे। कहीं से ज़रा घण्टोकी आवाज़ सुनते ही बेचारों के कान खड़े हो जाते थे। सिरोंपर गठरियाँ रखकर तैयार हो जाते थे। सभी बड़े भारी घबराहटमें थे। खूबही धक्कम-धुक्की हो रही थी।

मथुरा में कोई बड़ा भारी मेला था, इससे आज सब दिनोंकी अपेक्षा ष्टेशन पर अधिक भीड़भाड़ थी। आदमी पर

आदमी गिरा पड़ता था। तीसरे दर्जे के मुसाफिरख़ाने में तिल धरनेकी जगह नहीं थी। भीड़में कितनी ही औरतों और बच्चोंका कचमूर निकल गया। बच्चे रोरहे थे, औरतें चिल्ला रही थीं। गर्मीके मारे मुसाफिर पसीनों से तर हो गये थे। ऐसा मालूम होता था, मानो जमुनामें ग़ोता लगा-लगा करके चले आये हैं। छोटे-छोटे बच्चे पानी-पानी चिल्लाते थे, मगर उस भीड़में कौन किसकी सुनता था? सब को यही जल्दी लग रही थी कि, हम सब से आगे जाकर गाड़ीमें बैठ जावें। एक तरफ हालकी व्याही हुई बहुएँ दुष्टों की दुष्टता से बचनेके लिए चुपचाप घूँघट मारे एक ओर बैठी और खड़ी थीं। इस तरह ख़ाली पत्थरों के फर्श और धूल मिट्टीमें अनेक स्त्री, पुरुष और बालक अपने भाग्य को कोसते हुए बुरी तरह से दुःख पा रहे थे।

"आवश्यकता"के इस निष्ठुर बर्ताव को देखकर आनन्द भी होता था और शोक भी होता था। आज नीच-ऊँच छोटे-बड़े का कुछ भी ख़्याल नहीं था। ऊँच जाति नीच जाति, उच्चपदाधिकारी निम्न पदाधिकारी सभी एक जगह हिल मिलकर खड़े और बैठे थे। हिन्दू मुसल्मान, पादरी और पण्डित सभी अपनी-अपनी जाति और कुलीनता का ध्यान छोड़कर उस छोटीसी जगहमें ठसाठस भरे थे। सती महिलाएँ जो सदा पर्दे में रहती हैं, जिन्हें सूर्य्य के दर्शन भी कभी छठे छमाहे मुश्किल से होते हैं। अपरिचित पुरुषों

के पासही बैठी हुई थीं। वे अहङ्कारी और घमण्डी पुरुष जो दूसरेका पल्ला छू जाने से फौरन स्नान करते हैं, जो नीच जाति के लोगों की परछाईं से भी नफरत करते हैं, जिनकी धोतियाँ आस्मान में अधर सूखा करती हैं, आज नीचोंके कन्धे से कन्धा भिड़ाये खड़े थे। आज यहाँ स्मशान-भूमि का सा नज़ारा नज़र आरहा था, जहाँ राजा और रङ्क, अमीर और ग़रीब, ब्राह्मण और शूद्र सब एक हो जाते हैं। सबकी ख़ाक एकमेक होकर हवामें उड़ती फिरती है। ज़रूरत बुरी है। ज़रूरत के समय किसी बातका ख़याल नहीं रहता।

मुसाफिरख़ाने में सामने ही बुकिङ्ग आफिस यानी टिकट-घर था। वहाँ की तकलीफों का तो हाल ही न पूछिये। आदमी पर आदमी चढ़ा जाता था, किसी की पगड़ी उतरती थी, किसी की टोपी पैरों में लुढ़की फिरती थी। कटहरे के पास एक रेलवे पुलिसका कान्सटेबिल खड़ा था। फिर भी कितने ही लोगों के जेब कट गये, नौलियाँ ग़ायब होगईं। जब बहुतही धक्कम-धुक्का होने लगता था, तब सिपाहीराम को अपने भवभञ्जन दण्ड का व्यवहार करना पड़ता था। जो दो चार धक्के और एकाध दण्डा खाकर अपना मतलब बनाकर निकल जाता था, वह तो अपने तईं बड़ा भाग्यवान समझता था।

अन्त में ज्यों त्यों करके गाड़ी ने सीटी दी। सीटी होते

दरवाज़ा खुला। अब क्या था? उस ज़रासी तङ्ग राह से एकदम धक्का-मुक्की करती हुई भीड अन्दर घुसने लगी। इतने में टिकट कलेक्टर साहब ने फिर दरवाज़ेका किवाड सामने कर दिया, अब लोग पीछे की ओर गिरने लगे। बाप बाहर चला गया, बेटा अन्दर रह गया। पति बाहर स्त्री भीतर—बड़ी दुर्दशा हुई। उस समय ऐसा मालूम होता था, मानो मनुष्य-रूपी नदी में ज्वार भाटे का चढ़ाव-उतार हो रहा हो। उस समय की हालतको देखकर सुप्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता डारविनके कथन की सत्यता पूर्णरूप से प्रतीत होती थी। बूढ़े, अन्धे, और रोगियोंको ज़मीनपर गिरते और लोगों के पैरों तले कुचलते देखकर, बालकोंको माताओंकी गोदियों से फिसलते देखकर, कुलाङ्गनाओंके सिरकी ओढ़नियाँ उतरते देखकर दर्शकके चित्त में बड़ाही दुःख होता था।

गाड़ी धक-धक करती हुई प्लेटफार्म पर आ खड़ी हुई। दरेवाज़े खुलने लगे। यात्री उतरने और चढ़ने लगे। मुराद भी एक सेकण्ड क्लास कम्पार्टमेण्ट खोलकर चढ़ बैठा। उसने अपने दिल्ली दोस्तों से मिल-भेंट हाथ मिलाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया, मगर तीसरे दर्जे के मुसाफिरों की गड़बड़ अब भी जारी थी।

गाड़ी की रवानगी का टाइम हो गया। लाइन क्लियर लेकर गार्डने इञ्जिन ड्राइवर को दिया, स्टेशन की घण्टी हुई और गाड़ी ने सीटी देकर स्टेशन छोड़ दिया। मुरसान

और राया होती हुई गाड़ी मथुरा पहुँची। मथुरा ष्टेशन पर मियाँ मुराद गाड़ी से उतर कर टहलने और सिगरट का धुआँ निकालने लगे। आपने वहाँ कुछ नाश्ता किया और चट से गाड़ीमें चढ़ बैठे। गाड़ी फिर रवाना होकर अछनेरा जङ्क्शन पर पहुँची। अछनेरे पर मियाँ मुरादने कुली पर असबाब रखवाकर आगरे की गाड़ी बदली।

इस बीचमें कोई विशेष उल्लेख-योग्य घटना नहीं हुई। इसी से लेखककी लेखनी को भी ज़रा आराम मिला। समयपर गाड़ी आगरा ष्टेशन पर पहुँची। मियाँ मुराद अपना असबाब कुलीके सिरपर रखवाकर ष्टेशन के बाहर आये। ष्टेशनपर बहुतसी गाड़ियाँ खड़ी थीं। उन्हीं में से एक गाड़ी किराये कर मियाँ साहब शहर को रवाना हुए। उनका क्या इरादा है? वे कहाँ उतरेंगे? क्या करेंगे? ये सब तो हमें मालूम नहीं, पर उनके साथ-साथ रहने से सब कुछ आपही मालूम हो जायगा।

थोड़ी देर में मुराद अलीकी गाड़ी रावत पाड़े किनारी बाज़ार पार करके फुलट्टी बाज़ार के नाके पर एक बढ़िया मकान के सामने खड़ी हुई। मुरादने गाड़ीवानको किराया देकर विदा किया। मकानकी खिड़की से कोई नीचे की ओर झाँका और फिर लोप होगया। इसके बाद दरवाज़ा खोल दिया गया और मियाँ मुराद मकानके अन्दर दाखिल होगया।

मियाँ साहब कई ज़ीने चढ़कर एक कमरेमें दाखि़ल हुए। कमरा हर तरह झाड़ फानूस और हाँडियों से आरास्ता था। वहाँ एक सुन्दर मसनद के सहारे एक षोडशी सुन्दरी सोलह शृङ्गार किये बड़ी सजधज से बैठी हुई थी। मुराद अली को देखते ही वह अपने आसन से उठकर बोली,—"भाई मुराद! आज बड़ी खु़शक़िस्मती है, जो आपका दीदार नसीब हुआ!"

पाठक! अब तो आप लोग बखू़बी समझ गये होंगे कि, मियाँ मुराद अपनी बहिनके घर तशरीफ लाये हैं। आप की बहिनका नाम प्यारी जान है। वह आगरे की बहुत ही मामू़ली तवायफ़ है। उसकी खू़बसूरतीमें कलाम नहीं, मगर वह गाना उतना अच्छा नहीं जानती, इसी से वह ज़ियादा मशहूर नहीं है। उसकी जो कुछ प्रसिद्धि है, वह उस के शारीरिक सौन्दर्य्य के कारण है। हाँ, नाचने में बेशक उसका कुछ दख़ल है। इन बातोंके सिवा उसमें कई एक औगुण भी हैं। वह परले सिरेकी लालची, झूँठी और मक्कारा है, इसीसे लोग उसे कम चाहते हैं। हाथरसमें इस बातको कोई नहीं जानता कि, मुराद एक प्यारीजान नामक तवायफका भाई है। वहाँके लोग समझते हैं कि, मुराद दीवान साहब के ख़ान्दानमें से है।

प्यारीजानका शरीर इकहरा और क़द मँझोला है। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें विधाता ने इस विचित्र कारीगरी से

बनाई हैं कि उनमें हास्य, रहस्य, प्रेम, कलह, और ईर्षाद्वेषकी झलक मारती है। स्काट नामक एक अँगरेज़ लेखक के विचारानुसार, यदि हम उसे (Fair and false) धूर्त्ता सुन्दरीके नामसे पुकारें, तो बहुत ही उचित होगा। वह जैसा भेष बनाना चाहती है वैसाही बना सकती है और उसी में परिणत हो जाती है। क्षण में रोना और क्षण में हँसना तो उसके बाँएँ हाथका खेल है।

प्यारे पाठको! प्यारी जानके विषयमें इतना तूलतवील लिखने की ज़रूरत इसलिए हुई कि, वह आगे चलकर हमारे उपन्यास की नायिका होने वाली है।

मुराद अलीके बैठ जानेपर प्यारी जानने उससे इस यकायक मुलाक़ातका सबब पूछा। मुराद बोला—

"मैं जिस कामके लिए यहाँ तक आया हूँ, उसे तुम क़यास भी नहीं कर सकतीं, पर इतना समझ लो कि, मैं ख़ासकर तुम्हारे ही लिए आया हूँ।"

अपने निचले होठ को दाँतों तले दबा, गर्दनको ज़रा नीची कर, और उसे दाहिनी ओर झुका कर, प्यारी बड़े नाज़ो अदा से बोली—

"भाई जान! ज़रा साफ़-साफ़ बतलाइये, कि बात क्या है? इस तरह वहम में रखना अच्छा नहीं।"

यह सुनते ही मुराद बोला—"अच्छा, देखें तो तुम्हारी अक़्ल कितनी तेज़ है। सोचकर बताओ तो, वह क्या बात है?"

प्यारी बोली—"सोचने से मुझे तो यही मालूम होता है कि, तुमने किसी आँखके अन्धे, गाँठके पूरे, अक्लके दुश्मन को अपने पञ्जे में फँसाया है। उस चण्डूलको आप मेरे नाख़ो-नखूरों का शिकार बनानेका इरादा रखते हैं।"

दसवाँ परिच्छेद ।

कलकत्ता ।
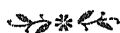
विधाता की विधियाँ बड़ीही गूढ़ और निराली हैं । उस लीलामय की लीलाओं का समझना बड़ा कठिन काम है। उसके कार्य्यों की थाह कौन लगा सकता है ? उस इच्छामयकी इच्छाओंको कौन जान सकता है ? जहाँ नज़र डालते हैं, वहीं उस लीलामय की अदभुत लीलायें दिखाई देती हैं। आप उसे चाहे केवल प्रकृति ही कहें, इससे हमारा कोई हर्ज नहीं। प्रकृति कोई अन्ध, स्थूल और स्वेच्छाचारी शक्ति नहीं। उसके एक-एक अणु, परमाणु, छोटे से छोटे पत्ते और जल-कण से लेकर प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक चीज़ में एक विशाल नियम-बद्धता विराज रही है। तभी तो हम देखते हैं कि, प्रकृति की महिमा से हमारी इस पृथ्वीके आसपास इस से भी बड़े-बड़े ग्रह-उपग्रह अपने-अपने पथोंपर निर्विघ्नतापूर्वक घूम रहे हैं। किसीकी चाल-ढालमें ज़रा भी अन्तर नहीं पड़ता। ठीक

समयपर सूर्य्यका उदय और अस्त होता है। चन्द्रमा नियमानुसर घटता-बढ़ता और उदय होता है। प्रकृतिके नियम में ज़राभी उलट-फेर नहीं होता। जिस प्रकार स्थानका नियम एकतापर निर्भर है; उसी प्रकार कालका नियम भी अपनी वृत्ताकार स्थितिमें विद्यमान है।

अतएव कालचक्र में प्रत्येक वस्तु अपने वृत्ताकार पथ में, एकताके नियम से बाध्य हो, स्वतन्त्रता-पूर्व्वक घूमती है। जिसे लोग बहुधा नाश कहते हैं, वह यथार्थमें रूपान्तर मात्र या अटल परिवर्त्तन रूपी शृङ्खला-चक्रकी एक लड़ीके सिवा और कुछ नहीं है। उसीके अनुसार सुवासित पुष्प-सदन मरुभूमिमें परिणत हो, फिर अपनी पूर्व्व-स्थितिमें आजाते हैं। मेघ-जल ज़मीन पर बरस कर नदियोंमें मिल जाता है। नदियाँ उसे समुद्रमें पहुँचा देती हैं। वहाँ वह भाफ-रूपमें परिणत हो, फिर आकाशमें जाकर मेघका मेघ होजाता है।

इसी तरह इस कालचक्रके नियम से नगर देश आदि भी नहीं बचे हैं। वे विशाल नगर जो पहले अपने देशकी राजधानियोंके रूपमें थे, जहाँ लाखों आदमियोंकी बस्ती थी, जो अपनी शोभा और सौन्दर्य्य के लिये जगत्में विख्यात थे, जिनके देखने मात्रको लोग हज़ारों कोस की राह तय करके और अनन्त कष्ट उठाकर आते थे, जो अपने देश के गौरव और व्यापारके केन्द्रस्थल माने जाते थे, आज खँडहर-रूपमें पड़े हैं। आज उनकी पूर्व्व शोभा नहीं है। आज वे एकदम जनशून्य होरहे

हैं। आज उनमें शृगाल, सर्प, रीछ, बाघ और उल्लू आदि वन्य पशुओं का निवास है। आज वहाँ जाते मनुष्यको भय लगता है। आज उनका नामोनिशान भी नहीं रहा है। उनकी इस दशा से हमें इस बातकी चेतावनी मिलती है कि, जो ऊपर चढ़ता है उसे निश्चय ही नीचे गिरना होता है। घमण्ड का अन्त पतन है, जन्मका अन्त मरण है, कीर्त्तिका अन्त अपकीर्त्ति है, धनवानताका अन्त निर्धनता है। इसके विपरीत जहाँ दलदल थे, जहाँ मनुष्यों का आवागमन कठिन था, जो सिंह रीछ प्रभृति हिंस्र पशुओंके आवास-स्थल थे, जो मलेरिया पित्तज्वर आदि भयङ्कर प्राणघातक रोगोंके केन्द्रस्थल थे, वे आज बड़े-बड़े नगरों के रूपमें परिणत होकर डङ्के की चोट यह कह रहे हैं, कि सबके दिन सदा एकसे नहीं रहते हैं। रातके बाद दिनकी तरह दुःखके बाद सुखका और विपद्के बाद सम्पद का होना अवश्यम्भावी है। जो आज दीनहीन दशा में नज़र आते हैं, वे एक दिन अवश्यही धनैश्वर्य्य-पूर्ण और शक्ति-शोभा-सम्पन्न हो जायँगे।

हुगली नदीके पास जहाँ पहले दलदल था, जहाँ चन्द फूँसकी झोंपड़ियोंके सिवा कुछ नहीं था, वहाँ चारनाकने जब अपना उपनिवेश बनाया था, तब यदि कोई मुग़ल-सम्राट्से कहता कि, उस स्थान पर चन्द ही रोज़में एक ऐसा नगर बस जावेगा, जिसकी टक्करका नगर आजतक भारतमें देखा भी नहीं गया है, जिसके सामने आपके देहली आगरा नगर भी पानी

भरेंगी, और वही नगर अन्तमें भारतवर्षकी राजधानी कहलावेगा, तो कहने वालेकी बात पर शायद ही मुग़ल-सम्राट् विश्वास करते। इतनेहीसे उसकी खैर न होती,उसे वे अवश्य ही पागलखाने भिजवादेते या शूली पर चढ़वा देते। पर आज देख रहे हैं कि, वह असम्भव ही सम्भव होगया है, वह हँसने-योग्य बात ही आज सत्यमें परिणत होगई है।

आज उसी दलदल के स्थानपर कलकत्ता महानगरी बस रही है, जो अपनी पचखनी सतखनी इमारतोंके कारण "महलों का शहर" और भारतवर्ष की एक आँख कहलाती है, जहाँ की चौड़ी-चौड़ी सड़कें, दोनों ओरके फुटपाथ तथा हाईकोर्ट, राइटर्स बिल्डिङ्ग, अलीपुर गारडिन्स (चिड़िया-घर) म्यूज़ियम या अजायब-घर, बुटेनीकेल गार्डिन्स आदि देखते ही दर्शक मुग्ध होजाता है, जो व्यापारके कारण आज तमाम भारतमें मुख्य गिना जाता है। यह नगर हर बातमें बढ़ा-चढ़ा हुआ है। जिस तरह यह नगर विद्याऽध्ययन, कला-कौशल, शिल्प-व्यापार आदिमें प्रथम श्रेणी का है, उसी तरह पाप-कर्मके लिए भी इसका अव्वल नम्बर है। केवल बम्बई इस नगर की बराबरी का दम भर सकती है, मगर बारीकी से तुलना करने पर बम्बई की अपेक्षा कलकत्ते का दर्जा ही ऊँचा मालूम होता है।

कलकत्तेमें दो परस्पर-विरोधी गुणों का समावेश होनेसे ही उसकी विशेष प्रशंसा और रोचकता है।

कलकत्तेके विषयमें हमें इतना जान लेना अत्यावश्यक था, हमारे इस उपन्यासमें इसकी ज़रूरत होगी; इसीसे हमने इतनी क़लम घिसाई की। अब हम कलकत्ते का ज़िक्र यहीं ख़तम करके, अपने मनचले पाठकों को कलकत्तेके एक मुहल्ले में ले जाकर, एक औरही दिलचस्प कैफियत दिखलावेंगे।

आइये, एकबार मछुआ बाज़ारकी ओर चलिये। सामने वह जो दुमञ्ज़िला मकान दिखाई देता है, उसपर गत सप्ताह तो "मकान किराये दिया जायगा" की तख़्ती लटक रही थी, मगर आज वह तख़्ती नहीं है, इससे मालूम होता है कि आज उसमें कोई किरायेदार आगया है। वहांसे मधुर-मधुर गाने की आवाज़ भी आरही है। इस समय रातके आठ बजे हैं, अतः यहाँ सड़क पर खड़ा रहना ठीक नहीं। चलिये, ऊपर चलकर देखें कौन है?

कमरा हर तरहके सामान-आराइशसे आरास्ता होरहा है। एक नौजवान एक क़ीमती क़ालीन पर बैठा हुआ है। उम्र कोई पचीस साल की मालूम होती है। क़द मँझोला और बदन गठीला है। आँखों की पुतलियाँ बिल्ली की तरह कञ्जी और भूरी-भूरी हैं, जिनकी चितवन प्रखर और गूढ़ है। उसके ऊपर के होठ के मोड़ में कुछ अस्वाभाविकता सी है। नाक़ सीधी और नोकदार है। साधारणतः यह नौजवान देखनेमें बदसूरत नहीं मालूम होता। पाठकोंको अधिक देर-तक चक्करमें न डालकर, हम उसका परिचय देदेना ही उचित

समझते हैं। उस जवानका नाम दौलतराम है। वह जाति का खत्री है। ये वही हज़रत हैं, जो गुलाबको धोखा देकर उसके पतिगृहसे निकाल लाये थे और पीछे उसको निद्रावस्थामें उसका ज़र जेवर हथियाकर, उसे अकेली सोती छोड़ नौ दो ग्यारह होगये। ये वही महात्मा हैं, जिन्होंने अपने स्वामी के साथ विश्वासघात करके, उनकी सहधर्मिणी को फुसला-बहकाकर, कुमार्गगामिनी बना दिया। अब आप पुलिस द्वारा पकड़े जानेके भयसे कलकत्तेमें आ डटे हैं।

आपकी बग़लमें एक वेश्या बैठी हुई गाना गारही है और आप धूर्त्तों के सिरताज पियानो बाजा बजा रहे हैं। सामने ही एक छोटीसी काली टेबिल पर कुछ शराब की बोतलें रक्खी हुई हैं। गाना-बजाना भी होरहा है और बीच-बीचमें शराब के प्याले भी उड़ते हैं।

यद्यपि इस मकानमें आये दौलतरामको अभी एक हफ़्ता ही हुआ है; तथापि उसने इस अल्प समयमें ही अपने कमरे को मामूली तौर पर अच्छा सजा लिया है। कितने ही सामान खूब भड़कीले और बेशक़ीमत हैं। सामानोंके देखनेसे साफ़ मालूम होता है कि, इस तरह दिल खोलकर वही शख़्स रुपया खर्च कर सकता है जिसके हाथ हराम का धन लगा हो। मसल मशहूर हैकि, "माले मुफ़्त दिले बेरहम।"

दौलतराम देखनेमें ऊपर से खुश है, मगर उसके भीतर शान्ति नहीं है। उसके चेहरे-मोहरे और प्रत्येक अङ्ग से

अशान्ति और भय का आभास पाया जाता है। वह चित्तकी अशान्ति और मानसिक वेदनाओं के कारण बहुतही दुखी है। इसीसे शान्ति लाभ करनेके लिये शराब और नाच-गाने वगैर: से अपना दिल बहला रहा है।

आमोद-प्रमोदमें रातके दस बज गये। उधर नशेकी अधिकता के कारण दौलतरामके होशहवास ठिकाने न रहे। मगर बेहोशीकी हालतमें भी उसने एक गिलास और भी चढ़ाही लिया। उस गिलासके पीते ही वह एकदम बेसुध होकर गिर पड़ा।

वेश्या तो यह चाहती ही थी, उसने दौलतरामके बेहोश होते ही उसके जेब से चाबी निकाल ली। पीछे उसका सन्दूक़ खोलकर सारा रुपया और ज़ेवर एवं अन्यान्य क़ीमती असबाब निकाल लिया। सब सामान और रुपये पैसे की एक गठरी बना, उसे अपनी बग़ल में दबा, वहाँसे निकल किसी ओर की राह ली।

सवेरे जब दौलतरामका नशा उतरा और उसके होशहवास ठीक हुए तो उसने देखा कि, उसके जेबमें चाबियोंका गुच्छा नहीं है। सारे सन्दूक़ और ट्रङ्क वग़ैर: खुले हुए पड़े हैं। उसका क़ीमती सामान ज़री ज़ेवर ग़ायब है। यह हालत देखकर उसे बड़ा भारी दुःख हुआ। थोड़ी देरके लिये तो वह एकदम पागलसा होगया और अपने भाग्य और कर्म को बारम्बार धिक्कारने और कोसने लगा। उसे उस मक्कार रण्डी पर भी बहुत कुछ ग़ुस्सा आया, मगर वह उसका कर

हो क्या सकता था ? उसका शोक और क्रोध बिल्कुल व्यर्थ था। इससे सिवा अपने खून जलाने के उसे और कोई लाभ नहीं था।

ईश्वर सर्व्वव्यापक और सर्व्वदर्शी है। वह प्राणियोंके सारे शुभाशुभ कर्मों पर नज़र रखता है, और समय पर सबको यथोचित फल प्रदान् करता है। जिस दुष्टने अपने स्वामीके साथ विश्वासघात किया, उसकी बालिका स्त्री को फुसलाकर घर से बाहर निकाल लाया, उसका पीहर सासरे दोनों स्थानोंमें मुँह काला कर दिया, उसका माल असबाब लेकर उसे रेलमें अकेली छोड़ दिया, उसकी यदि दुर्गति हुई तो ठीक ही हुआ। इसे हम ईश्वर के न्यायके अतिरिक्त और क्या कह सकते हैं ? अभी यहीं तक खात्मा न समझिये। यह तो श्रीगणेश है। आगे चलकर देखिये कि, और क्या-क्या होता है। दौलतराम अपने कुकर्मों के फलस्वरूप और क्या-क्या दण्ड भोगता है।

ग्यारहवाँ परिच्छेद।

दौलतराम का अधःपतन।

कलकत्ता अजब शहर है। यहाँ प्रत्येक मनुष्य अपने कारोबार और धन्धों में मस्त है। किसी को किसीसे फ़िज़ूल बात करनेकी फुर्सत नहीं। इस नगरमें पैसे की क़दर है। जिसके पास पैसा है, उसीको आनन्द है; जिसके पास पैसा नहीं, उसे सोलह आने निरानन्द है। पैसे बिना यों तो हर जगह ही मिट्टी ख़राब है, पर कलकत्ते में औरभी अधिक दुर्दशा है। इस नगरमें पैसा ही मनुष्य का सच्चा मित्र है। पैसे से अनेक मित्र होजाते हैं, अन्यथा कोई मुँहसे भी नहीं बोलता।

दौलतरामको अपनी सब धन-सम्पत्ति गँवाकर पेट की चिन्ता हुई। उसने कमरेका साज-सामान अब कौड़ियोंके मोल बेचना आरम्भ किया। आधे दाम भी न मिले। सारे सामानके ९०) रु० उठे। उनमेंसे १५) तो मालिक मकानको किरायेके देदिये। बाक़ी ७५) रुपये लेकर हरिसनरोडकी

धर्मशालामें आकर डेरा लगा दिया। खाने-पीने से निश्चिन्त होकर नौकरी की तलाशमें चल दिया।

दौलतराम साहूकारी हिसाब-किताब और बही-खातेके काममें दक्ष था, इसलिये वह किसी महाजनके यहाँ नौकर होना चाहता था। उन दिनों कलकत्ते में भिखारीदास धर्मजीत की फर्म बड़ी नामी थी। दौलतराम पहले-पहल इसी गद्दीमें गया। वहाँ कितनेही मुनीम गुमाश्ते तकियों पर बड़ी-बड़ी बहियाँ रक्खे हुए अपने-अपने काममें मशगूल थे। कोई रोकड़ उतार रहा था, कोई खाता खतिया रहा था, कोई बीजक उतार रहा था, कोई भुगतान दे-ले रहा था। उनमेंसे एक शख्स उसे खाली दिखाई दिया। वह उसके पास जाकर पूछने लगा—"महाशय! इस गद्दीके बड़े मुनीम साहब कौन हैं?" उस आदमीने अपनी पगड़ी के पेच सम्हाल कर, नाश सेभरी हुई नाक पर बड़ी ऐंठसे चश्मा चढ़ाकर, क़लमको कानमें टाँग कर, दौलतरामकी ओर इस तरहसे देखा, मानो वह एकदम अशिक्षित और असभ्य हो। दौलतरामने उस मनुष्य की ऐसी भावभङ्गी देखकर अपने मनमें ज़रा भी बुरा न माना। उसने उससे फिर कहा कि मुझे बड़े मुनीमजीसे कुछ काम है। उस आदमीने दौलतरामकी बातका यथोचित उत्तर न देकर पूछा—"आपको बड़े मुनीमजी से क्या काम है?" दौलतरामने कहा—"मैंने सुना है कि, आपकी गद्दीमें एक गुमाश्ते की जगह खाली है और मैं नौकरी की

ग्यारहवाँ परिच्छेद ।

दौलतराम का अधःपतन ।

कलकत्ता अजब शहर है। यहाँ प्रत्येक मनुष्य अपने कारोबार और धन्धों में मस्त है। किसी को किसीसे फिज़ूल बात करनेकी फुर्सत नहीं। इस नगरमें पैसे की क़दर है। जिसके पास पैसा है, उसीको आनन्द है; जिसके पास पैसा नहीं, उसे सोलह आने निरानन्द है। पैसे बिना यों तो हर जगह ही मिट्टी ख़राब है, पर कलकत्ते में औरभी अधिक दुर्दशा है। इस नगरमें पैसा ही मनुष्य का सच्चा मित्र है। पैसे से अनेक मित्र होजाते हैं, अन्यथा कोई मुँहसे भी नहीं बोलता।

दौलतरामको अपनी सब धन-सम्पत्ति गँवाकर पेट की चिन्ता हुई। उसने कमरेका साज-सामान अब कौड़ियोंके मोल बेचना आरम्भ किया। आधे दाम भी न मिले। सारे सामानके ९०) रु० उठे। उनमेंसे १५) तो मालिक मकानको किरायेके देदिये। बाक़ी ७५) रुपये लेकर हरिसनरोडकी

धर्मशालामें आकर डेरा लगा दिया। खाने-पीने से निश्चिन्त होकर नौकरी की तलाशमें चल दिया।

दौलतराम साहूकारी हिसाब-किताब और बही-खातेके काममें दक्ष था, इसलिये वह किसी महाजनके यहाँ नौकर होना चाहता था। उन दिनों कलकत्ते में भिखारीदास धर्म-जीत की फर्म बड़ी नामी थी। दौलतराम पहले-पहल इसी गद्दीमें गया। वहाँ कितनेही मुनीम गुमाश्ते तकियों पर बड़ी-बड़ी बहियाँ रक्खे हुए अपने-अपने काममें मशगूल थे। कोई रोकड़ उतार रहा था, कोई खाता खतिया रहा था, कोई बीजक उतार रहा था, कोई भुगतान दे-ले रहा था। उनमेंसे एक शख्स उसे खाली दिखाई दिया। वह उसके पास जाकर पूछने लगा—"महाशय! इस गद्दीके बड़े मुनीम साहब कौन हैं?" उस आदमीने अपनी पगड़ी के पेच सम्हाल कर, नाश सेभरी हुई नाक पर बड़ी ऐंठसे चश्मा चढ़ाकर, कलमको कानमें टाँग कर, दौलतरामकी ओर इस तरहसे देखा, मानो वह एकदम अशिक्षित और असभ्य हो। दौलतरामने उस मनुष्य की ऐसी भावभङ्गी देखकर अपने मनमें ज़रा भी बुरा न माना। उसने उससे फिर कहा कि मुझे बड़े मुनीमजीसे कुछ काम है। उस आदमीने दौलतरामकी बातका यथोचित उत्तर न देकर पूछा—"आपको बड़े मुनीमजी से क्या काम है?" दौलतरामने कहा—"मैंने सुना है कि, आपकी गद्दीमें एक गुमाश्ते की जगह खाली है और मैं नौकरी की

तलाशमें हूँ। अगर वह जगह मुझे मिल जाय तो बहुत बेहतर हो।"

दौलतरामकी बात सुनते ही उस मनुष्यने पूछा—"आप क्या पढ़े हैं? आपने महाजनी काम पहले कहीं किया है?"

दौलतरामने कहा—"मैंने व्यापारी परीक्षा पास की है। हिन्दी और अँगरेज़ी भी जानता हूँ। महाजनी और अँगरेज़ी दोनों तरहके हिसाब-किताब अच्छी तरह कर सकता हूँ।"

यह सुनते ही उस मनुष्यने एक जमादारको बुलाकर उससे कहा कि, इनको बड़े मुनीमजीके पास ले जा। जमादार दौलतरामको अपने साथ ले चला, लेकिन राहमें रुककर कहने लगा—"हुजूर! मालिक तो इस समय काममें लगे हुए हैं। उन्हें आज ज़रा भी फुर्सत नहीं, अतः आज उनसे मुलाक़ात नहीं हो सकती। मुझे पहले इस बातका ख़याल नहीं था, इससे आपको यहाँ तक हैरान किया, माफ कीजिए।"

दौलतराम तो स्वयं ही धूर्त्त था, वह जमादारकी चालको फौरन ही ताड़ गया। उसने मनमें समझ लिया, कि जमादार साहब की भेंट-पूजा चढ़ाये बिना मुनीमजीके दर्शन होने कठिन हैं। इसलिए उसने सोच-समझकर अपने बचे हुए द्रव्यमें से ५) रुपये बतौर दक्षिणाके जमादारको भेंट किये।

आजकल यह दक्षिणा 'कर' के समान आवश्यक है। यदि

आप अपने शरीर-रूपी मालको धनी पुरुषोंके महलमें प्रवेश कराकर उनके सामने उपस्थित करना चाहेंगे, तो आपको यह "कर" "अथवा चुङ्गी" अदा करनी ही होगी। इस कर और सरकारी कर में यही अन्तर है कि, यह कर धनी लोगों के पास न पहुँचकर उनके नौकरोंके पास रह जाता है और सरकारी कर सरकारी ख़ज़ानेमें पहुँच जाता है। यह दक्षिणा कितने ही अजायबघरों या चिड़ियाघरोंमें भी दी जाती है। इस दक्षिणा के दे देनेपर ही लोग सिंह, भालू, चीते, मोर, तोते आदि पशु पक्षियोंको देख सकते हैं। संक्षेपमें, यह दर्बान अथवा द्वारपाल वगैरःकी ऊपरी आमदनी है। आप इसे चाहे कर कहें, चाहे दक्षिणा।

ख़ैर, जमादारने दौलतरामको बड़े मुनीमजीके पास पहुँचा दिया। दौलतराम राम राम करके बैठ गया। मुनीमजी ने उस से कई ऐसे प्रश्न किये, जिनके जवाब देनेमें दौलतराम को बड़ी भारी कठिनाईका सामना करना पड़ा। दौलतरामके स्पष्ट उत्तर न देने से मुनीमजी के दिल में कुछ शक हो गया। अतः उन्होंने दौलतरामसे ज़मानत देने के लिए कहा, मगर दौलतराम ज़मानतका प्रबन्ध न कर सका; इस लिए मुनीमजीने दौलतरामको निकल जाने का हुक्म दिया।

एक हफ़्ते तक दौलतराम नौकरी की तलाश में इधर-उधर भटकता रहा, पर नतीजा कुछ न निकला। इस सप्ताह

के अन्तमें उसकी पूँजी में केवल ५०) रुपये ही रह गये। यदि वह चाहता, तो इन पचास रुपयों से कोई छोटा-मोटा धन्धा कर सकता था। मगर दौलतरामके दिमाग़में यह बात कैसे समा सकती थी? बकौल गोस्वामि तुलसीदासजी के "जाकों प्रभु दारुण दुःख देहीं, ताकी मति पहले हर लेहीं" परमात्माने उसकी अक़्लपर पर्दा डाल दिया था। क्योंकि अभी उसे उसके किये का फल भुगाना था—उसके ऊपर विपत्ति के पहाड़ ढहाने थे।

प्रायः दस रोज़के बाद, जबकि वह चितपुर रोड़में घूम रहा था, उसे एक युवक मिला। वह साफ़-सुथरे कपड़े पहने हुए था। देखने में भला मानुस मालूम होता था। उसने दौलतराम से आदाब-बन्दगी करके कहा—"महाशय! आप इस शहर में नये आये हुए मालूम होते हैं।" दौलतराम ने उत्तर दिया—"हाँ जनाब! आपका ख़याल ठीक है। मगर आजके पहले तो मेरी आप से कभी मुलाक़ात ही नहीं हुई।"

उस युवक ने कहा—"बड़े ही आश्चर्य की बात है कि, आप मुझको न पहचान सके। मैं आपके पिता की माँ की बहिनका नाती हूँ। आपका चित्त ठिकाने नहीं है। आप एक दम रञ्जमें डूबे हुए हैं, इसी से आप मुझे नहीं पहचानते। कोई पन्द्रह साल हुए जब मैंने आपको देखा था। उस समय आप बहुत छोटे थे। आपको इस दशामें देखकर मुझे बड़ा

रक्ष है। मैं भी यहाँ रोज़गारकी तलाशमें आया हूँ। आप को पुकारने के पहले मुझे कुछ शक था कि, शायद आप और कोई हों, पर ज्योंही मैंने आपको नज़दीक से देखा, मेरा सारा शक रफ़ा हो गया।"

यह कहकर वह अपरिचित पुरुष आँखों में आँसू भरकर दौलतरामके गले लगकर मिलने को आगे बढ़ा। दौलतराम मनमें प्रसन्न हुआ। उसने समझा कि परमात्मा ने उस पर दया करके उसे एक कुटुम्बीसे मिला दिया है। अतः वह भी गद्गद् होकर उसके गले से लगकर चिपट गया। पीछे दोनों सच्चे कुटुम्बियोंकी तरह राह में चलने लगे। थोड़ी देरके बाद वह अपरिचित मनुष्य पान ख़रीदने के बहाने दौलतरामसे अलग होकर न जाने कहाँ ग़ायब होगया।

कुछ क्षणके बाद दौलतराम ने अपनी जेब टटोले, तो वे ख़ाली पाये। उसे बड़ा भारी दुःख और आश्चर्य हुआ। वह सिर पीट-पीट कर रोने और बिलखने लगा। इस तरह दौलतराम द्रव्यहीन, मित्रहीन और उत्साह-विहीन होकर गहर गम्भीर दुःखसागर में डूबता-उतराता और अपने भाग्य को कोसता हुआ आगे बढ़ा।

बारहवाँ परिच्छेद।

दौलतराम के पतन का विकाश।

पूर्व्वविर्णित स्थितिमें अभागा दौलतराम कलकत्ते की सड़कोंपर ठोकरें खाता हुआ मारा-मारा फिरने लगा। उस समय उसके नेत्रों के सामने अन्धकार छाया हुआ था। पैर उठाने से नहीं उठता था। एक-एक पैर मन-मन भरका हो गया था। जिधर आँख पसार कर देखता था, उधर ही उसे सिवा शोक और रञ्ज के कुछ न दिखाई देता था। कलकत्ते के सदृश मनुष्यों से भरा-पूरा नगर उसे जनशून्य मरुभूमिसा प्रतीत होता था। वह अत्यन्त दुःखी होगया था, इसलिए उसने आत्महत्या करनेका पक्का विचार कर लिया। अपने इस इरादेको पूरा करने के लिए वह हुगली नदी की ओर जा निकला। वहाँ पहुँच कर वह पुलके ऊपर चढ़ गया। बीच में पहुँच कर वह कूदना ही चाहता था कि, यकायक वह पीछे की ओर देखने लगा।

हुगली के दाहिने किनारे उसे कलकत्तेका दृश्य बहुत ही मनोहर मालूम हुआ। बड़े-बड़े महलोंकी क़तार, जनरल पोष्ट आफिस की इमारत के ऊपर के गुम्बद, क़िले के मैदान की लाट आदि देखकर उसकी आँखें चकरा गईं और शीघ्र ही होनेवाली आत्महत्या भी टलगई।

कुछ देर के बाद उसने फिर आत्महत्या करना ही उचित समझा। अन्त में वह नदी में कूद ही तो पड़ा। परन्तु जिसे दारुण पापोंका फल भोगना होता है, उसे मृत्यु भी अङ्गीकार नहीं करती। इसी कारण उसके कूदते ही पोर्ट कमिश्नर की दरियाई पुलिसने उसे देख लिया। फौरन ही एक किश्ती उसके बचाने के लिए भेजी गई। एक आदमी भी कुदाया गया। वह ग़ोता मारकर नदीके तलमें पहुँचा। क्षणभर बाद ही दो सिर दिखाई देने लगे। देखनेसे मालूम होगया कि, मरनेवाला और बचानेवाला दोनों ज़िन्दा हैं। अतः रस्से फेंके गये और उनकी सहायता से दोनों के दोनों जहाज़ पर चढ़ा लिये गये। जहाज़के डाक्टरने दौलतराम की टाँग पकड़कर घुमाने का हुक्म दिया। इस से उस के अन्दर घुसा हुआ पानी बाहर निकल गया और उसे होश हो गया। उसने फिर भी आत्महत्या करनी चाही, मगर सफलता न हुई। पुलिसने उसे अस्पताल भेज दिया। अस्पताल में रहनेके दो दिन बाद ही जब सिविल सर्जनने उसे उठने-बैठने और चलने-फिरने के लायक़ देखा, तो उसे अपनी करनी का

फल भोगने के लिए मैजिस्ट्रेट के सामने पेश किये जाने का हुक्म दे दिया।

यथासमय वह प्रेसीडेन्सी मैजिस्ट्रेट के इजलास में पेश किया गया और उसपर आत्महत्या या खुदकुशी करने का जुर्म लगाया गया। जब मैजिस्ट्रेट ने उससे कुछ सवाल किये, तो वह पागलों के समान चुपचाप खड़ा हो गया। उस ने किसी भी सवाल का जवाब न दिया। तब मैजिस्ट्रेट ने उसे सिविल सर्जन के पास भेजकर उसकी परीक्षा कराई। सिविल सर्जन ने दो चार मामूली सवाल करके ही जान लिया कि, यह पागल नहीं है, किन्तु जान-बूझकर पागल बनना चाहता है। उन्होंने अपनी परीक्षाका फल ज्योंका त्यों सरटीफिकेट में लिख दिया। सरटीफिकेट देखते ही मैजि-स्ट्रेट ने दौलतराम से कहा—"सिविल सर्जन साहब के कथ-नानुसार तुम पागल नहीं हो, पर यदि तुम अपने तईं पागल कहते हो, तो मैं तुम्हें पागलखाने भेजे देता हूँ। दैवात् यदि तुम मरने से पहले अच्छे हो गये, तो मैं फौरन ही फैसला करूँगा।"

मैजिस्ट्रेट की ये बातें सुनतेही दौलतराम का पागलपन हवा होगया। होश-हवास दुरुस्त होगये। फिर तो उसने हाकिमके सभी सवालोंका जवाब दे दिया। अन्त में उसे तीन मासकी कड़ी कैद की सज़ा का हुक्म हुआ। पुलिस उसके हाथों में हथकड़ी डालकर

उसे प्रेसीडेंसी जेल में ले गई। वहाँ उसने अपनी सज़ा भोगी।

अब हम दौलतरामको जेल में ही छोड़ देते हैं। जबतक वह अपनी सज़ा भोगकर जेल से न छूटेगा, तबतक उस की राह देखेंगे। क्योंकि हमें यह देखना है कि, उसके भाग्य में और क्या लिखा है।
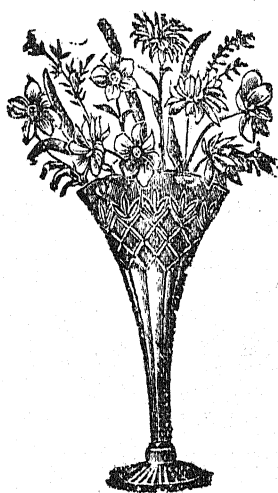
तेरहवाँ परिच्छेद ।

नव्वाब साहब का पुनरागमन ।

रातका समय है । नवाब साहब अपने कमरे में सोफे पर आराम फर्मा रहे हैं । इस वक्त वह एक ढीली मुहरी का पायजामा और तंजेब की एक कमीज़ पहने हुए हैं । कमीज़के ऊपर एक ज़री के कामकी जाकट है, जिसमें नये फैशनके सुनहरी बटन लगे हुए हैं । जाकट उनके बदनपर अच्छी मालूम होती है । सोफेके नीचे मखमली फूलदार लखनौए जूते पड़े हुए हैं । सिरपर एक जड़ाऊ टोपी रक्खी हुई है ।

कमरे के चारों ओर इत्र गुलाबका छिड़काव किया गया है, जिससे सारा कमरा महमह-महमह कर रहा है । सामने ही एक आलमारी में दिल-दिमाग़ में तरी और ताक़त लानेवाले अनेक तरहके सुगन्धित शर्बत रक्खे हुए हैं । सोफे के सिरहाने एक तीन पाये की टेबिलपर जिञ्जर, सोडा, लेमनेड, आईस—बर्फ प्रभृति मीठे खट्टे और शीतल सामान

रक्खे हुए हैं। कमरे में जगह-जगह बिजली के लेम्प जल रहे हैं। पढ़ने लिखनेकी मेज़पर एक बहुत ही बढ़िया फैशनेबिल लेम्प रखा हुआ है। उसमें बिजलीका लट्टू जल रहा है। रोशनी इतनी तेज़ है कि, एक खोई हुई सूई भी आसानी से मिल सकती है। छत में दो बिजली के पङ्खे बड़े ज़ोर से चल रहे हैं।

कोई भी उस कमरेमें न आया, तब तो वे एकदम अधीर होकर सोफ़े से उठ बैठे और घण्टी बजाई। घण्टी के बजते ही एक नौकर ज़र्क़-बर्क़ पोशाक पहने हुए सामने आ खड़ा हुआ। नौकर हाथ जोड़ सिर नीचा करके बोला—"हुज़ूर, इर्शाद?"

नवाब—अभी तक मुराद क्यों नहीं आया? देखो तो क्या बात है?

नौकर—हुज़ूर! वे तो अभी तक नहीं आये। हुक्म हो तो उनके घर जाकर देखूँ, क्या बात है।

नवाब साहबने "अच्छा जाओ" कहा ही था कि, फिर कुछ ख़याल आगया तो उसे बुलाकर कहने लगे—"रसूल ख़ाँ! तुम्हारे जाने की ज़रूरत नहीं। तुम यहीं ठहरो। तुम्हारी ज़रूरत होगी।"

यह हुक्म सुनकर मियाँ रसूल दरवाज़ा बन्द करता हुआ बाहर निकल गया।

रसूलख़ाँ के जाने बाद नवाब साहब की बेचैनी औरभी बढ़ गई। वे सोफ़ेसे उठकर फिर टहलने लगे। एक पुस्तक

उठाई, पढ़ना चाहा, पन्ने उलटे, मगर मन न लगा तो किताब टेबिल पर पटक दी और उस खिड़की के पास जा खड़े हुए जो सड़क की ओर झाँकती थी। वहाँ से वे सड़क की ओर आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगे। मगर कोई न दीखा, तो मनहीमन कहने लगे—"बात क्या है? कुछ समझमें नहीं आता। क्या ज़मीन फट गई और वह उसमें समा गया। उसने ठीक नौ बजेका वादा किया था, मगर अब तो दस बजने को आये।" वह इस तरह बुदबुदाही रहे थे कि, घोड़ोंकी टापोंकी आवाज़ सुनाई दी। कुछ देरके बाद देखा कि, एक गाड़ी महल की तरफ़ आरही है। यह देखते ही उनका दिल धड़-कने लगा। उनकी मुरझाई हुई आशालता फिरसे हरी होगई। उनका सारा शरीर गर्म पानी की तरह उबलने लगा। मारे खुशीके उछलने लगे। पर अफसोस! वह गाड़ी महलके अन्दर न आकर महलके फाटक के बाज़ू वाली सड़क से एक दूसरी ओर को मुड़ गई। अपनी चित्त-वृत्तियोंको इस तरह धूलमें मिलती देख उन्हें ऐसा मालूम हुआ, मानों किसीने मिला हुआ अमृत का प्याला उनके सामने से हटा लिया। वह अत्यन्त दुःखित और विस्मित हो मनही मन कहने लगे—"शैतान गाड़ी वाला! साला बड़ा बदमाश है! मालूम होता है, किसीने मुझे चिढ़ानेके लिए गाड़ी इधरसे निकाली थी। कहाँ गई हरामज़ादी गाड़ी!" इसतरह दुःखी होकर नवाब साहब निर्जीव गाड़ी और गाड़ीवानको

गालियाँ देते हुए अपने हाथका सहारा लगाकर फिर सोफे पर लेट गये।

पाठक! नवाब साहबको यहीं छोड़िये और चलकर देखिये कि, मियाँ मुराद क्या कर रहे हैं।

हाथरसके एक मामूली से मकान में दो व्यक्ति बैठे हुए हैं। उनमें एक पुरुष और दूसरी स्त्री है। पुरुष देखनेमें धूर्त्तराज मालूम होता है; मगर स्त्री खूबही सुन्दरी है। उसके अङ्ग-प्रत्यङ्गों से खूबसूरती टपक रही है। उसके ज़रा-ज़रा चलते हुए होठोंके देखनेसे रसिक पुरुषोंको ऐसा भान होता है, मानों वे चुम्बन किये जानेके लिये किसीको अपने पास बुला रहे हैं।

दोनों स्त्री पुरुष प्रसन्न हैं। वे आपसमें हँस हँसकर बातें कर रहे हैं। कुछ देरके बाद स्त्रीने अपनी सन्दूक खोलकर एक नीली पोशाक निकाली। उसे पहन कर वह आईने के सामने खड़ी होगई और मुरादसे पूछने लगी—"क्यों भाई, मुझे यह पोशाक कैसी लगती है?"

मुराद—अगरचे यह पोशाक बहुतही उमदा और नफीस है, मगर रातमें बिजली की रोशनी के सामने, उसका पीला अक्स इसपर पड़नेसे, यह अच्छी न मालूम होगी। बेहतर हो, अगर तुम हरी रेशमी पोशाक पहन लो। वह इस वक्त ग़ज़ब का काम करेगी।

स्त्री—हरी पोशाक तो फ़क़ीराना लिबास है। मैं क्या

नवाब के पास जोगन बनकर जा रही हूँ ? मैं तो उस नालायक़ पर जादू डालनेके लिये जारही हूँ। अगर इब्तदा ही ऐसी होगी तब तो काम बन चुका !

मुराद—तेरा फ़क़ीर जैसा दिखना वैसाही नामुमकिन है, जैसा कि एक मोर का कव्वा दिखना। तेरी शैतान नज़रें फ़क़ीरी का भण्डाफोड़ कर देंगी। ख़ुदाने तुझे हाथोंमें ख़ाक मलनेके लिये नहीं भेजा, बल्कि हिना और केवड़ा मलनेके लिये भेजा है। सच तो यह है कि, तू बेगम भूपाल होनेके लायक़ है।

स्त्री—मैं भूपालकी बेगम बनना तो हरगिज़ पसन्द न करूँगी। मैंने सुना है कि वहाँ मर्द ही नहीं हैं।

यह फ़िक़रा सुनतेही मुराद हँस पड़ा और हँसते-हँसते लोटपोट होगया।

स्त्री फिर बोली—"देर हुई जारही है। अब मुझे जल्दी-जल्दी अपने सब औज़ार पैना लेने चाहिएँ। सबसे पहला वार तो मेरी पोशाक की चमक-दमक का होगा। मगर अभी तक उसका ही कुछ ठीक नहीं है।

मुराद—मेरी राय नाक़िसमें, अगर पारसी साड़ी पहन चलो, तो बहुत जल्द कामयाबी होगी।

स्त्रीने मुरादके कहनेसे पारसी साड़ी ही ज़ेबतन करली। वह खुली भी खूब। आइनेने भी इस बातको मञ्जूर कर लिया। इसके बाद ज़ेवरका ज़िक्र छिड़ा। पारसी लेडियाँ मुसल्मान

स्त्रियोंको तरह ज़ेवर नहीं पहनतीं। मगर उस औरतने साड़ी तो पारसी पहनली, लेकिन ज़ेवरोंके सम्बन्धमें उसके विचार मुसल्मानी ही रहे। उसने कानोंमें वाले, हाथोंमें चूड़ियाँ, गलेमें चम्पाकली और मोहनमाला प्रभृति गहने पहन लिये।

इसके बाद वह फिर आईनेके पास गई। वहाँ जाकर उसने आँखों में सुरमा और माथे पर मनोमोहक काली बिन्दी लगाई। साथ ही अपनी भौंहें काली कीं।

अन्तमें उसे पूर्ण विश्वास होगया कि, नवाबके चित्तरूपी क़िले पर फतह पानेके लिए वह हर तरह से ठीक है। फिर भी आइनेके पाससे हटते-हटते उसने अपनी 'ठोड़ी पर एक काला तिल बना लिया। इस वक्त उसके गोरे मुँह पर काली बिन्दी और ठोड़ी का तिल ग़जब ढाह रहे थे। सब तरह से सज-धज कर वह मुराद के सामने आ खड़ी हुई।

मुराद—अब जल्दी करो। नौ बज गये। नवाब का तो दम निकल रहा होगा। एक-एक मिनिट बरसोंके बराबर मालूम होती होगी।"

स्त्री—बस और क्या चाहिए? बिना इन्तज़ारी के लुत्फ़ नहीं, इन्तज़ारी की वजह से बेचैन होनेपर ही तो आदमी जल्द फँसता है—जल्दी से क़ाबूमें आता है।

मुराद—आपके कहने से तो यह मालूम होता है, कि देरीमें फायदा है। इन्तज़ारी करानेसे मतलब बनता है।

वक्त पर जानेसे कोई मतलब नहीं निकलता। खैर, अब हम लोग ८॥ बजे चलेंगे।

स्त्री—हाँ, आधे घण्टे की देरही अपने हक़में मुफीद होगी। इससे ज़ियादा देर करनेमें, बहुतही ज्यादा बेचैनी की वजह, नाराज़ी का डर है।

ठीक साढ़े नौ बजे दोनों धूर्त्त व्यक्ति गाड़ी पर सवार हुए। इशारा पाते ही कोचवानने घोड़ों की रास हाथमें ले हण्टर फटकारा। बातकी बातमें गाड़ी नवाब साहबके महल के सामने जा पहुँची। कहावत मशहूर है कि पलमें प्रलय होती है। मौत हरदम मनुष्य के सिर पर खेला करती है। यहाँ भी ऐसा ही हुआ। गाड़ी घूमकर ज्योंही महलके फाटकमें घुसना चाहती थी कि, गाड़ी की धुरी तड़ से टूट गई। धक्के खाकर सवारियाँ आपसमें लड़ गईं। गाड़ी चूर-चूर होगई। मुराद अपनी साथिन समेत बेहोश होकर नीचे गिर पड़ा। गाड़ीका एक पहिया मुरादके ऊपर होकर निकल गया। मुराद का ढेर होगया। प्राणपक्षी पिंजरेसे उड़ गया। मियाँ मुराद अपने कुकर्म्मों का जवाब देनेके लिये यमसदन के राही हुए।

मुराद को इस तरह अचानक मरते देखकर हमारे हृदयमें वेदना होती है, पर ऐसे पापियों का अन्त प्राय: इसी तरह हुआ करता है। अच्छा हुआ, अगर वह और कुछ दिन जीता, तो पापकी गठरी और भी भारी होती। वह जैसा

था, वैसीही उसकी मृत्यु हुई। चलो, हमें भी एक पापी से निजात मिली।

मुराद की साथिन नालीमें गिरी थी, इससे उसके चोट न आई। कुछ खराशी आईं, जिनसे शरीर का चमड़ा छिल गया। और किसी तरह का नुक़सान न हुआ।

जिस वक्त घटना घटी, उस वक्त नवाब साहबकी आँखें सड़क की ओर ही थीं। गाड़ी के टूटने और लोगोंके चीख़ने-चिल्लाने की आवाज़ सुनकर, नवाब साहब कुछ आदमी साथ लेकर शीघ्रही घटनास्थल पर आ मौजूद हुए। मशालकी रोशनी में मुराद का भयानक रूपसे मरण और उसके पासही एक खूबसूरत औरत को पड़े देख सब लोग किं कर्त्तव्य विमूढ़ होगये। चन्द मिनिट तक तो वे सब हक्के-बक्के से होकर एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

उस समय नवाब साहब की चित्तवृत्तियों की क्या दशा हुई होगी, इसे पाठक स्वयं ही अनुमान कर सकते हैं। इस बातके समझाने के लिये लेखक को अपनी क़लमको तकलीफ़ देनेकी ज़रूरत नहीं। नवाब साहब हिम्मत करके मुराद की लाश को अपने महल के बाहरी हिस्से में रखनेका हुक्म देकर, उसकी साथिनको उठवाकर अपने महलके बैठकख़ाने में लिवा ले गये।

चौदहवाँ परिच्छेद।

मुक्ति।
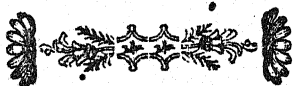
उधर देखिये पाठक! सामने की सड़क पर एक मोटर कैसी तेज़ी से दौड़ी चली जारही है! वह क्षण-क्षण बस्ती से बाहर और जन-समुदाय से दूर होती जारही है। मोटर न कहीं ठहरती है, न रुकती है, सीधी अपना रास्ता नाप रही है। मोटर की दौड़ की तेज़ी से राह-बाट, वृक्ष, क्षितिज प्रभृति सभी बड़ी तेज़ीसे घूमते हुए नज़र आरहे हैं।

पाठको, इस मोटर के विषयमें अधिक कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। आप लोग स्वयं ही समझ गये होंगे कि, यह कौनसी मोटर है। यह वही मोटर है, जिसमें राजकुमार की प्रिय भगिनी गंगाबाई या बाबू ब्रजलाल की भावी पत्नी सवार है। दुष्ट नक़ाबपोश, जिनका ज़िक्र पहले आ चुका है, मोटर को हवा की तरह उड़ाये लिये जा रहे हैं।

मोटर गाड़ी इस समय देहली के निकट पहुँच गई है। उसने देहली की सड़क छोड़कर अब मेरठ की सड़क पकड़ ली है। सामने से एक मोटर देहली की ओर आरही है। दिल्ली से २ मील की दूरी पर, मेरठ की सड़कपर, दोनों गाड़ियों का मिलान हुआ। ज्योंही वे एक दूसरी के पास से गुज़रने को हुईं कि, दोनों ड्राइवरोंने गाड़ियोंको टक्कर से बचानेके लिये अपनी-अपनी गाड़ी की चाल मन्दी करदी। इस मौक़े पर गंगाबाई "मुझे कोई बचाओ, भगवान के लिये मेरी रक्षा करो" कहकर ज़ोरसे चिल्लाई। यह देखकर गंगाबाई की मोटर के ड्राइवर ने अपनी मोटर सड़क से नीचे उतार दी, जिससे कोई उसकी आवाज़ न सुन सके। मगर देखनेवाले को सन्देह होता था कि, मोटर कहीं गड्ढे में न गिर पड़े। किन्तु ड्राईवर अपने काममें खूबही दक्ष था, इससे ऐसी घटना न घटी।

इस समय रात्रि का अवसान हो चुका था। तारकायें सूर्य्य की अवाई जानकर शर्मके मारे अपना मुँह छिपा-छिपाकर लोप होती जाती थीं। दो चार धीठ तारकायें टिमटिमा रही थीं। आकाशमें लाली छागई थी। सूर्य्य भगवान् अपने आलोकसे पृथिवी को आलोकित करने वाले ही थे। ठीक ऐसेही समय गाड़ीसे फिर एक दुःखपूर्ण शब्द सुनाई दिया।

दूसरी बार फिर दुःखपूर्ण शब्द सुननेसे मेरठ से आने-

वाली मोटर की सवारियोंको सामने की मोटर के सवारों पर सन्देह हुआ। उन्होंने अपनी मोटर को फिर मेरठ की ओर घुमाकर दूसरी मोटर का पीछा करना चाहा और अपनी मोटर की स्टीम एकदम तेज़ करदी। दोनों मोटरें सर्राटे भरने लगीं। पिछली मोटर अगली को पकड़ना चाहती थी और अगली उसके हाथ न आना चाहती थी। कुछ देर बाद आगेवाली मोटरकी चाल मन्दी हुई, तो पीछे वालीने ज़ोरसे आगे बढ़कर उसे पकड़ लिया। अब क्या था? दोनों ओर के आदमी नङ्गी तलवारें ले लेकर कूद पड़े। अब लगी होने लड़ाई। इस समय सूर्य्य भगवान् कुछ ऊपर चढ़ आये थे, इसलिये उनके प्रकाशमें तलवारें चमाचम चमकने लगीं। कुछ देरमें मेरठ से आनेवाली मोटर के सर्दारने लड़की को लेकर भागनेवाली मोटरके सर्दारके हाथमें ज़ख़्म पहुँचाकर क़ैद कर लिया। अपने सर्दारको इस अवस्थामें देखकर उसके साथी उसी समय जिधर सींग समाया भाग गये। अपने शत्रुओं की यह दशा देखकर गंगाबाई मारे प्रसन्नताके पीपलके पत्तेकी तरह हिलने लगी। अब उसे अपने बचाव की आशा होगई—जीमें जी आया। थोड़ी ही देरमें सरकारी सवारों की मदद से भागे हुए दुष्ट भी पकड़ लिये गये। सभी हाथ पाँव बाँध कर गङ्गाबाई वाली मोटर में डाल दिये गये। गंगाबाई रक्षा करनेवाली मोटरमें बैठ गई। इसके बाद दोनों मोटरें देहली की ओर रवानः हुईं। दो

घण्टे बाद वे दोनों ही अपने निश्चित स्थान पर पहुँच गईं। अपराधी देहली पुलिस के सिपुर्द कर दिये गये।

गङ्गाबाई एक अमीर रईसकी लाड़ली बेटी थी, हाथोंमें पली थी। उसने दुःख स्वप्नमें भी न देखा था। कभी घर से बाहर क़दम न रक्खा था। इसलिये वह इस विपत्ति को देखकर पागल होगई। जिस समय उसे मण्डपमें आग लगने, नक़ाबपोशों के उसे लेकर भागने, राहमें मोटरोंकी दौड़ होने और अन्तमें तलवारें चलनेकी बात याद आई, उसके हृदयका पेन्डूलम ज़ोर-ज़ोरसे हिलने लगा। दिमाग़में गरमी चढ़ गई। उसका चित्त एकदम बिगड़ गया। वह अपने दिलको अपने क़ाबूमें न रख सकी। वह पागल होगई थी या नहीं, इस बातको तो भगवान जाने, पर इतना अवश्य था कि वह बिल्कुल ही न बोल सकती थी। इसीसे वह पागल समझ ली गई।

ऐसी हालतमें उसे डाक्टर के हवाले कर देने के सिवा और उपाय न सूझा, इस लिये वह अस्पताल भेजदी गई। डाक्टरने उसकी परीक्षा करके कहा—"इसके दिलको भारी सदमा पहुँचा है, इसीसे इसकी ऐसी दशा हो रही है। खूब अच्छी तरह चिकित्सा होनेसे इसे २ मासमें आराम हो सकता है।

गङ्गाबाई तो कुछ बोलती ही न थी, अपराधी भी कोई पते की बात बताते न थे, उनका सर्दार उसे अपनी स्त्री

कहता था। मगर उसकी बात पर किसी को विश्वास न हुआ। इसलिये यह निश्चय हुआ कि, जब तक गङ्गाबाई की तबियत ठीक न हो जाय, उसके होशोहवास ठीक न हो जायँ, वह अच्छी तरहसे बोलने न लगे, तबतक मुक़दमा मुल्तवी रक्खा जाय और अपराधी ज़मानत पर छोड़ दिये जायँ।

अपराधियोंके जानने की विशेष चिन्ता न करके अभी उनसे अपरिचित रहना ही अच्छा है। थोड़े दिनों में आपसे आप सारा झगड़ा फूट जायगा—सारा भेद मालूम हो जायगा। फिर भी हम अपने पाठकों को इतना बताये देते हैं कि, अपराधियों के मुखिये का सम्बन्ध किसी राज घराने से है। उसे इस तरह छिपकर घूमनेका व्यसनसा है। पूछने पर वह अपना नाम आसफ़ख़ाँ और अपने तईं नव्वाब रामपुरके राज्य का एक भारी रईस बतलाता है।

वह गङ्गाबाई को इस तरह क्यों हर लाया? उसे इस तरह ले आने से उसे क्या लाभ था? वह उसे अपने लिये हर लाया था अथवा किसी और के लिए? उसने ऐसा आईन-विरुद्ध निन्दनीय कार्य्य क्यों किया? इन प्रश्नोंका उत्तर बहुत कुछ दिमाग़ लड़ानेपर भी किसी की समझ में न आया।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद।

आरोग्य लाभ और पुनर्मिलन।
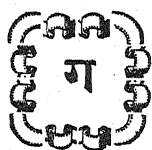
गङ्गाबाई के इस प्रकार दुष्टों के पञ्जे से छुटकारा पानेकी खबर उसके भाई राजकुमार तथा उसके माता-माता किसी को भी न मिली। इसके कई कारण थे:—

(१) गङ्गाबाईका पागलपन और उसका एकदम चुप रहना—किसी से कुछ भी न कहना।

(२) गङ्गाबाई के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट हाथरस को पुलिस को लिखाई गई थी, उसको कुछ भी सूचना देहली पुलिस को दी न गई थी।

(३) गङ्गाबाईको दुष्टोंके हाथसे बचानेवाला अपना परिचय सर्व साधारण को दिया न चाहता था। इस कारण यह समाचार सम्बादपत्रोंमें छपाया न गया।

(४) गङ्गाबाई के पिताने अपनी लड़की के गुम होजाने की बात किसी भी अखबार में न छपाई थी, क्योंकि वह इस में अपनी बेइज्जती या मानहानि समझते थे।

(५) किसी सम्बादपत्र ने भी इस घटना के जानने की चेष्टा न की। उस समय के सम्बाद पत्रों की ऐसी ही निराली स्थिति थी।

उपरोक्त कारणों से एक महीने तक गङ्गाबाईका समाचार किसी को भी मालूम न हुआ। इसी समयमें राजकुमार अपनी प्राणेश्वरी गुलाब से अलग होकर आगरे पहुँचा। वहाँ उसे अपने एक मित्र से, जो अपने छोटे भाईकी शादीमें दिल्ली गया था, एक युवती के दुष्टों के हाथों से मुक्ति पाने की खबर मिली। इस बात के सुनते ही वह पहली ट्रेन से दिल्ली को रवाना हुआ। वहाँ पहुँचते ही वह सिविल सर्जन से मिला और उनसे लड़की के दिखा देनेकी प्रार्थना की। सिविल सर्जन साहब दयालु थे, अत: उन्होंने फौरन ही मिलने की इजाज़त दे दी। पर वह यह न चाहते थे कि, राजकुमार यकायक रोगिणी के पास चला जावे।

गङ्गाबाई की सूरत-शकल मारे मुसीबतों के एकदम बदल गई थी, फिर भी राजकुमार ने उसे दूर से देखकर ही पहचान लिया। उसे देखते ही वह अपने मनोवेग को रोक न सका और डाक्टरकी सम्मतिके विरुद्ध उसके पास पहुँच गया और फौरन ही उस का हाथ पकड़ कर बोला—"गङ्गाबाई! परमात्मा को धन्यवाद है कि, आज हम तुम फिर मिले!"

भाईको देखते ही गङ्गाबाई पहचान गई और उसके गले से लिपट गई। कुछ देरतक आनन्द-मग्न रहने के बाद उसे

बिलकुल होश होगया और वह अच्छी तरह बातचीत करने लग गई। राजकुमार के अचानक मिलने के आनन्द से उसके पहले के मनोविकार शान्त होगये। डाक्टर साहब इस नतीजे को देख बड़े प्रसन्न हुए, क्योंकि उन्हें इसके विपरीत आशा थी। डाक्टर साहब एक पर्दे की गाड़ी मँगवा, उस में भाई बहिन समेत सवार हो, डिपटी कमिश्नर के बँगलेपर पहुँचे। डिपटी कमिश्नर साहब को इस प्रकार गङ्गाबाईके होशहवाश ठीक हो जाने और उसका पागलपन दूर होजाने से बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने मुकद्दमे का फैसला करने के लिए अपराधियोंके नाम वारण्ट जारी किये।

दूसरे दिन अदालत में क़ायदे के मुआफ़िक मुक़दमे की पैरवी होने लगी। राजकुमार के इज़हार लिये गये। गङ्गाबाईने भी शर्माते-शर्माते अपनी बेहोशी के पहले का सारा हाल कह दिया। पीछेका हाल तो उसे कुछ भी मालूम न था। विचारक ने अपराधियों को तीन-तीन साल की सख़्त कैदकी सज़ा दी। पुलिस उन्हें जेल में ले गई, वहाँ से वे फिर कभी न लौटे। जिस समय वे लोग जेल में थे, उस समय जेलमें हैज़ा फूटा और वे सब उसीके पञ्जे में फँसकर यमसदन को सिधारे।

गङ्गाबाई और राजकुमार अपने घर आये। उनके माता पिता और सगे-सम्बन्धियों को इस सुसमाचारसे बड़ी प्रसन्नता हुई। कहते हैं कि, बहुधा पूर्ण सुख कभी किसी को नहीं

मिलता। ठीक यही दशा इनकी भी हुई। खुशी होनेपर भी पूरी खुशी न हुई, क्योंकि गङ्गाबाई के पति ब्रजलाल का कहीं भी पता नहीं था। वह साधु होकर कहाँ मारा-मारा फिरता है, इस को कोई भी न जानता था। उस के खोज निकालने के लिए बड़े-बड़े इनामोंका लालच देकर जासूस छोड़े गये, समाचारपत्रों में पता लगाकर ख़बर देने वाले के लिए भारी-भारी इनाम छापे गये। पर सब व्यर्थ, कुछ भी पता न लगा।

इतने पर भी गङ्गाबाई को अपने भावी पति से मिलनेकी आशा थी। भावी पति इसलिए कहा कि, अभी तक पाणिग्रहण-संस्कार पूर्ण नहीं हुआ था; तथापि उस का विवाह अब किसी दूसरे पुरुष से हो न सकता था। ऐसा होना हिन्दू-धर्मशास्त्र के विपरीत था। गङ्गाबाई भी ऐसा होना अनुचित समझती थी। वह ब्रजलालको ही अपना पति मान, रात दिन उसी के ध्यान में मग्न रहती थी। वह समझती थी कि, मेरा जन्म इस भूतलपर केवल ब्रजलाल ही के लिए हुआ है। इस प्रेमका कारण कामदेव की तपन या ब्रजलालकी अपूर्व्व शारीरिक सुन्दरता न थी। यह प्रेम उस प्रेम के समान नहीं था, जो अनेक युवतियाँ बहुधा कामातुर होकर कर बैठती हैं। न यह प्रेम गुल और बुलबुल की मुहब्बत के समान था; न लैली मजनूँ या चिराग़ और पतङ्ग के समान था। इसका सम्बन्ध धर्म से था। धार्मिक दृष्टि से यह

विशुद्ध और सच्चा प्रेम है। यह प्रेम आध्यात्मिक है—दैहिक नहीं। इसका आदि अन्त नहीं।

यह प्रेम-धारा ऐसे दो प्राणियोंके बीच में प्रवाहित होती है, जो पहलेहीसे आत्मा के रूप में एक दूसरे के लिए बना दिये गये हैं। अतएव ऐसे प्रेमका अन्त शरीर के नाश हो जाने पर भी नहीं होता। शरीर का अन्त हो जाता है, किन्तु इस प्रेमका अन्त नहीं होता। यह प्रेम सदा-सर्वदा समान रूप से प्रवाहित होता रहता है। ऐसी प्रेम-धारा में ग़ोता लगाने वाली गङ्गा भला स्वप्न में भी व्रज-लालको भूल सकती थी? हरगिज़ नहीं। उसे पूर्ण आशा थी कि, एक न एक दिन उसका प्राणेश उससे अवश्य ही मिलेगा। यदि वह न भी मिले, तोभी उस के प्रेम को उस के हृदय से कौन हटा सकता है? क्योंकि वह तो जीवन-मरण रहित है। जीवन मरण से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वह नाशवान नहीं है।
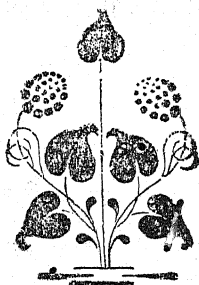
सोलहवाँ परिच्छेद ।

ब्रजलाल ।
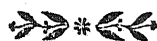
जिस समय मनुष्यके मस्तक पर अपकीर्तिका टीका लग जाता है, उस समय उसमें ज्ञान और दूरदर्शिता बिलकुल ही नहीं रह जाती । वह एक प्रकारसे बावलासा हो जाता है । यही स्थिति ब्रजलालकी भी थी । घरमें माता-पिताको छोड़, साधुभेष धारण कर, अपनी पत्नीकी तलाशमें निकल, गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए वह ष्टेशन पर आ पहुँचा । वह अपनी प्राणवल्लभा को खोजमें कहाँ जाता है, इसका भी कुछ निश्चयही न था । अतएव ईश्वर पर विश्वास रख, अधिक सोचा-विचारोमें समय नष्ट न कर, हरिद्वारका टिकट ले चल दिया । उसका चित्त परिवर्तन चाहता था, अतः वह लखनौमें रहना नहीं चाहता था । उसके हरिद्वार जानेमें क्या विशेषता थी यह हम नहीं जानते ; पर यह निश्चय है कि वह उसी रातको १ बजे लखनौसे हरिद्वार को चल दिया ; और दूसरे दिन आनन्द-

मय पवित्र धाममें पहुँच गया। रुपये-पैसेके अतिरिक्त उसके जेबमें उसकी प्राणेश्वरीका एक फोटो भी था। जब वह गाड़ीसे हरिद्वारमें उतरा, तो उसने उसे जेबसे निकाल कईबार प्रेमपूर्वक चुम्बन कर हृदयसे लगा लिया और फिर जेबमें रख लिया। तदनन्तर वह श्रीगंगा-स्नानके लिये रवाना हुआ। गंगाजीका महत्त्व ब्रजलालको उसकी पत्नीके नामकी समानताके कारण औरभी अधिक होगया था। गंगाका वह दृश्य, जहाँसे वह हिमालय पर्वत से निकल नीचेकी ओर बहती है, सचमुचही भव्य एवं दर्शनीय है। यहाँपर मनुष्य को प्रकृति-रहस्यका दिग्दर्शन प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो जाता है।

इस स्थानमें स्नान करनेके पश्चात, ब्रजलाल एक बड़ी चट्टान पर जा, एकाग्रचित्त हो ईश्वर-आराधना करने लगा। पीछे पूजासे निवृत्त हो, वहाँसे उठ, दूसरी चट्टानपर विश्राम करनेकेलिये चला गया। वहाँ जाकर बैठा ही था, कि उसे सामनेसे एक नवयुवक साधु गंगा-स्नान करनेके लिये आता हुआ दिखाई दिया। ब्रजलालने साधुको देख साष्टाङ्ग प्रणाम किया और उनसे कुछ फल फूल लेनेके लिये आग्रह किया। साधु महाराजने गंगा-स्नानके पश्चात् सहर्ष स्वीकार करनेका वादा किया। अस्तु, दोनों साधुओंने मनवाञ्छित भोजन कर वार्त्ता-लाप छेड़ी।

नये साधु—आप यहाँसे अब कहाँ जाइयेगा?

ब्रजलाल—कुछ निश्चय नहीं; देखिये, भाग्य कहाँ ले जाता है, यह कहकर उसने एक लम्बी सांस ली।

न० साधु—भाई तुम्हारे चेहरेसे तो दुःख और असन्तोष झलकता है। तुम्हारा नाम क्या है?

ब्रजलाल—मेरा नाम तो ब्रजलाल है, परन्तु जबतक मैं गेरुवे वस्त्र धारण किये हुए हूँ, उस समय तक रामानन्दके नामसे अपना परिचय देना चाहता हूँ। महाराज! आपका क्या नाम है?

न० साधु—इस स्थूल शरीरका नाम दयानन्द है।

ब्रजलाल—तब तो आपमें दया विशेष रूपसे होनी चाहिये। आपके नामके अनुसार गुण भी आपमें अवश्य ही मिलना चाहिये।

न० साधु—सिवाय उस जगत्पिता जगदीश्वरके और किसीको दयावान और न्यायवान कहना मेरी समझ में ठीक नहीं। इसीसे मैं आपके इस प्रश्नका कुछ भी उत्तर न दे चुप रहता हूँ। कृपया क्षमा प्रदान कीजिये।

इस प्रकार वार्तालाप हो ही रहा था कि, सामनेसे एक शेर गर्जता हुआ रामानन्दकी ओर बढ़ा। उसे देख रामानन्द सिरसे पैरतक काँप गया। रामानन्द की यह स्थिति देख, दयानन्दने उस हिंसक पशुसे ज़ोरसे चिल्ला कर कहा 'चुप'! यह सुनते ही वह दयानन्दके आसपास खेलसा करने लगा। जंगली पशुकी हिंसक वृत्तियोंको इस प्रकार पल्टी

हुई देख, रामानन्दको यह निश्चय होगया कि दयानन्द कोई साधारण पुरुष नहीं है। दयानन्दने पशुको एक अंगुली दिखाकर कहा—'भागो' शेरने शीघ्रही आज्ञा मानली और शिर नीचा करके जंगलकी ओर भाग, आँखोंसे विलग हो लोप हो गया।

यह सब देख रामानन्दको दयानन्दके महात्मा होनेका पूर्ण विश्वास होगया। वह उनके चरणोंपर अपना मस्तक धर शिष्य बननेकी प्रार्थना करने लगा। दयानन्दने रामानन्दकी यह विनती सुन, उसे ऊपरसे नीचे तक दत्तचित्त हो देखा और कहा,—"तुम्हारे चितमें अभी संसारी विकार बहुत भरे हुए हैं। जबतक उनका दमन व्रत-जप-तप इत्यादिसे न होगा, तबतक तुम ब्रह्मज्ञान पानेके अधिकारी नहीं हो सकते। अभी तो तुम्हारा चित्त किसी खोयी हुई वस्तुके लिये चञ्चल और उतावला हो रहा है, ऐसी स्थितिमें ब्रह्मज्ञान पाना कठिन है।

दयानन्द को यह बात किस तरह मालूम हुई, यह रामानन्दके लिए दूसरी आश्चर्यकी बात थी। इन सब आश्चर्यजनक बातोंका यह परिणाम हुआ कि, रामानन्दको दयानन्दके महात्मा होनेमें किञ्चित मात्र भी सन्देह न रहा और उसने उनका शिष्य होजाना ठान लिया। जोशमें आकर उसने दयानन्दसे जप-तप-व्रत इत्यादि सभी करनेका प्रण कर दिया। दयानन्दने उसका प्रण हार्दिक जान उससे कहा,—"भाई! मैं

महात्मा नहीं हूँ, वरन् एक महात्माका शिष्य हूँ। अतएव मुझे दूसरेको चेला बनानेका कोई अधिकार नहीं। पर हाँ, यदि आप चाहेंगे, तो हम और आप दोनों उन्हीं श्रेष्ठ महात्मा पुरुषके शिष्य हो जावेंगे। मैं आपको उनके पास, बिना उन की आज्ञाके, नहीं ले जा सकता। पर यह तो बतलाइये कि, यदि महात्माजीने स्वीकृति देदी, तो तुम मेरे साथ उनके आश्रम कैलाश तक चलनेको तैयार हो सकोगे ?

रामानन्द—मैं पाताल भी चल सकूँगा, आप तो कैलाश को कहते हैं।

रामानन्दका यह उत्तर सुन दयानन्दको विशेष प्रसन्नता हुई। वह बोला,—"तो अब केवल महात्माजीकी आज्ञा ही लेनारह गया है। जहाँ वह मिल गई कि, तुम्हारो काम सफल हो जायगा।"

दयानन्दकी यह बात सुन रामानन्द समझा कि, कदाचित वह महात्माजीकी आज्ञा लेने कैलाश जावेंगे, इसीसे वह बोला:—"आप कैलाश जाइये। मैं आपके आने तक यहीं ठहरूंगा। पर यह तो बताइये कि, आपको मेरे लिये आज्ञा लेकर लौट आनेमें कितना समय लगेगा ?"

दयानन्द—(हँसकर) स्वामीजीकी आज्ञा लेनेके लिये यह आवश्यक नहीं कि, मैं कैलाश जाऊँ।

रामानन्द—तो क्या आप पत्र भेजकर आज्ञा मँगा लेंगे ?

दयानन्द—कदापि नहीं। तुम बिलकुल भूल कर रहे हो,

कैलाश में कोई डाकघर इत्यादि नहीं हैं, जो पत्र भेजकर महात्माजी से आज्ञा मँगा लेवें।

रामानन्द—न आप स्वतः कैलाश जाना चाहते हैं न पत्र ही लिखना चाहते हैं, फिर आप आज्ञा किस तरह मँगावेंगे, यह तो मेरी समझ में नहीं आता?

दयानन्द—यदि वहाँ डाकघर भी होता, तोभी मैं उसका आश्रय न लेता। वहाँ पर पहुँचना बड़ा दुष्कर कार्य है।

रामानन्द—वहाँ टेलिफोन इत्यादि भी नहीं, जो आपका काम चल जावे। आप क्या करने वाले हैं, मेरी समझ में नहीं आता?

दयानन्द—हम लोग ऐसी किसी भी चीज़ का आश्रय नहीं लेते।

रामानन्द—फिर तो आप और महात्माजी के पास तार देनेका सामान होगा।

दयानन्द—हम लोग इस तरह की उलझनों में नहीं पड़ते।

रामानन्द—फिर आप महात्माजी से किस प्रकार बातचीत करके आज्ञा लावेंगे, यह मेरी समझमें आता ही नहीं!

दयानन्द—मैं अभी बतलाये देता हूँ कि बात क्या है।

यह कहकर दयानन्द ने एक गिलास गङ्गाजल मँगवाया। उसे हाथ में ले, उन्होंने कुछ मन्त्र पढ़कर रामानन्दसे उस में देखनेको कहा। वैसा करते ही रामानन्द क्या देखता है कि,

उस गिलासके पवित्र गङ्गाजल में कैलाश घाटीका सुन्दर चित्र अंकित हो गया है। जिसके बीचमें एक साधू विराजमान होकर दर्शन दे रहे हैं। दयानन्द महात्माजी को देखकर पहचान गये और बोले—"श्री स्वामी सद्‌गुरुनाथजी! रामानन्दको आप के सम्मुख लाने की आज्ञा दीजिये।"

स्वामी के हाथ की काली तख़्ती में 'एवमस्तु' लिखा देख दयानन्द प्रसन्न हो गये। इसके पश्चात् शीघ्रही सब खेल बातकी बातमें दोनों नवयुवक साधुओं के सामने से इस तरह हट गया, मानो वह तिलिस्म-रचना थी। कैलाश का पूर्ण सजीव दृश्य दोनों साधुओं ने इस प्रकार देखा, मानो उन्होंने बाइस्कोप के तमाशे में सच्ची तसवीरों को देखा हो।

यह सब भ्रम था या मानसिक कल्पना या निरा स्वप्न ही था? नहीं, यह सब आध्यात्मिक पवित्रता थी। इस दृश्य से कुछ देर तक रामानन्दको बड़ा हर्ष एवं सन्तोष हुआ कि, वह एक महात्मा के दर्शन कर सका।

मध्याह्न का समय हो गया है। रामानन्द और दयानन्द कैलाश जाने की तैयारी कर रहे हैं। रामानन्द यह समझ कर कि कैलाश जाने में समय बहुत लगेगा, इसलिये कुछ खाद्य पदार्थ ले आना आवश्यक होगा, बस्ती की ओर जाने लगा, पर दयानन्दने उसे यह कहकर रोक लिया कि ईश्वर पर विश्वास करके चलो। तुम्हें किसी चीज़की आवश्यकता नहीं पड़ेगी और तुम क्षुधासे कदापि नहीं मर सकोगे।

दोनों ने कैलाश पहुँचने के लिये हिमालय पर्वत पर चढ़ना शुरू किया और सन्ध्या तक वे लोग प्रायः समुद्रके धरा-तलसे १२००० फीटकी दूरीपर पहुँच गये। सूर्य्य भगवान् अपने उज्ज्वल मुखारविन्द को छिपाने वाले ही थे। आकाश रक्त-वर्ण हो रहा था। सूर्य्य की किरणोंका हिमशैलों से परिवर्तित हो नीचे के पदार्थों पर पड़ना बड़ा ही मनोरम दिखता था।

ऊपर पहुँचकर ज्योंहीं इन लोगोंने नीचेकी ओर देखा, तो इन्हें मनहरण छोटी-छोटी घाटियाँ, जिन्हें इन लोगों ने पार किया था, दिखाई दीं। यहाँ पर प्रकृति-सौन्दर्य्य का आदर्श इस रूप से दृष्टिगोचर होता था कि. जिसे देख मनो-मालिन्य नष्ट हो आध्यात्मिक ज्ञान की ओर प्रवृत्ति होती है। इस दृश्यको देख नितान्त पापोके हृदय में भी धार्मिक निष्ठा उत्पन्न हो आती है। प्रकृति सौन्दर्य्यका पूजन ही ईश्वर के पाने की प्रथम सीढ़ी है। आर्य्य लोग भी सबसे प्रथम जब कि सिन्धुके किनारे आकर बसे थे, इसी प्रकृति-सौन्दर्य्य के वशीभूत हुए थे। इसी कारण से उन्होंने प्रथम सूर्य्य, चन्द्र, अग्नि, तारे इत्यादिकी एक विशेष रूप से पूजा की। यही प्रकृति-सौन्दर्य्य-पूजन उनके जीवन के प्रत्येक अङ्ग, साहित्य—विज्ञान—कलाकौशल—धर्म-नीति आदिमें अग्रणीय है। ऐसा प्रतीत होता है कि, जिस समय आर्य्य लोग मध्य एशिया से हिमालय पर्वतकी प्रकृति-सौन्दर्य्य देखते हुए सिन्धके किनारे की ओर बढ़े होंगे, उसी समय उनके चित्तमें उसकी ओर

एक विशेष प्रेम होगया होगा, जो समय पाकर उनकी एक स्वाभाविकता में रूपान्तर हो गया है।

इस पर्वतराज हिमालयमें जो अनन्त नदियोंका जन्मदाता है, जिसके सिरपर हिमका मुकुट सुशोभित है,जो हिन्दुस्थानको शत्रुओंसे बचानेका एक भारी प्राकृतिक साधन है, जो स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका मध्यस्थ है,इसमें अभीतक न जाने कितने ऐसे गुप्त भेद भरे हैं,जिनका पार मानव-जातिने अभीतक नहीं पाया और जिनका विचार करना भी संसारी जीवोंके लिये हास्यप्रदसा है। कारण, वहाँवाले संसारी वासनाओं से मुक्त हैं। ऐसे हिमालय पर्वतकी १२०००फुटकी ऊँचाई परका प्राकृतिक सौन्दर्य्य लिखकर वर्णन करना हमारी लेखनीशक्ति के बाहर है। जहाँ-जहाँ दृष्टि जाती थी, वहीं-कहीं घाटी, कहीं मन्दिर, कहीं क़िला, हीं उपजाऊ ज़मीन, कहीं टेढ़ी-मेढ़ी नदियोंके गोरखधन्धे जैसे बहाव इत्यादि दृष्टिगोचर हो मनहरण करते थे। वह दृश्य इतना रमणीय है, कि उसके अङ्ग प्रत्यङ्गमें प्रकृति वैभव का दिग्दर्शन दृष्टिगोचर होरहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है, कि यदि एक कट्टर नास्तिक भी उस दृश्यको देखे, तो वह लौटकर आनेपर ईश्वरमें पहलेकी अपेक्षा कुछ न कुछ श्रद्धा अवश्य करने लगेगा। पर हाँ, यदि उसके मनोविचार ही चैतन्य अवस्थामें न हों, तो फिर उसमें हमारे कथन का झूठा होना भी सम्भव हो सकता है।

उक्त दृश्य की शोभा देख रामानन्द ऐसा मग्न होगया कि

उसे सूर्यास्त एवं तारागणोंके निकलने इत्यादिका भी बोध न हुआ। उसे यह भी न मालूम हुआ, कि संध्यावन्दन का समय व्यतीत होरहा है। इसीसे दयानन्दने उससे कहा—"भाई रामानन्द! चलो, अब देर न करो; सन्ध्या का समय बीता जारहा है। हाथ पैर धोकर संध्या करने की तैयारी करो। दयानन्दके इन वाक्योंको सुन रामानन्द शीघ्रही चैतन्य होगया। कुछ विचार करने पर उसे मालूम हुआ कि, वह इस समय १२००० फुटकी ऊँचाई पर हिमालय पर्वत पर बैठा है, यहाँ उसे पानी कहाँ मिलेगा? यह सोच वह दयानन्दसे बोला—"भाई! यहाँ पानी कहाँ मिलेगा?" दयानन्दने कहा—"वृद्धपितामह हिमालयसे माँगो, वेही तुम्हें जल देवेंगे।" यह कह उसने अपने चिमटेको ज़मीनमें गाड़कर कुछ मन्त्र पढ़ा। चिमटेके निकालते ही उस जगह एक छोटासा कुण्ड बनगया, जिसमेंसे जल लेकर दोनोंने सायंकालकी सन्ध्या की।

तदनन्तर रामानन्द को ज़ोर की क्षुधा और तृषा मालूम हुई। पर वह अपने साथीसे, यह जानते हुए कि खाने को कुछ भी नहीं है, इस विषयमें कुछ भी न कहना चाहता था। वह चुपचाप कुण्डके पास गया और वहाँ जल पीकर उसने अपनी प्यास बुझाई। दयानन्दने भी उसी कुण्डसे कुछ जल पिया।

पहाड़ की इतनी ऊँचाई पर चलते-चलते दोनों थक गये

थे। विशेषत: रामानन्दका थक जाना तो सर्वथा स्वाभाविक ही था। वह लेटकर कुछ विश्राम किया चाहता था, पर उसका यह विचार वहाँ की प्रखर ठण्डने पूरा न होने दिया। ग्रीष्म ऋतु होतेहुए भी, वहाँ रात्रिके समय विश्राम लेना एक कठिन व्यापार था। ठण्डसे बचनेको वहाँ न कोई झोंपड़ी थी, न और किसी प्रकारका आश्रय था। यह सब देख भावी साधु रामानन्द का चित्त उदास होगया, कि भूखे-प्यासे ज़मीनपर ऐसी विषम ठण्डमें सोना कैसे सम्भव है। उसका चित्त अपने पथसे विलग होनेके लिये चलायमानसा होगया। उसके चित्तमें ज्ञान और संसारके सुखके विषयमें भारी युद्ध ठन गया। वह यह सोचने लगा कि, क्या इन सब तकलीफों का एवज़ ब्रह्म-ज्ञान-सुखसे पूरा हो सकता है? कभी इस ओर और कभी उस ओर रामानन्द ढुल जाता था। अन्तमें उसने दृढ़ संकल्प किया, कि चाहे कुछ भी हो मैं ब्रह्मज्ञानको अवश्य सीखूँगा। चाहे कितनी भी आपत्तियाँ क्यों न आवें, मैं पीछे कभी न हटूँगा।

दयानन्द रामानन्द के कल्पित विचारोंको इस प्रकार देख रहा था, मानों वह किसी पुस्तक को पढ़ रहा हो। रामानन्द की ज्ञान-प्रवृति देख उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह उसे बिलकुल ही सहायता न देना चाहता था। वह देखना चाहता था कि, रामानन्द स्वतः ही कहाँ तक अपने क्षुद्र विचारों को दूर कर सकता है। अस्तु। दोनों ठण्डी हवा और बरफ के

बीच रात को सो गये। प्रातःकाल होते ही रामानन्दके हाथ पैर सब शून्य पड़गये। भूखके कारण उसकी स्थिति और भी अधिक शोचनीय दीखती थी। दयानन्दने रामानन्दकी यह दशा देख उसे एक ऐसा फल खाने को दिया, जैसा उसने पहले कभी नहीं देखा था। उसके खाते ही रामानन्द के अङ्ग-प्रत्यङ्गमें शक्ति आगई, पर भूख शान्त न हुई।

प्रातःकालकी सन्ध्याके लिये दोनों तैयार हुए। उसके समाप्त होने पर हवनकी तैयारीके लिये अग्निकी आवश्यकता हुई। दयानन्द जाकर कुछ सूखी हुई पतली-पतली लकड़ियाँ ले आया। उनमें आग किस तरह लगाई जावेगी, यह दूसरी समस्या रामानन्द के हृदय में उत्पन्न हुई। उसे यह मालूम था कि, दियासलाई की डब्बी तो किसीके भी पास नहीं है फिर आग कैसे जलेगी। वह कभी चकमक, कभी दियासलाईके मसाले और कभी शोरेके तेज़ाबकी कल्पना करता था। वह समझता था कि, इन्हींके प्रयोगसे आग प्रज्वलित हो सकती है। पर इनमेंसे तो एक भी चीज़ नहीं है। अब कैसे आग जलेगी? दयानन्दने रामनन्दके विचार जानकर कहा—"मुझे उन चीज़ोंमेंसे किसीकी भी आवश्यकता न पड़ेगी और अग्नि अवश्य प्रज्वलित हो जायगी। अच्छा देखो" यह कह उसने एक हाथमें थोड़ासा जल ले, गायत्री मन्त्र उच्चारणकर, एक सूखी लकड़ियोंके ढेर पर फेंका। फेंकतेही अग्नि की ज्वाला निकल पड़ी और अँगीठी सर्राटे से जलने लगी। हवनमें

घीकी आवश्यकता दूर करनेके लिये भी साधुने एक गिलासमें पानी ले कुछ मन्त्र पढ़ा, जिसके कारण ५ मिनट में वह पानी घी के रूपमें बदल गया, जिससे हवन इत्यादि किया गया।

इन सब कामोंसे छुट्टी पा, दोनों साधुओंने फिरसे अपना रास्ता लिया। रामानन्दने खानेको कुछ भी न माँगा। दयानन्दने भी उसे देनेकी कुछ परवा न की। पर्वत पर चढ़ना शुरू किया। सारे दिन ये दोनों पर्वतपर चढ़ते रहे। शाम होते ही ये लोग एक चट्टानके किनारे पहुँच गये, जिसके कुछ ऊपर हिमालयका हिम-मुकुट शोभायमान दिखता था। वहाँ पहुँचतेही रामानन्दका शरीर बिलकुल शिथिल हो गया। वह कुछ बोल भी न सकता था। दयानन्दने उसकी यह दशा देख फिरसे उसे सबल कर दिया। इस बार फल का प्रयोग नहीं किया। इस बार दयानन्दने रामानन्द के सामने कुछ दूर खड़े होकर, अपने हाथको उसके शरीरको बिना छुए सिरसे पैर तक फेरा, जिससे वह बेसुध होकर सो गया। उसकी ऐसी स्थितिमें दयानन्दने उसके कानमें कहा—"हे शरीर धारण करनेवाली अमर आत्मा! मैं तुझे आज्ञा देता हूँ, कि तू अपनी शरीर की थकावट को बिलकुल निकाल दे।" इन वचनोंका असर रामानन्दके हृदयपर ऐसा पड़ाकि, वह चैतन्यरूप होकर इस प्रकार बैठ गया, मानों उसे कुछ भी परिश्रम न हुआ था।

इस प्रकार से प्रसन्नचित्त हो रामानन्दने फिर दयानन्द

के साथ संध्या की। उसके पश्चात दोनोंमें इस प्रकार वार्त्तालाप होने लगाः—

दयानन्द—रामानन्द देखो! अब मैं तुम्हें एक ऐसे स्थान को ले चलना चाहता हूँ, जहाँ राहमें कई दिनोंतक लगातार तुम्हें बिना अन्न-पानी के रहना पड़ेगा। यदि तुम तैयार हो तो अच्छा है; अन्यथा मैं एक बातकी बातमें तुम्हें हरिद्वार भेज सकता हूँ। वहाँ पहुँचकर जो तुम्हारे जीमें आवे सो करना।

रामानन्द—ज्ञानकी भूख-प्यासके सामने, जिसे आपके सत्संग ने मुझ क्षुद्रके हृदयमें अंकुरित कर दिया है, मैं अन्नपानी की भूखप्यास को कुछ भी नहीं समझता। मैं कहीं भी जहाँ कहिये वहाँ चलनेको तैयार हूँ। कुछ भी करनेको राजी हूँ। परन्तु आपको छोड़ मैं उस स्वर्गीय सुखसे वञ्चित नहीं होना चाहता, जिसका भरा हुआ गिलास मेरे मुँह तक पहुँच गया है और जिसकी दिव्य कान्ति का प्रभाव आपके तेजस्वी मुखपर विराजमान है।

दयानन्द—रामानन्द! तुम्हारे ऐसे दृढ़तापूर्वक वचनोंको सुन मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुमसे मुझे एकबात जो और कहनी है, वह यह है कि, कैलाशपुरी एक गुप्त पुरी है। वह चारों ओरसे ऐसी बड़ी-बड़ी चट्टानों से घिरी है, कि उसमें पहुँचना मनुष्य-पुरुषार्थ के

बाहर है। अतएव वहाँ पहुँचने पर तुम वहाँ जो कुछ देखो या सुनो, उसे उन महात्मा जी की आज्ञा बिना किसीको न बतलाना, जिनके सामने मैं तुम्हें अभी उपस्थित किया चाहता हूँ।

रामानन्द—मैं इस बातको सहर्ष स्वीकार करता हूँ, और आपके आदेश के विरुद्ध कार्य न करनेका वचन देता हूँ।

दयानन्द—रामानन्द! हमारे तुम्हारे ये स्थूल शरीर वहाँ तक जानेके अधिकारी नहीं हैं, इससे तुम्हें कुछ समय के लिये अपने स्थूल शरीरको त्यागना पड़ेगा।

रामानन्द—मैं आपके इस कथन को बिल्कुल नहीं समझा। स्थूल शरीर को त्यागनेसे आपका क्या प्रयोजन है?

दयानन्द—मैं अपना मंतव्य प्रकट करता हूँ, उसे तुम श्रवण करो। शरीर और आत्मा का भिन्न होना तो तुम स्वीकार ही करोगे, पर तुमको यह भी स्वीकार करना पडेगा कि आत्मा अमर है, और वह कुछ समय के लिये नाशवान शरीरमें बन्द है। जिस प्रकार शहरमें किसी एक मनुष्य को कोट, जाकट और कमीज़ पहने देखते हो; उसी तरह हमारी आत्मा पर भी तीन प्रकारके शरीर पड़े हुए हैं। जिनमें से पहले को कारण शरीर, दूसरेको सूक्ष्म शरीर और तीसरे को स्थूल शरीर कहते हैं।

इसीसे जब मैंने तुमसे स्थूल शरीर को त्यागनेके लिये कहा, तो उसका तात्पर्य यह है, कि तुम इन तीनों प्रकार के शरीरोंमें जो सबसे वज़नदार है, यानी लोकवासना और देह-वासना इन दो प्रकार की वासनाओं का जिसमें भारी वज़न है, उसे इस प्रकार त्याग दो जैसे कि किरकिट व फुटबाल खेलने के पहले वज़नदार कोट उतार देना पड़ता है।

रामानन्द—आपने जो कहा वह यथार्थमें सत्य है, पर यह किस प्रकार हो सकता है? क्योंकि मुझे तो इस विषयमें कुछ मालूम ही नहीं।

दयानन्द—मैं तुम्हारे लिये सब किये देता हूँ। तुम केवल तय्यार हो जाओ।

यह कह दयानन्द ने अपने योग-बलसे उसे शीघ्रही तृतीया अवस्थामें लादिया। इसी दशामें आत्मा और सूक्ष्म शरीर आपसमें मिलकर कार्य कर सकते हैं। साधारण योग-क्रियामें आत्मा को सूक्ष्म शरीरमें लाने की शक्ति नहीं होती। पर कोई-कोई ऐसे भी दक्ष होते हैं, जो स्थूल शरीरको थोड़ा भी कष्ट दिये बिना, उसे सूक्ष्म शरीरमें प्रवेश कर देते हैं। दयानन्द उन्हीं दक्ष पुरुषोंमेंसे एक था। उसने शीघ्रही रामानन्दके स्थूल शरीरको मुर्देके समान पृथ्वी पर लिटा दिया। उसकी इन्द्रियों का कार्यक्रम चालू रखनेके लिये, दयानन्दने उसमें बहुतसी विद्युत-शक्तिका प्रवेश कर दिया। इस समय

दयानन्द के स्थूल शरीर की स्थिति ठीक वैसी ही थी, जैसी कि चलती हुई रेल गाड़ी के एञ्जिन की ड्राइवर के चुपचाप बैठे रहनेसे हो जाती है। यदि एञ्जिन में इतना कोयला पानी है कि, उसको भाफ बनकर रेलगाड़ीको मिलती रहेगी, तो इञ्जन ड्राइवरके बिना किसी प्रयत्नके वह बहुत दूरतक चालू रह सकती है। पर यदि मेशीन ऐसी बनी है, कि जिससे ड्राइवर भाफका वेग रोके बिना या अन्य कोई साधन किए बिना एञ्जिन नहीं छोड़ सकता, तो एञ्जिन में बहुतसा कोयला पानी और अग्निके होते हुए भी उसका चलना असम्भव हो जाता है।

मानव शरीर और मेशीनमें जैसी समानता है, वैसीही आत्मा और ड्राइवर में भी है। अन्तर केवल इतना ही है, कि मानवशरीर की रचना किसी भी मेशीन की रचना से कहीं बढ़-चढ़ कर गुप्तभेदी एवं चमत्कारक है। मानव-शारीरिक-रासायनिक-शक्तिके सामने भाफ-शक्ति कुछ भी नहीं है; भाफ-शक्तिमें यह शक्ति नहीं, कि वह मेशीन की किसी धातु या ढाँचे को बना या बिगाड़ सके, पर मानव-शारीरिक-रासायनिक शक्तिमें यह बात है। मेशीनके ढाँचेको वाह्य जल-पवन कुछ भी हानि नहीं पहुँचाते, पर मानव-शरीर पर उनका बड़ा भारी अधिकार है। इन सब बातों से यह सहजहीमें हल हो जाता है कि,एञ्जिनसे ड्राइवरके निकल जाने में उतनी आपत्ति नहीं हो सकती, जितनी कि शरीरसे आत्माके विलग होनेमें हो सकती है।

इसी कारणसे चाहे ड्राइवर रहे या न रहे; चाहे मैशीनमें कोयला पानी और ईंधन हो या न हो, मैशीन का कुछ नहीं बिगड़ सकता। वह केवल थोड़े समय के लिये अपने कार्य-क्रमसे वञ्चित रहेगी। पर मानव-शरीर की शक्तियाँ आत्माके बिना यदि यहाँ-वहाँ खर्च हो जाती हैं, तो मानव-शरीरकी यन्त्र-रचना सर्वथा नष्ट हो जाती है। यहाँ तक कि अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी गल जाते हैं। इसी को संसारी रीत्यानुसार 'मृत्यु' कहते हैं। बहुधा ऐसा होता है, कि शरीरसे आत्माके विलग होनेके पश्चात् ही शरीर की उष्णता विद्युत आदि एवं शारीरिक शक्तियाँ धीरे-धीरे क्षय हो जाती हैं। पर इससे हम यह सिद्धान्त नहीं मान सकते कि, जिस प्रकार आत्माके विलग होते ही शारीरिक शक्तियों का ह्रास हो जाता है, उसी प्रकार शारीरिक शक्तियों के नष्ट होनेसे आत्मा भी विलग हो जावेगी। ऐसा होना और न होना दोनों बातें सम्भव हैं। आत्माके विलग होनेके पश्चात् शारीरिक शक्तियों का कार्यक्रम बन्द हो जाना प्रायः बहुत लोग मानते हैं। पर इसमें भी उनकी भूल कहाँ है, वे कहाँ ग़लती करते हैं, इसी पर विचार करना है।

तर्क शास्त्र के नियमानुसार साधारण से साधारण उक्ति भी नहीं पलटी जा सकती। हम अपने उपरोक्त उक्ति-सूत्रको साधारणतः इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं:—

(१) यदि शरीरकी शक्तियाँ जैसे उष्णता, विद्युत और

रासानियक शक्तियाँ इत्यादि शरीरसे निकल जाती हैं,तो शरीर का कार्य्यक्रम रुक जाता है।

(२) और जब शारीरिक शक्तियाँ नाश हो जाती हैं, तो शरीर से आत्मा भी विलग हो जाता है।

इन्हीं दो युक्तियों से हम यह झूठा सिद्धान्त निकाल सकते हैं कि, आत्माके विलग हो जाने से शरीरका कार्य्यक्रम रुक जाता है। इस सिद्धान्त को झुठाई कोई साधारण तर्कशास्त्र जानने वाला भी बतला सकता है, जिसे हम एक तुलनात्मक घटना कह इस प्रकार समझाते हैं :—

(१) जब मैं बाहर जाता हूँ, तो मेरा कुत्ता सदैव मेरे साथ जाता है।

इस से आप यह सिद्धान्त नहीं निकाल सकते कि, जब मेरा कुत्ता बाहर जाता है तो मैं सदैव उसके साथ जाता हूँ। इसी से हमने बहुत ही साधारण रीति से सिद्ध कर दिखाया है कि, शरीर से आत्माके विलग होनेके पश्चात् उसका (शरीरका) कार्य्यक्रम रुक जाना आवश्यक नहीं है।

उक्त सिद्धान्त से आप लोगोंको यह आश्चर्य्य न होना चाहिये कि, आत्माके विलग होने के पश्चात् दयानन्द और रामानन्दके शरीर किस प्रकार पुनः अपने-अपने कार्य्यक्रमसे युक्त हुए होंगे। यह निश्चित है कि, आत्मा के विलग हो जानेसे मनुष्य की चैतन्य शक्तियाँ—जैसे बुद्धि, विवेक (Perception) इत्यादि—उसीके साथ लय हो जाती हैं ; पर शरीर

को जड़ शक्तियाँ सब वर्तमान रहती हैं। जबतक शरीर की उस स्थिति में यथोचित सामग्री जैसे उष्णता, वायु, विद्युत इत्यादि की पूर्त्ति कृत्रिम या स्वाभाविक रीतसे होती रहेगी, तबतक वह शरीर नाश नहीं हो सकता। ऐसी स्थितिमें शरीर को नाश न होने देने के लिए तुम्हें कृत्रिम रीति से भोजन इत्यादि देना पड़ेगा, जो पेट में जाकर रासायनिक क्रियाके बलसे खून बन जायगा। रासायनिक संयोग से शरीर में उष्णतासे विद्युत और फिर दोनों के रासायनिक सम्बन्ध से शरीर पुष्ट होता रहता है।

योग-विद्यामें यह शक्ति है कि,वह आत्माको शरीरसे सहज ही विलग कर सकती है। हिमालयमें कुछ ऐसे वृक्षादि भी हैं, जिनकी पत्तियाँ खा लेनेसे बीसों दिन आदमी बिना भोजन के रह सकता है। दयानन्द और रामानन्द ने आत्माके त्याग के पूर्व ही अपने शरीर का कार्य्यक्रम चालू रखने के लिये इन वृक्षोंकी पत्तियाँ खा ली थीं। इन पत्तियों की समानता एक रेडियम नामके पदार्थ से किसी प्रकार की जा सकती है, जिसमेंसे बहुत देर तक प्रकाश और उष्णता बिना घटे बढ़े निकलती रहती है।

शरीरको जङ्गली पशु आदि से हानि पहुँचाये जानेके डर से दयानन्द और रामानन्द ने उन्हें एक गुफा में जाकर त्याग किया था। योगबलसे दोनों की आत्माएँ सूक्ष्म शरीरका बाना पहनकर अपने-अपने शरीर से निकलकर स्वतन्त्र हो गईं।

जितनी प्रसन्नता किसीको अपनी बेड़ी इत्यादि के निकलने से नहीं होती, उतनी आत्माको स्थूल शरीर से निकलने में होती है। कारण,—स्थूल शरीरकी अपेक्षा सूक्ष्म शरीर आत्मा का अधिक आज्ञाकारी होता है।

सूक्ष्म शरीर की रचना स्थूल शरीर के सदृशही है। अन्तर केवल इतना ही है कि, सूक्ष्म शरीर की रचना का मसाला बहुत ही विशुद्ध और निर्मल होता है और उसकी शक्तियोंका अधिकार स्थूल शरीर के सदृश उसके जामेंही में न रहकर बहुत दूर तक होता है। इसीके कारण दयानन्द और रामानन्द एक क्षणमें सूक्ष्म शरीरमें प्रवेशकर पर्वतों और हिमशैलों को एक क्षण में लाँघकर चट्टानोंपर कूदते-फाँदते कैलाश पहुँच गये। इस दृश्यका यथेष्ट समाचार, जो रामानन्द ने वहाँ जाकर देखा-सुना या अनुभव किया, प्रिय पाठकों को दूसरे स्थानपर दिया जायगा।
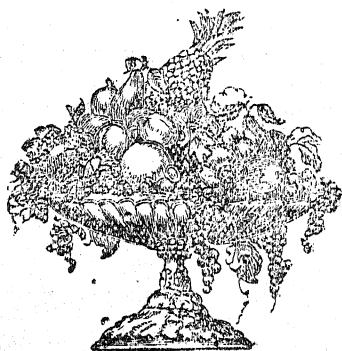
सत्तरहवाँ परिच्छेद ।

नवाब साहब और उनकी जादूगरनी ।

हिमालयके रोचक और निर्जन दृश्यसे विलगकर, अब हम अपने पाठकों को फिर से हाथरसके मैदान में लिये चल रहे हैं, जिसके बीचों-बीच नवाब साहबका महल दृष्टिगोचर हो रहा है। नवाब साहबसे अन्तिम बार विदा होते समय हमने देखा था कि, मुरादकी अचानक मृत्यु हो जानेके कारण उनकी सारी भावी आशा-लताओं पर पानी फिर गया था। उन्होंने अपने मानसिक आमोद-प्रमोद को तिलाञ्जलि दे दी थी। जिस तरह यह आश्चर्यदायक घटना घटी, वह हमारे सहृदय पाठकोंको विदित है।

रात्रिके समय गाड़ीके अचानक उलट जानेसे जो हानि हुई थी और जिससे मुरादबख्श का देहान्त भी होगया था, उससे उसकी साथिन प्यारीजानको कोई विशेष चोट इत्यादि नहीं आई थी। वह केवल मूर्च्छित हो ज़मीनपर गिर पड़ी थी। उसी समय वह अपनी इस स्थितिमें नवाब साहब के सुव्यवस्थित बैठकख़ानेमें लेजाई गई। वहाँ यथोचित

उपचार के बाद वह शीघ्र ही होश में आगई। नवाब साहब के यहाँ के एक खूराक शर्बत ही ने उसकी मूर्च्छा को नष्ट कर उसे साधारण स्थिति में ला दिया था।

जब वह स्वस्थ चित्त होकर बैठी, तो उसकी मनोहर तिरछी चितवन, मधुर-मधुर मुसक्यान, अधरों की सुघड़ मोड़ इत्यादि सबोंने मिलकर नवाब साहबके चित्तमें ऐसी कठिन वेदना पैदा कर दी कि, वे उसे न सम्हाल सके। चुम्बकाकर्षण जैसा अपूर्व्व आकर्षण नवाब साहब के चित्तमें उमड़ आया और उसीके वशीभूत हो हमारे नवाब साहबने उस लावण्यमयी रूपकी देवीको हृदयालिंगन कर लिया। अब क्या था? पीछे हटते हुए आगेको बढ़ना; कभी निरुत्साह की, कभी उत्साहकी मात्रा पिलाना; कभी मुक्त होनेके लिये नाना प्रकार के हाव-भाव, तो कभी फिर उसी के लिये चित्तसे अनुमोदन और ऊपरी झिड़कियाँ; कभी-कभी ओठोंसे निरुत्साहपूर्ण शब्दोंका बुदबुदाना, फिर बहुधा तिरछी चितवनों से रिझाना; दूर रहनेका बहाना, पर पास खींचनेको तरसाना; गले लगने में आधी रुचि आधी अरुचि; आधा शरीर सीधा, आधा बाँका इत्यादि हाव-भावों से यह भास होता था, मानो वह मोहिनी यह चाहती थी कि मुझे छुओ मत, पर आलिङ्गन अवश्य कर लो। प्रेमके गूढ़ मन्त्रकी भाषा—जिसका प्रभाव क्षणमें हाँ और क्षण में ना है—मानव-हृदयको पराजित करने में अद्वितीय ही है। फिर

नवाब साहब भी तो मानव-हृदयधारी ही थे, वे भीएक क्षण ही में उस मोहिनी के वशीभूत हो गये। उनकी सारी मनो-वृत्तियों में एक भारी हलचल मच गई। उनका चित्त उनके वशमें न रहा, उस मोहिनी देवीकी प्रेम-पाश-रूपी उन ज़ंजीरों में जकड़ गया, जो कि लोहे तथा अभेद्य धातुसे भी कठिनतर होती हैं; पर उसका यह हाल नहीं था। वह अपने वश में थी और उसीके अनुसार नवाब साहब को चाहे जिस तरह नचाती थी।

उक्त उलझनके बीचमें ही नवाब साहबका दाहिना हाथ अचानक ही एक कड़ी चीज़पर जा लगा, जोकि चोली के भीतर रक्खी थी। 'इजाज़त नहीं' के भीतर जानेवाले अपराधीने उस वस्तुको निकाल ही लिया। देखा, तो वह एक तस्वीर थी। उस तस्वीरको देखकर हमारे नवाब साहब मारे खुशी के फूल उठे। वह तस्वीर किसकी थी, जिससे नवाब साहब का घमण्ड आस्मान पर चढ़ गया? प्रिय पाठको! वह फोटो हमारे नवाब साहबही की थी, जो उन्होंने अपराधी के पास से निकाल ली थी। तस्वीर पाकर नवाबने अपराधीकी ओर देख कर कहा,—"आज चोर मालके साथ पकड़ा गया है। अब मुक़दमा दायर करता हूँ। जवाब देने के लिए तैयार हो जाओ और सज़ाके लिए भी।"

यह सुन वह सिर नीचाकर, आँखें नीचेको झुका, धीरे-धीरे तीक्ष्ण कटारका प्रहार करती हुई, कुछ-कुछ मुस्कराती और

पैरसे ज़मीनपर लिखती हुई ऐसी शान्त अवस्थामें खड़ी हुई थी, मानो उसने सचमुचही चोरी की हो। अपनी इस स्थिति में वह अनुपम रूपवती दिखती थी। कुछ देर तक ऐसी दशा में रह अन्त में वह बोली:—

"समझ लीजिये कि मुलज़िम अपनी ग़लती—अपना क़सूर कुबूल करता है, तो फिर उसे आपके क़ानून से क्या सज़ा मिलेगी ?

नवाब साहिब—हमारे क़ायदे-कानून के मुआफ़िक़ जुर्म कुबूल करना, किसी तरह सज़ा को कम नहीं कर सकता। आप अपने इज़हारोंसे खुद मुजरिम साबित होती हैं। इसी से अब ज़ियादा वक्त बर्बाद न कर, आपको मुहब्बत के क़ानूनके मुताबिक़, ज़ोर से १० बोसोंकी सज़ा आपके सुर्ख़ गालोंपर अता फरमाई जाती है।

सज़ा सुनाई जाने की देरी थी, पर उसकी पूर्ति में एक क्षण भी न लगा और यह सज़ा सज़ा देनेवाले होने प्रदान की। उन्हें तो आनन्द अवश्य ही हुआ, पर बहुधा अपराधी को ऐसे दण्ड रुचिकर होते हुए भी अरुचिकर बतलाने पड़ते हैं। वही हाल इस अपराधी का भी हुआ।

अन्तमें दण्ड की पूर्त्तिके पश्चात् नवाब साहब सानन्द सोफ़े पर जाकर बैठगये। उसी पर उन्होंने प्यारीजान को भी बुलाकर बैठा लिया। ऐसे समय पर जैसी बातचीतका होना

स्वाभाविक था वैसीही बातचीत हुई। सिवा हँसी-दिल्लगी और यहाँ-वहाँ की चुलबुली बातोंके बात-चीतमें कुछ अधिक रोचकता न थी।

नवाब—प्यारी गौहर! सचमुच आप ग़ज़बकी ख़ूबसूरत हैं।

प्यारी॰—ऐसा कहकर आप मुझे क्यों मुफ़्त में शर्मिन्दा कर रहे हैं? मैं इतनी खूब सूरत नहीं हूँ, जितने की आप मेरी पोशाक पहनकर हो सकते हैं। यह कहकर नक़ली गौहर चुप हो रही।

नवाब—दरोंचेशक। खुदाने हम तुम दोनोंको इसी तरह जोड़े से भेजा है, जिस तरह उसने यूसुफ और जुलेख़ाको भेजा था।

प्यारी॰—मेरा भी यही ख़याल है।

नवाब—आपको यहाँ आने में बड़ी तकलीफें झेलनी पड़ीं!

प्यारी॰—जब मैं कलकत्ते से रवाना हुई, तो सबसे भारी खुशी यह थी कि, आपसे मुलाक़ात होगी। आपकी मुहब्बत के लिये मुझे जो तकलीफें उठानी पड़ी हैं, उन्हें मैं कुछ भी नहीं समझती।

नवाब—वल्लाह! आपकी इस गुफ्तगूने तो मुझे ऐसा दीवाना कर दिया है कि, मैं आपके साथ अकेला जंगलमें रहनेको भी तैयार हूँ।

प्यारी॰—आप तो यह कह रहे हैं, पर मेरी हालत पर तो ज़रा ग़ौर फरमाइये। आपके लिये मैंने अपना घर

बार सब छोड़ा। १०००) रु० रोज़की आमदनीपर लात मारी। मुझे इस सबके छोड़ देनेका मुतलक़ अफ़सोस नहीं। मैं तो आपकी मुहब्बत की भूखी हूँ।

नवाब—मेरा फ़र्ज़ होगा कि, हर तरहसे मैं आपके नुक़सानोंका मुआविज़ा दूँ। अभी हालमें तो माफ़ कीजिये। फिलहाल मैं आपके भारी नुक़सानका ख़याल करके आपको ५००) रु० रोज़ ही दे सकूँगा।

गौहरजान—इसकी क्या ज़रूरत है। आप नाराज़ न हों, इस ख़याल से बन्दी क़ुबूल करती है। आपकी मर्ज़ीके मुआफ़िक़ काम करने और आपको हर तरह खुश रखने होमें मेरी खुशी और भलाई है। आपकी मुहब्बतकी वजह से मुझे वह रक़म क़ुबूल करना पड़ती है। मैं तो जो जानसे आपकी हो चुकी हूँ, जो चाहे सो कीजिये

नवाब—मुझे भी इस बातका फ़ख़्र है। मैं भी उसीदिन अपनेको खुशक़िस्मत समझूँगा, जबकि निकाहके बाद आप को अपनी बेगम बना पहलूमें बिठाऊँगा।

गौहरजान—क्या आप इस ख़ाकसारसे सचमुचही मुहब्बत करते हैं?

नवाब—प्यारी! क्या अब भी आपको कुछ शक है?

गौहर—अब मुझे उम्मीद कामिल है कि, आप मुझे दिलोजानसे चाहते हैं।

नवाब—मुझे आपसे भी यही उम्मीद है। सचमुच मैं बड़ा खुशक़िस्मत हूँ, जो हिन्दुस्थानकी सबसे बढ़िया गायका का शौहर बनूँगा, जो हिन्दमें अपना सानी नहीं रखती

गौहर— मेरे पास निकाहके लिये नवाब जुलफ़िकारने संदेसा भी भेजा, पर मैंने उसे उसकी बदतमीज़ीके सबब बड़ी फटकार बताई।

नवाब— मुझे देखकर तो अब वह आग-बबूलाही हो जायगा और मुझसे बड़ा हसद करेगा।

गौहर— आपको यह बात शायद मालूम भी न होगी कि, बिहारके शाहन्शाहने मेरे पास एक बीरबल सिर्फ़ बातचीतके लिये भेजा था कि, मैं उसे अपना यार क़बूल करलूँ। न जाने क्या-क्या नादानी ये लोग कर बैठते हैं! मुझे पैसेकी क्या परवा है?

नवाब— जब वह मनहूस मेरी और आपकी मुहब्बतका हाल सुनेगा,तब तो गुस्से से ओंठ चबा डालेगा कि,आपने अपना दिल मुझे आप ही दे दिया।

गौहर— (स्वगत) मेरे पास न किसीके देनेको दिल है और न किसीका दिल लेनेको दिल है। मुझे तो ऐसे कामोंसे नफ़रत है। सिर्फ़ मुहब्बत है तो रुपये से, न कि किसीके दिलसे। (ज़ोरसे) हाँ साहब! मुहब्बतका असर तो दोनों तरफ़ यकसाँ ही रहता

है। मैं तो सच कहती हूँ, अगर आप मुझे प्यार करना छोड़ दें, तो मैं दूसरे ही दिन यहाँसे क़ब्रमें सोती हुई नज़र आऊँगी। यह बतलाइये कि मेरे पास किस बातकी कमी है। ख़ुदाकी शान है, कि इस बन्दीको ज़र माल और इज्जत वग़ैर: जैसी चाहिये वैसी अल्लाहतालाने बख़्शी है। सिर्फ मुझे अब एक शख़्स की ज़रूरत थी, जिसे मैं अपना दिल दे सकूँ। मैंने बहुत तलाशकी, पर कुछ नतीजा न निकला। आख़िरकार आपके फोटोने मुझे दीवाना बना दिया और उसी दिनसे मेरा दिल, मेरा न रह कर, आपका होगया।

नवाब— मेरी दिलरुबा! मुझे हरचन्द तुम्हारे कहनेका यक़ीन है। मुझे यह भी मालूम है कि, पैशमानाबाद के नवाबने आपके साथ निकाह करना चाहा था। उसकी ख़ूबसूरतीके वजहसे उसे हर जगह कामयाबी भी हो जाती है। आपने उसे भी क़ुबूल न कर मुझ ख़ाकसारको ही पसन्द किया है। आपको पाकर, मैं समझता हूँ, मेरे दो ख़ुशक़िस्मतीके तारे दिखेंगे। एक तो तुम्हें पानेका; दूसरा उस नालायक़ नवाबको चिढ़ानेका।

मौहर— बेशक वह ख़ूबसूरत है, पर वह अपनी दिलरुबा से भी अपने तईं ज़ियादा ख़ूबसूरत समझता है, यह

उसकी बड़ी नालायकी है। इससे तो यह कहना पड़ता है कि, वह खुद अपनेसे इतनी मुहब्बत करता है कि दूसरेंको मुहब्बेत करनेके लिये उसके पास दिल ही नहीं।

नवाब— और दीनापुर के राजा के बारे में आप का क्या ख़याल है ?

गौहर— वाह ! वाह ! उस बङ्गाली राजाकी तो अजब हालत है। मोटे तो बेशक दो आदमियोंसे भी ज़ियादा हैं, पर अक्ल तो एक बेवकूफकी भी उनसे बेहतर है। उनके सिरमें गन्दी और पागलोंकी सी बातोंका भूसा भरा है। जोशीले भी बड़े हैं, पर कमज़ोर भी उन जैसा दूसरा न होगा। थोड़ेमें क़िस्सा यों ख़तम होता है, कि उन जैसा सिवा उनके और कोई भी नहीं और उनके यार दोस्तोंमें भी वे एकही हैं। रहनेकी जगह जो उन्हें पसन्द है वह भी बड़ी बेमौक़े है। उन्हें तो अलीपुरके बाग़ या राम निदास बाग़में बँगलिया पसन्द करनी थी। राजा साहब की इतनी तारीफ़ सुनकर नवाब साहब हँसी न रोक सके और फिर बोले:—

नवाब—रामगंजके राजाका भी तो कुछ हाल कहिये।

गौहर—-वह तो पीर नाबालिग़ पक्का शैतान है। ऊपरसे तो साधुको भी मात करता है, पर जब मुहब्बतका मौका

आजाता है तो एक मिसाल फौरन ही मज़हबी किताब से दे देता है। उसके मानिन्द स्वाँग भरने वाले मैंने बहुत कम देखे हैं।

नवाब—हाथरसके नवाबके बारेमें आप क्या जानती हैं?

गौहर—वाह साहब! वे तो अक्लके पुतले ही समझे जाते हैं। उनका इन्साफ बड़े ही आले दरजेका होता है। झूठ और सचकी पहचानके तो ठेकेदार ही हैं; लोग उनको इसीसे बड़ी इज्जत करते हैं। गौहरके दिलमें मुहब्बत पैदा करनेवाले भी तो वही हैं,उन्हें तो यूसुफ कहना ठीक है। आँखोंका कातिलपन सभी नाज़नीनोंको मालूम है ......पर एक बात उनमें भी बहुत ख़राब है (कहकर मुस्करा दी)

नवाब— वह क्या बात है प्यारी?

गौहर— वह यह है कि किसीकी ली हुई चीज़को आप न तो वापिस ही देते हैं न उसका इस्तेमाल ही करते हैं।

नवाब—मै तो कभी किसीसे कोई भी चीज नहीं लेता (हँस-कर और मुस्कराकर)

गौहर— जो चोर और डाकू हैं, उन्हें किसीसे माँगनेकी क्या ज़रूरत है?

नवाब— कौन कहता है, मैं चोर या डाकू हूँ?

गौहर— आपके यहाँ की नाज़नीनें

नवाब— किस तरह?

गौहर— आप उनके दिलके चोर, उनके मनके चोर, होश हवाशके चोर।

ऐसे प्रेमयुक्त उत्तरको सुन नवाब साहबका सारा गुस्सा न जाने कहाँ काफ़ूर होगया और वे हँसकर बोले—:
"उन्होंने जो कुसूर मेरे ऊपर लगाया है, उसे मैं क़ुबूल करता हूँ, पर उन सबकी खुशीके लिए मैं अपने एक दिलको उन सबके पास किस तरह भेज सकता हूँ ? इसीसे मैं ख़ामोश रहता हूँ।"

गौहर— पर यह जानकर मुझे खुशी है कि, वह आपके पास मुझ खुशक़िस्मतके लिये सही सलामत है, जिसके लिये मैं आपका शुक्रिया अदा करती हूँ। शुक्रियाके अलावा बतलाइये मुझ ख़ाकसारसे आप और क्या चाहते हैं।"

नवाब— आप खुद ही समझ सकती हैं, मुझसे क्यों कहलवाना चाहती हैं ?

गौहरने कुछ उत्तर न दे, नवाब को अपनी तिरछी चितवनके बाणसे अनुमोदन दे दिया। जिसके पश्चात शीघ्र ही बैठकख़ानेके चारों ओरके किवाड़ बन्द कर दिये गये।

प्रिय पाठको ! आपलोग भी अब यहाँसे विदा होकर देखिये कि आगे क्या होता है।

अठारहवाँ परिच्छेद ।

त्याग ।
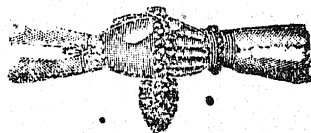
हमने दूसरे दिन सवेरा होतेही प्यारीजानको बुरका ओढ़े नव्वाब साहबके महलको सीढ़ियों परसे उतरते हुए देखा। उसी हालतमें दो घोड़ेकी गाड़ीमें बैठकर वह अपने स्थानको चली गई ।

रातको दोनोंमें जुदाईके पहले जो बातचीत हुई वह इस प्रकार है ;—

नवाब—प्यारी! आफताब हमलोगोंके आराममें खलल डालनाही चाहता है। चार तो बजही गये हैं, और ५ बजेके बाद आप यहाँसे रुखसत होंगी (कह कर लम्बी साँसली)।

जौहर—मेरा आपके बगैर जीना दुश्वार है। पर इस बात से तसल्ली ज़रूर है, कि रात होते ही हम लोग आपसमें फिर मिल सकेंगे। आपके बगैर तो मुझे घर बड़ा ही बुरा मालूम होगा। मुरादके इन्तकालका भी मुझे अफसोस है!

नवाब—वह दफन ज़रूर कर दिया जायगा, क्योंकि वह मेरे जिगरी दोस्तों मेंसे था और खान्दानी शख्स था।

गौहर—इसमें शक नहीं कि वह बड़ाही सआदतमन्द था। उसने आपकी दोस्ती को बड़ी ही खूबी और दयानतदारी से निभाया था। कभी भी उसकी ज़बानसे ऐसे अल्फाज़ नहीं निकले, जो मुझे किसी तरह नागवार मालूम हुए हों उसकी ईमानदारी के सबब से ही उसपर मेरी खूबसूरतीका कुछ भी ज़ोर नहीं चला। मुझे वह अपनी हमशीरा से भी ज़ियादा पाकनियतीसे देखता था।

नवाब— खान्दानी आदमी आखिर खान्दानी ही होता है। मुझे उसकी ये सब बातें सुन, उसके फौत होने का निहायत अफसोस है।

गौहर— यही अफसोस तो मुझे भी खाये डालता है! जब यह ख्याल करती हूँ, कि वह लावारिस मर गया है, तब कभी-कभी तो मुझे भी ज़िन्द वगैरः का शक होने लगता है। कहीं ऐसा न हो कि, उसकी रूह मुझे सतावे। इससे यदि आप मुझे इसी आलीशान महलमें रहनेकी जगह करा सकें, तो बड़ी मिहरबानी हो।

नवाब— दिलरुबा! यह महल-घरबार, धन-दौलत, नौकर-चाकर और खुद ये बन्दा सब आपही के हैं। खुदाकी

लिये रहम कीजिये और निकाह हो जाने दीजिये। बाद उसके तुम्हारा यहाँ रहना बहुत ज़रूरी होगा। फिलहाल आप कुछ रोज़ उसी मकानमें गुज़र कीजिये; गोकि मैं जानता हूँ कि आपको वहाँ निहायत तकलीफ होगी। आपकी असलियत यानी गौहर होना, किसीको भी नहीं मालूम। यह कोई नहीं जानता, कि जिसकी हिन्दुस्थानमें गानेमें चारों तरफ शोहरत हो रही है, वह नायाब रूहानी आपही हैं, जिससे मिलनेके लिये हज़ारों नवाब और राजा आज-दिन तरस रहे हैं। तब भी मुझे शक है कि, मेरी माँ यह जानकर कि आप गौहर जान तवायफ कलकत्ते वाली हैं, मुझे निकाह करने की इजाज़त शायद न दें। वे पुराने ख़यालकी औरतोंमेंसे हैं। इससे मुझे आपको अपनी असलियत छिपानेकी भी तकलीफ देनी पड़ेगी। मैं उम्मीद करता हूँ कि, आप मेरे लिये इस बातको ज़रूरही मंजूर करेंगी। इसमें कुछ अड़चन न होगी। आप अपने तईं मेरे फौत हुए दोस्त मुरादकी बहन—बेगम जहान आरा—बतला सकती हैं। असलमें मेरा दोस्त मुराद कोई अदना आदमी न था। उसका चाचा बुँदेलखण्डमें एक आला खान्दानी है, यह तो सब जानते हैं। अब बढ़िया तरकीब यही है, कि आप उसे अपना भाई कहें,

और लोगोंसे यह भी कह दें कि, आप उसे फिरसे अपने वतनको वापिस लिवा जानेके लिए आई थीं और इसी बातको मंज़ूर करानेके लिये आप उसके हमराह मेरे ग़रीबख़ाने पर कल रातको आने वाली थीं, पर बीचही में उसकी दर्दनाक मौतने उसे आपसे अलाहिदा कर दिया।

इस तरह अगर आपने काम साध लिया, तो दो काम हो सकते हैं। पहला तो यह कि, मेरी माँ आपको बेगम जहानआरा, मुरादकी हमशीरा, जानकर मुझे निकाहकी इजाज़त देदेंगी। दूसरे, मुराद बख़्शके सामान वगैरःको भी आप आसानीसे बचा सकेंगी। गो माल कुछ ज़ियादा न होगा, तोभी ५०००) से कम का भी न होगा। इसलिये आप कुछ दिन पर्देमें रह, निकाह के वक़्त तक ख़ामोशी साधे रहिये। मैं उम्मीद करता हूँ कि, हमारे पौबारेके लिये यह तरीक़ा बड़ा ही अच्छा होगा।

गौहर—आपकी अक़्ल देखकर तो मेरी आँखोंमें चकाचौंधीसी आगई। वाह साहब वाह! आपने ख़ूब तरकीब बताई! मुझे आपका कहना मानना हर तरह ज़रूरी है। मैं आजसे अपने तईं आपके दोस्त मुरादहीकी बहिन समझूँगी।

नवाब—मुझे उम्मीद है कि; आप मेरी सआदतमन्द जोरू बनेंगी।

गौहर—वह दिन भी खुदाने चाहा तो दूर नहीं। आप देखेंगी, बन्दी क्या कर सकती है!

पाठक! आप इसीसे समझ सकते हैं कि, आपने प्यारी जानको एक मुसल्मानी महिलाकी तरह जोड़ी गाड़ीमें बैठे क्यों देखा है? और उसने उस समय अपने चटकीले वेश्यारूपमें निकलना क्यों पसन्द नहीं किया? जब पुलिसने आकर उससे मुरादबख़्शकी मौतके बारेमें कुछ सवालात किये, तो बाहर न आकर उसने भीतरहीसे उनके जवाब दिये। वह सवाल-जवाब इसक़ैल दर्ज किये जाते हैं:—

सब इन्सपेक्टर—आप कौन हैं?

प्यारी—मैं मुरादकी हमशीरा (बहिन) हूँ।

सब इन्सपेक्टर—आप यहाँ कब तशरीफ लाईं?

प्यारी—मैं आज सवेरे यहाँ आई थी।

स० इ०—कहाँ से?

प्यारी—बुँदेलखण्ड से।

स० इ०—किस ग़रज़ से?

प्यारी—भाई मुराद को वतन लौटा ले जाने की ग़रज़ से।

स० इ०—आप जानती हैं कि वे इस वक्त कहाँ हैं?

प्यारी—मैंने सुना है कि कहीं बाहर गये हैं।

स० इ०—क्या आपको उनके इन्तक़ाल कर जाने (मर-जाने) की ख़बर क़तई नहीं मिली? क्या आप नहीं

जानतीं कि रात को वे गाड़ी के नीचे दब कर मर गये ?

प्यारी—"या अल्लाह! मैं यह क्या सुन रही हूँ!" यह कह कर वह ज़ार ज़ार रोने और सिर पीटने लगी!

सब इन्सपेक्टर साहब ने तहक़ीक़ात और पूछताछ से अपनी तसल्ली करली कि, मरनेवाले का वारिस है और बादमें अपने थानेका रस्ता लिया। उनके पीठ फेरते ही प्यारीजान खिलखिलाकर हँसने लगी। रोना और हँसना उसके बाएँ हाथका खेल था, यह तो हम पहले ही लिख चुके हैं। ऐसी बातों से चतुर से चतुर मनुष्य भोंदू बन जाता है।

उसी दिन मुसलमानों के धर्मशास्त्र-अनुसार मियाँ मुराद का क्रिया-कर्म कर दिया गया। चन्द आदमी लाशको ले जाकर दफना आये। पीछे किसीने उसको याद भी न की। अतः हम भी उसके विषयमें अधिक न लिखकर, पाठकोंका सन्देह दूर करने के लिए, प्यारीजान, नवाब साहब और मुरादके संबन्धमें चन्द बातोंका लिखना ज़रूरी समझते हैं।

मुरादके मरते ही प्यारीजान बेहोशी की हालतमें नवाब साहब के महल में पहुँचाई गई, यहाँतक हमारे पाठक जानते हैं।

जिन लोगों ने प्यारीको पारसी साड़ी पहने हुए देखा था, उन्होंने समझा कि वह कोई पारसी लेडी थी और नवाबने उसे रातभर अपने महलमें रखकर सवेरे भगा दिया होगा। कोच-

वान नवाब साहबका बड़ा विश्वासपात्र था। बातें बनानेमें भी बड़ा तेज़ था। उसने लोगों के दिल में वही बात जमा दी। उसने सबसे कह दिया कि, मैं जिस पारसी लेडीको गाड़ीपर लाया था, उसे ष्टेशनपर पहुँचा आया। वह टिकट लेकर देहली चली गई। कोचवानके सिवा और कोई इस भेदकी बातको जानता न था कि, रातवाली पारसी लेडी मुराद की बहिन जहानआरा बेगम है। उसने यह बात किसीसे भी नहीं कही।

इस बात के कहने की विशेष आवश्यकता नहीं है कि, जिस वक्त सब इन्सपेक्टर साहब नवाब साहबके महलमें तह-क़ीक़ात के लिए आये और उन्होंने नवाब साहबके इज़हार लिये, तब नवाब साहब ने अपने बयान में यह कहनेकी कोई ज़रूरत न समझी कि, गाड़ी के टूटनेके समय मुराद के साथ कोई औरत भी थी।

लोग इस बातको किसी तरह न समझ सके कि, रातवाली पारसी लेडी ही जहानआरा बेगम बनी हुई है। किसी के जानने की सम्भावना भी न थी। हाथरसमें कौन समझ सकता था कि, यह जहानआरा बेगम आगरे की मामूली तवायफ़ प्यारी जान हैं।

दीवाना मन भला किसे चक्कर मे नहीं डाल देता? यदि उसने नवाब साहबको भी अपना खेल दिखा चक्कर में डाल दिया, तो इसमें आश्चर्य्य की कौनसी बात है? कोचवानकी

मिहरबानी से नवाब साहबको हर रोज़ रात के वक्त अपनी प्यारी बेगमसे मिलनेका मौक़ा मिल जाता था। इसी तरह बीस दिन गुज़र गये। इस समय तक उस चालाक औरतने नवाब साहब के सिर पर दस हज़ारकी चपत जमा दी थी। यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि, नवाब साहब ने जब प्यारी को अपनी निकाहशुदा बेगम बनाना मञ्जूर कर लिया था, तब उसे नवाब साहबको ठगने की क्या ज़रूरत थी? इस सवाल के हल करने के लिए दिमाग़को ज़ियादा तकलीफ देने की ज़रूरत नहीं। यह बहुत सीधी बात है। प्यारी बड़ी चालाक रण्डी थी। रण्डियाँ किसी से भी मुहब्बत नहीं करतीं। वह लोग सिर्फ पैसे से मुहब्बत करती हैं। पैसा ही उनका सच्चा यार है। पैसे ही के लिए वह लोगोंको अपने जालमें फँसाती हैं, उन्हें अपनी मुहब्बत दिखाती हैं। जबतक पैसा देखती हैं, तबतक उनकी ताबेदार बनी रहती हैं और अपनी भरसक हरेक उपाय से पैसा घसीटती हैं। प्यारी भी यही काम करती थी। उसे नवाब से ज़रा भी मुहब्बत न थी। पैसे के लिए उसने ढोंग बना रक्खा था। पैसे के लिए ही उसने नवाबको उल्लू बनाकर यह जँचा रक्खा था कि, जहानआरा नवाब साहबको तहे दिलसे चाहती है और दिनरात उनकी मुहब्बतमें दीवानी बनी रहती है। अगर वह ऐसा न जँचाती तो बीस दिन में ही दस हज़ार पर हाथ कैसे फेरती? वह जानती थी कि न जाने पीछे क्या

हो? कहीं भण्डाफोड़ न हो जाय? भगवान् ऐसा न करें और यदि कहीं ऐसा हो होगया तो फिर कोरी रह जाऊँगी। इस से नौ नक़द न तेरह उधार, जितना हाथ लग सके उतना अपने कब्जे में करना चाहिये। अगर बेगम न बनी, बीच ही में भेद खुल गया अथवा शादी भी होगई, और पीछे नवाब को मेरा असली हाल मालूम होगया, तो संभव है कि वह तलाक़ भी दे दें, क्योंकि मुसलमानोंमें निकाह भी जल्दी हो जाता है और तलाक़ भी जल्दी दे दी जाती है। इन्हीं सब बातोंका आगा-पीछा सोचकर वह नवाब को उल्लू बनाकर अपना मतलब गाँठ रही थी। हाँ, उसके दिल में बेगम बनने की भी बड़ी भारी इच्छा थी, मगर वह दूरदर्शिता से काम लेती हुई मन में यह भी सोचती थी कि, यदि नवाबने विवाह न किया, या करके तलाक़ देदिया, तो रुपया होगा तो काम आवेगा।

नवाब साहब ने एक दिन जहानआराके साथ शादी करने के लिए अपनी माँ से सलाह ली। पहले तो माँ ने साफ़ इँकार कर दिया, मगर जब सुना कि वह मुरादकी बहिन और एक आला ख़ान्दान की बेटी है, तो वह भी राज़ी होगई, मगर एकबार अपनी आँखों से देखने की इच्छा प्रकट की।

नवाब साहब ने जहानआराको अपनी माँके पास ज़नान-ख़ानेमें भेज दिया। महल में उसके जाते ही सारी औरतोंने उसे घेर लिया और उसकी ख़ूबसूरती पर सभी लट्टू हो

गईं। सभी रीझ गईं और सभी ने ऐसी खूबसूरत बेगम का मिलना बड़ी भारी खुशकिस्मतीका बाइस समझा। नवाब की माँ ने फ़ौरन मञ्जूरी देदी। नूरजहाँ कमरे में बीमारी के कारण पड़ी हुई थी, इस से वह अपनी भावी भौजाई को न देख सकी। मगर उसने भी किसी तरह राज़ी होकर अपनी अनुमति दे दी।

हर रोज़की तरह उस रातको भी कोचवान जहानआरा को नवाबके महलमें ले आया। आज दोनोंके चेहरों पर एक निराली ही कान्ति झलक रही थी। विवाहके सम्बन्धके विचारों में दोनों ही ग़ोते खारहे थे और स्वर्गीय आनन्दका उपभोग कर रहे थे। बूढ़ी बेगमको धोखा देकर उसको मञ्जूरी ले लेनेके कारण आज जहानआरा फूली न समाती थी। आज वह मन ही मन अपनी सौन्दर्य और अपनी चतुराईकी स्वयं प्रशंसा करती थी और कहती थी कि, वाहरे मैं! मैं मैंही हूँ। मैं अपनी खूबसूरती और चालाकी से हर किसी की आँखों में धूल झोंक सकती हूँ। इधर नवाब साहब भी फूल-फूलकर कुप्पा हुए जाते थे और कहते थे—"ओह! मेरे जैसा खुशक़िस्मत दूसरा कौन होगा? आजकल मेरा सितारा बुलन्दी पर है। इसी से वह गौहर, जिसने बड़े-बड़े अमीरों से बात तक नहीं की, अनेक धनी रईस और ज़मींदारों को जिसने सूखी फटकारें और झिड़कियाँ सुनाईं, आज मेरी है और थोड़ी देर बाद जब शादी हो जायगी,

तब तो बिलकुलही मेरी हो जायगी। न मेरे पास वैसा धन-माल है, न मैं कोई बड़ा भारी दौलत-मन्द हूँ, लेकिन फिर भी गौहर धनियों के ठोकर मारकर मेरी हो रही है, इसे मैं अपनी खुशकि़स्मती न समझूँ तो क्या समझूँ ? बड़े-बड़े अमीर-उमरा और नव्वाब जब सुनेंगे कि गौहर मेरी बीबी होगई है, तब तो उनके हसदका ठिकाना न रहेगा। बेचारे बिना आग जल-जलकर खा़क हो जायँगे। ऐसेही शेख़चिल्ली के से ख़यालातोंमें हमारे शौक़ीन नवाब साहब ग़लताँ पेचाँ हो रहे थे।

ख़यालातों का तार टूटा, तो वे अपनी प्यारी बेगम जहान-आराकी तरफ़ मुख़ातिब होकर कहने लगे:—"मेरी प्यारी बीबी दिलरुबा गौहर! मुझे यह देखकर आज अज़हद खुशी है कि, तुम मेरी वालिदा को अपनी ख़ूबसूरती से रिझा कर उनकी मञ्ज़ूरी लेने में कामयाब हो सकीं। आपकी ख़ूब-सूरतीके बाइस मुझे तो पहले ही से वैसी उम्मीद थी। अच्छा हुआ, जो हमारी उम्मीद बर आई!

गौहर—जनाबमन! अगर मैं इस इस बड़े इमतिहान में पास हुई हूँ, तो यह सिर्फ आप की मुहब्बत का बाइस है।

नवाब—मेरी दिलरुबा! मेरी ज़िन्दगी की रोशनी! मुझे तुझ जैसी बीबी पानेसे कि़तनी खुशी हुई है, यह मेरा दिल ही जानता है, उसे कहकर जताना बड़ा कठिन काम है।

गौहर—अच्छा, तो आप गौहर को दिलसे चाहते हैं ?

नवाब—बेशक, दिलो जान से।

गौहर—आप मुझे नहीं चाहते ?

नवाब—किस तरह ?

गौहर—इसलिए कि जब गौहर (सूरज) तुलू होता है, तब हम तुम दोनों अलग हो जाते हैं।

नवाब—ऐसी हालत में मैं गौहरको नहीं चाहता, जो हमको तुमको अलग करता है। मैं तो सिर्फ आपको चाहता हूँ।

गौहर—यानी आप मुझसे मुहब्बत करते हैं, न कि मेरे नाम से।

नवाब—मैं उसे चाहता हूँ जो मुझे खुशी अता करता है; उस से नफरत करता हूँ, जो मुझे आपसे अलग करता है।

गौहर—मेरा जिस्म आपको खुश करता है, आपको आराम पहुँचाता है; मगर मेरा नाम आपको मुझ से अलग करता है।

नवाब—आखिरकार फिर भी यही नतीजा निकलता है कि, मैं आपके नामके बनिस्बत आपसे ज़ियादा मुहब्बत करता हूँ।

गौहर—मतलब यह कि, आप मेरे इस जिस्म से मुहब्बत करते हैं, गौहर से नहीं।

नवाब—बेशक ।

गौहर—पर अभी-अभी तो आपने फरमाया था कि, मैं गौहर को चाहता हूँ ।

नवाब—वह मेरी ख़ता हुई । मुआफ कीजिये ।

गौहर—ऐसी बड़ी ख़ता बिना जुर्माने के माफ नहीं हो सकती ।

नवाब—जुर्माने के लिए मैं जी जानसे तैयार हूँ ।

गौहर—मेरा जुर्माना बड़ा भारी है । याद रखिये ।

नवाब—हर्ज ही क्या है ? यह घरबार ज़री-ज़ेवर सब आपही का है । चाहे जितना जुर्माना करो और चाहे जितना कराओ ।

गौहर—मेरा जुर्माना रुपयोंका नहीं है ।

नवाब—तो फिर काहे का है ? मोतियों का ?

गौहर—न ।

नवाब—माणिक का ।

गौहर—न ।

नवाब—नीलम का ? पन्ने का ?

गौहर—इन में से किसी का भी नहीं ।

नवाब—तब आपका मतलब सोनेके ज़ेवरों से है ?

गौहर—न ।

नवाब—मालूम होता है, सवारी के लिए शुतुर्मुर्ग़ चाहिये ।

गौहर—न।

नवाब—अब समझा, अपनी टाँगें बेकार करनेके लिये मोटर चाहिये ?

गौहर—न।

नवाब—तब क्या सड़क पर गिरनेके लिए बाइसिकिल लोगी ?

गौहर—न।

नवाब—जब किसी भी बातके जवाब में "न" है, तब तो तुम्हें बन्दर का जुर्माना करना चाहिये, जो रात दिन तुम्हें सताया करे।

गौहर—न। ऐसा करनेसे हाथरसवालोंको बड़ा शक होगा।

नवाब—जिस बातमें देखो उसीमें "न" तो फिर आपको क्या चाहिए ? किसीके सिर पर गिरनेके लिये बेलून या हवाई जहाज़ तो नहीं चाहिए ?

गौहर—न।

नवाब—ढाकाई रेशमी साड़ी मँगवा दूँ ?

गौहर—न।

नवाब—तब एक ग्रामोफोन ले लो, जो तुम्हें गाते वक्त चिढ़ाया करे।

गौहर—न।

नवाब—जब सबमें न, तो अपने जैसा एक बन्दर मँगवा लो।

गौहर—अगर मुझे पसन्द भी है, तो क्या आप मेरे जैसा बन्दर ला देनेमें कामयाब हो सकेंगे? आपको ऐसी उम्मीद है?

नवाब—भूपाल में बड़ी आसानीसे मिल सकता है।

गौहर—(हँसकर) आप तकलीफ़ न करें, मुझे उसकी ज़रूरत नहीं।

नवाब—मालूम होता है, शिकारके लिए बन्दूक़ चाहिये।

गौहर—मेरे पास एक मौजूद है।

नवाब—तब क्या तीर कमान चाहिये?

गौहर—उनका तो मैं खुद ख़ज़ाना ही हूँ।

नवाब—तब क्या किसी मासूम का दिल चाहिए?

गौहर—मेरे पास किसीका दिल लेने को दिल नहीं है।

नवाब—तो क्या व्हिस्की, ब्रान्डी, पोर्टवाइन लेकर पागल बनना चाहती हो?

गौहर—न।

नवाब—किरकिटका बल्ला लोगी या टेनिस का रैकट पसन्द है?

गौहर—कह तो दिया, इनमेंसे कुछ भी नहीं चाहिए।

नवाब—तब घोड़ी का अण्डा लोगी या गधे का सींग?

गौहर—(हँसकर) नहीं, ये भी नहीं।

नवाब—वल्लाह, फिर क्या चाहती हो?

गौहर—देखिये, आपका हुज़ूर...आपका हुज़ूर......

नवाब—लकड़ी से पीटोगी क्या ?

गौहर—देखिये, मैं आपको……आपको…

नवाब—घोड़ा बनाकर सवारी करोगी क्या ?

गौहर—देखिये, आपका जो जु र… जुरमाना…

नवाब—ज़िन्दगी का क़र्ज़ा लोगी ?

गौहर—नहीं जनाब ! आप तो मुझे बोलने भी नहीं देते। बीचहीमें न जाने क्या-क्या बकने लगते हैं।

नवाब—तो जो चाहिए उसे जल्दी बताओ।

गौहर—अच्छा तो आप वादा कीजिए कि, मैं बीचमें न रोकूँगा।

नवाब—न रोकूँगा—जल्द कहिये—मुख़्तसर में।

गौहर—जनाब नवाब निज़ामुद्दौला साहब बहादुरने जो मेरे नाम "गौहर" को पसन्द करने की ख़ता की है उसकी सज़ा…।

नवाब—क्या यही मुख़्तसर में कहना है ?

गौहर—(ओठ दबाकर मुस्कराते हुए) देखिए, अभी आपने क्या वादा किया था ? अगर आप मुझे बीचमें न रोकते, तो अबतक कबकी मैं अपनी बात पूरी कर चुकी होती।

नवाब—आप ही तो अपने बड़े-बड़े बालों की तरह अपनी गुफ्तगूमें बेतरह मशग़ूल हो जाती है।

गौहर—भला, मेरा अपने लम्बे बालोंमें मशगूल होना कैसे मुमकिन है ?

नवाब—वल्लाह! मेरा यह मतलब हरगिज नहीं। मैं तो यह कहता था कि आप अपनी गुफ्तगू में मशगूल हो जाती हैं।

गौहर—खैर, माफ कीजिए, गलती हुई।

नवाब—मैं भी माफ क्यों करूँ? मैं क्या बिना जुर्माना किये रहूँगा?

गौहर—पहला हक तो मेरा है न?

नवाब—बेशक, आप अदा कर लीजिए।

गौहर—क्या खूब!

यह कहकर नकली गौहर उठ खड़ी हुई और अपनी तिरछी कमानका तीर चलाती हुई मुस्कराकर नवाब साहबसे यों बोली:—

"हुजूर से जो गलती हुई है, उसके लिए आप के गोरे-गोरे गोल-मटोल गालोंपर दस बोसों की मार पड़ेगी।"

इस मीठी मारकी बात सुनते ही नवाब साहब एकदम खुश होकर बोले:—"मैं भी आपके नर्म-नर्म गुलाबी गालोंपर एक दर्जन बोसोंकी मार मारकर खामोश हो जाऊँगा, क्योंकि आप की खता भी कुछ कम नहीं। खुदा करे, हम दोनों इसी तरह खतावार होते रहें! अगर हम लोगों की खताओं पर इसी तरह के जुर्माने होते रहे, तब तो हम दोनों दिनमें हजार खता करने से भी बाज न आयेंगे।

दोनों आशिक़ माशूक़ इस तरह एक दूसरे से अपने-अपने

जुर्मानोंकी रक़म अदा करने वाले ही थे कि, अचानक नवाब साहब की भीतरी बैठकका दरवाज़ा खुला और उसमें होकर एक पीला चेहरा हाथ में एक चिराग़ लिए हुए आगे बढ़ता हुआ दिखाई दिया। उसे देखते ही दोनों प्रेमी सहम गये! पर उसके पास आते ही नवाब साहब उसे पहचान गये और कड़क कर ज़ोर से बोले:—"नूरजहाँ! क्या तुम्हारी अक़्ल मारी गई! क्या तुम एक एकदम वहशी होगईं, जो बिना मेरी इजाज़त, ऐसे मौक़े पर, मेरे कमरे में मुझे तकलीफ देनेके लिए आ पहुँचीं?

नवाब की उपरोक्त तिरस्कारपूर्ण बात सुनकर नूरजहाँ भौंचकसी रहगई और विस्मयपूर्ण दृष्टि से नवाब की ओर देखने लगी। चिराग़की रोशनी में ज्योंही उसने नवाब साहब की दिलरुबाको देखा, त्योंही वह एकदम चिल्ला उठी—"वल्लाह! मैं यह क्या देख रही हूँ! प्यारीजान! तुम यहाँ किस तरह पहुँचीं?"

अपनी बहिन की उपरोक्त बात सुनतेही नवाब साहब को तो काठ मार गया। काटो तो खून नहीं। हाथपाँव सुन्न होगये। यही हाल प्यारीजान का भी होगया। चन्द मिनिटके बाद नवाब साहब सम्हल-सम्हलाकर बोले—"नूर-जहाँ! अच्छी तरह सुबूत होगया कि, तुम्हारा दिमाग़ ख़राब होगया है। अगर यह बात न होती, तो तुम रातके वक़्त मेरे कमरे में आकर मेरे आराम में ख़लल न डालतीं—मुझे

न सतातीं। खैर, यह तो हुआ सो हुआ, पर तुमने हिन्दुस्तानकी मशहूर-मारूफ तवायफ गौहरजान को प्यारीजान कहकर उसको बड़ी भारी तौहीन की! यह सबसे बुरी बात हुई।

नूरजहाँ—मैं नहीं जानती कि मैं यहाँ किस तरह आ पहुँची, खुदा जाने मुझे यहाँ कौन ले आया? पर इसमें ज़रा भी शक नहीं कि जो औरत आपके पास खड़ी है, वह आगरे वाली प्यारीजान के सिवा और कोई नहीं। मैं उस के पहचाननेमें हरगिज़ भूल नहीं कर सकती। मुझे दो एक बार उसके साथ नाचनेका मौक़ा मिला है।

नवाब—क्या यह कलकत्तेवाली गौहर नहीं है?

नूरजहाँ—इसे अगर आप गौहर समझते हैं, तो मैं भी एक गौहर हूँ।

अपनी बहिन नूरजहाँकी बात सुनते ही नवाब साहबको विश्वास होगया कि, इस शैतान मक्कारा ने मुझे गौहर बनकर धोखा दिया है। उन्हें अपनी बेवकूफी पर बड़ा रञ्ज हुआ। मुरादके विश्वासघात पर भी बड़ा क्रोध आया। गुस्से के मारे मुँह तमतमा आया। आँखों से खून बरसने लगा। दाँत पीसकर प्यारीकी ओर बढ़े और बोले—"ए मक्कार औरत! तूने जो मेरे साथ फरेब किया है, इसका बदला तुझ से अच्छी तरह लिया जायगा।"

प्यारीजान नवाब को एक की चार सुनाने के लिए पहले

ही से तैयार थी। नवाब के उपरोक्त बात कहते ही बोली—"आपकी ऐंठ की यही मुनासिब सज़ा थी।"

नवाब—मैं तुझे पुलिसके सिपुर्द करूँगा और अब तुझे जेलके मज़े चखने पड़ेंगे।

प्यारी—मुझे तो यह उम्मीद नहीं कि, आप खुले तौरपर दुनियाके सामने अपनी बेवकूफीका डङ्का पीटें। जब लोग सुनेंगे कि एक अदना रण्डीने आपको धोखा दिया, तब सब आप ही की हँसी करेंगे। अगर आप मुक़दमा चलायेंगे, तो आपकी बेवक़ूफी खुद गौहर को और तमाम जहान को मालूम हो जायगी। आपका गँवारपन सारे जहानको आईनेके माफिक़ साफ दीखने लगेगा। मेरा कुछ न बिगड़ेगा, क्योंकि सारे वकीलों की कुञ्जी मेरे पास है। अगर आप अक़्लमन्द हैं, तो मेरी सलाह से मुक़दमे का तो नाम ही छोड़ दीजिये। अदालत न जाने की क़सम खा लीजिए।

नवाब—यह तभी हो सकता है, जब कि तुम मेरा माल-असबाब और ज़र-ज़ेवर जो तुमने मुझ से ठगा है, मुझे वापिस कर दो।

प्यारी—क्या मेरी अक़्ल मारी गई है? मैं तुम्हें एक पाई भी वापिस न दूँगी।

नवाब—अगर तुम मेरी बात न मानोगी, मेरा माल मुझे न लौटा दोगी, तो मैं तुम्हारा पोशीदा राज़ सबके सामने ज़ाहिर कर दूँगा। सब को तुम्हारी असलियत मालूम हो जायगी।

प्यारी—अगर आप ऐसा कर सकते हैं, तो शौक़से कीजिये। पर याद रखिये कि आपकी हमशीरा साहिबा की भी इज्ज़त-आबरू मेरे हाथ में है। मैं क्यों कसर करूँगी?

प्यारीके अन्तिम वाक्यों से नूरजहाँके दिलपर भारी आघात पहुँचा। एकदम सन्नाटे में आगई। आँखों में अँधेरा छा गया। उसे इस बातका औरभी भारी दुःख हुआ कि, उसके कारण नवाब साहबको प्यारीजानसे दबना पड़ा, उस से हार माननी पड़ी और उसका बाल भी बाँका न कर सके। लाजके मारे उसका मस्तक अवनत होगया। लम्बें-लम्बे साँस लेने लगी। शोकसागर में निमग्न होकर शतरञ्जी पर गिर पड़ी। उसे अपने पिछले जीवनकी सारी बातें याद आगईं और वह अपने उद्वेग को रोक न सकी।

प्यारीजान इस बातको अच्छी तरह समझ गयी कि, उस की विषपूर्ण कड़वी बातों का असर नूरजहाँ और नवाब दोनोंपर अच्छी तरह पड़ा है। अतः वह नवाब से बोली—"मेरे प्यारे शौहर! मेंरे अच्छे खाविन्द! मेरी गुस्ताखी माफ कीजिये। दर असल, मैं आपकी मुहब्बत में दीवानी होरही थी, इसीसे मैंने यह स्वाँग भरा था। और आपसे वादा कराया था कि, आप मुझसे मुहब्बत करते हैं न कि गौहर जान से। आपने वादा भी किया था, मगर अब आप वादे-खिलाफी करते हैं। मेरी यही आरज़ू है कि, आप अपने वादेपर क़ायम रहें यानी मुझ से मुहब्बत करें।

इस वक्त सारा खेल देखकर नवाब साहबकी आँखें खुल गई थीं, अतः वह अब उसके चक्कर में न आये। फिरसे उस के जाल में न फँसे। बोले,—"बीबी! मुआफ कीजिए। अब मैं आपके फन्दे में हरगिज़ न फँसूँगा। अब आपकी मिन्नत और आर्ज़ूओं से कोई काम न होगा। मैंने अपनी नादानी और बेवकूफीकी काफी सज़ा पा ली।

प्यारी—तो अब आप मुझ से मुहब्बत नहीं करते?

नवाब—ओफ! लानत है तुझ से मुहब्बत करने वाले पर! तुझ से मुहब्बत करना और साँप से मुहब्बत करना एक ही है। पहले मैं साँपसे मुहब्बत कर लूँ, पीछे तुझ से मुहब्बत करूँगा।

प्यारी—लाख-लाख शुक्र हैं उस खुदावन्द करीमको कि, नूरजहाँ ने आपको उस काले साँप से, जिसने आपका दस हज़ारका खून चूस लिया, बचा लिया; नहीं तो चन्द रोज़ में आप कौड़ी काम के न रहते, एकदम नेस्तनाबूद हो जाते।

नवाब—नूरजहांने जो किया है, उसके लिए तुम्हारे शुक्रिया अदा करने की कोई ज़रूरत नहीं है। हाँ, मेरे लिए बेशक वह सुधारकी पहली सीढ़ी हुई।

प्यारी—खैर, आप मुझे गौहर समझकर प्यार न करें तो न सही, मगर एक सर्दारकी सआदतमन्द बेटी जहानआरा बेगम समझने में तो कोई उज्र नहीं?

नवाब—मेरे ज़ख्मों पर नमक न छिड़क। मुझे तेरी

सूरत से सख़्त नफ़रत है। ख़ुदा तेरा काला मुँह न दिखावे। मुझे एक मिनिट के लिए भी तेरे पास रहना पसन्द नहीं। बेहतरी तो इसी में है कि, तू यहाँ से काला मुँह करे।

प्यारी—ख़ैर, मैं तो अब जाती ही हूँ। मगर चलते-चलाते आपसे फिर यह अर्ज़ करती हूँ, कि आप अपनी ख़ाकसार दिलरुबा गौहरजान उर्फ़ जहानआरा बेगम उर्फ़ प्यारीजानको न भूलें, हरदम दिलमें रक्खें।

नवाब—जो सबक़, मैंने आज सीखा है, उसे ताज़िन्दगी न भूलूँगा।

प्यारी—मुझे ख़ुशी है कि आपकी वहशत काफ़ूर हो गई। अगर अभी कुछ बाक़ी है, तो मुझे हुक्म दीजिए कि उसकी भी सफ़ाई कर दूँ। सच मानिये, मैं आपको एक वहशीके सिवा और कुछ न समझती थी और वहशी समझकर ही आपको प्यार करती थी।

नवाब—अब मेरे जिगर में और नश्तर खानेकी जगह नहीं है। माफ कर, अब मेरी वहशत दूर होगई, अक़्ल ठिकाने आगई।

प्यारी—तब तो दस हज़ार रुपये जो आपने मुझे अपनी ख़ुशीसे दिये हैं, मेरी डाक्टरीकी फीस में वसूल हुए। इलाज में कामयाबी हुई, इसलिये अब मुझे इनाम और मिलना चाहिये।

नवाब—अगर आप यहाँ से अभी-अभी तशरीफ का टोकरा

न ले जायँगी ; तो इनाम में पाँच चाँटे आपके गालों पर रसीद किये जायँगी। तब आपकी भी अक़्ल ठकाने आ जायगी।

प्यारी—बहुत ख़ूब! वालेकुम सलाम। लीजिये बन्दी जाती है।

यह कह, दरवाज़ा खोलकर वह जानेके लिए तैयार हुई। मगर परमात्मा को औरही कुछ मंज़ूर था। दुर्भाग्य से प्यारी जान का पैर बिजली के तारोंमें उलझ गया। वह धक्का खाकर ऐसी गिरी कि, गिरते ही बेहोश होगई और एक तार उसकी दाहिनी आँखमें भी घुस गया, जिससे उसकी वह आँख बिल्कुल बेकाम होगई। इसके सिवा उसके चेहरे पर भी कई जख़्म आगये। उसके सिर, आँख और गालोंसे ख़ूनकी धाराएँ बहने लगीं। सख़्त दर्द के मारे फर्श पर पड़ी-पड़ी चीखने और चिल्लाने लगी। यह हाल देखकर नवाब साहब और नूरजहाँ शीघ्रही उसकी सहायताके लिये दौड़े। डाक्टर भी शीघ्र ही बुलाया गया। डाक्टरने आते ही दवादारू करके उसका ख़ून बन्द कर दिया।

प्यारी की ऐसी दुर्दशा देखकर नवाब के दिलमें उसकी ओरसे जो बुरे विचार थे वह पलट गये। उनका क्रोध उड़ गया। दया ने उनके दिलमें घर किया। नवाब साहब के कमरेमें एक बढ़िया पलँग पर नर्म-नर्म बिछौने बिछाकर उसपर वह लिटा दीगई। नूरजहाँने उसकी सेवा-शुश्रूषा इस-तरह सेकी, मानो वह उसकी सगी बहिन थी। दूसरे दिन एक

नर्स—दाई—उसकी बीमारदारीके लिए नियत की गई। नूरजहाँ एक मास तक हरदम उसीके पास बनी रही। जैसे-तैसे करके वह अच्छी होगई। मगर एक आँखके जाते रहने और गालों पर ज़ख़्मोंके दाग़ बने रहनेके कारण उसकी ख़ूबसूरती बहुत कम होगई। अब उसके चेहरे पर पहलेसे आधा जोबन भी न रहा। उसे इस बात से बड़ा दुःख होता था, मगर पार क्या बसाती थी? आई तो थी वह नवाब का सत्यानाश करने, मगर होगई ख़ुदकी दुर्दशा। जो और के लिये 'कुआ खोदता है, उसके लिये खाई तैयार है' यह मसल यहाँ बावन तोले पाव रत्ती उतर गई।

नवाब साहब पर इन घटनाओंका बड़ा असर हुआ। उन्होंने उसी दिनसे अपनी बुरी आदतों को हाथ जोड़ दिये। अनेक बार बुराई से भलाई होती देखी गई है। नवाब साहबको भी बुराई से ही शिक्षा मिली। उन्होंने बहुत कुछ तो नूरजहाँके दृष्टान्तसे सीखा और रहा सहा प्यारी जान से। अब वे औरही आदमी हो गये। उनकी आदतोंने एकदमसे पल्टा खाया।

उन्होंने प्यारी जानकी दुर्दशाके समय एक भी शब्द अपनी ज़बानसे ऐसा नहीं कहा, जिससे कि प्यारी का दिल दुखता। उन्होंने हर तरहसे उसे आराम पहुँचानाही अपना फ़र्ज़ समझा। उसकी बीमारीमें दिल खोल कर रुपया खर्च किया। उसे हर तरहके आराम पहुँचाये। नवाब साहबके इस

बर्तावसे प्यारीका स्वभाव भी बदल गया। उसके हृदयमें पवित्र भावोंका आविर्भाव हुआ। अनेक बार कष्ट ही मनुष्यका सदुपथ-प्रदर्शक होता है। उसके प्रभावसे चित्त औरही तरह का हो जाता है। अहंभाव का नाश होकर, उस को हर बुरी या भली बातमें ईश्वर का हाथ नज़र आने लगता है। वह समझने लगता है कि, संसारमें प्रत्येक काम बिना ईश्वरेच्छाके नहीं होता। एक पत्ता भी बिना उसकी इच्छाके नहीं हिलता। ईश्वर की शक्ति और उसकी महिमा पर पूर्ण विश्वास हो जाता है। इसके लिये दृष्टान्त ढूँढ़नेके लिये दूर जाने की आवश्यकता नहीं है, प्यारी जानहीका हाल देख लीजिए। कुछ दिन पहले उसके क्या रँग-ढँग थे। मिज़ाज सातवें आस्मान पर चढ़ा रहता था। अपने सामने सब को हेच समझती थी। लेकिन आज मुसीबत के पञ्जे में फँसनेसे, रूप और सौन्दर्य्य के नष्ट होजानेसे, उसकी स्थितिमें कितना परि-वर्त्तन होगया है। आज वह प्यारीजान नहीं है, आज वह दूसरी ही होगई है। अब वह समझने लग गई है कि, प्रत्येक कार्य्य की सफलता और विफलता परमात्माके हाथमें है। मनुष्य कोई चीज़ नहीं।

"हाथ बुराई करे तो हाथ को काट डालो। जीभ कुवचन कहे तो जीभ को निकाल डालो। सारे शरीर की अपेक्षा शरीरके एक अवयवको दण्ड मिल जाना ठीक है।" यह वचन सिद्धगुरु महात्मा यीशू ख्रीष्टने कहा है। इस वचनको

सत्यता प्यारी जान पर पूर्ण रूपसे प्रमाणित होगई। उसकी एक आँखके जाते रहने और सौन्दर्य्य के नष्ट होजानेसे भला ही हुआ, क्योंकि उन्हीं की सहायतासे वह घोर पापकर्म करने में समर्थ होती थी। उसने स्वयं इस बातको मान लिया कि, ईश्वरने न्याय किया। जैसी मेरी करनी थी, ठीक उसके उपयुक्त ही दण्ड मुझे मिला। जब मनुष्य की सामर्थ्य घट जाती है, तब वह अपनी क्षमता का ह्रास होजानेके कारण विषय-वासने से—पापोंसे—घृणा करने लगता है। अन्तमें वही घृणा उसे सद्पथ पर ले आती है। प्यारी जान का भी यही हाल हुआ। उसके हृदयमें पवित्र भावों का सञ्चार होनेसे, उसके आत्माके सात्विक भाव धारण करनेसे, उसे परम प्रसन्नता हुई।

जब प्यारी जान रोग-शय्यासे उठी, रोगमुक्त होगई, तब नवाब साहबने उसे और भी सहायता देनी चाही। मगर उसने यह समझ कर कि, मेरी में बीमारी ये ऐसेही क़र्ज़दार हो गये हैं, सहायता लेने से इङ्कार कर दिया। उसके विचारोंने यहाँ तक पल्टा खाया कि, वह उनसे ठगकर लिए हुए धनको भी लौटा देने पर आमादा होगई। इस विषयमें उनके दर्म्यान जो बातचीत हुई वह इस प्रकार है :—

प्यारी जान—जनाब आली! यह ज़र-ज़ेवर और जवाहिरात वग़ैरः अब मेरे किसी मसरफ़ के नहीं। अब मुझे इनकी दरकार नहीं। आप अपना माल मुझसे वापिस लीजिये,

अब मैं अपनी बक़ाया ज़िन्दगी को खुदा की इबादत और नेक कामोंमें सर्फ करूँगी। अब मैं फकीरनी होकर फ़कीराना ढँगसे अपनी ज़िन्दगी बसर करूँगी।

नवाब—मैं तुम्हारे इन पाकीज़ा खयालातों से निहायत ही खुश हूँ। मैं तुमसे एक पैसा भी वापिस नहीं लूगा। मेरी राय है कि, तुम मक्के शरीफ को जाकर हज कर आओ। तुम्हारा पैसा इस तरह नेक कामों में सर्फ हो जायगा।

प्यारी—मेरे रुपयों को आप अपने पास बतौर अमानतके रखिये। और उनमेंसे जितने आप मुनासिब समझें, मुझे मक्काके राह-खर्च के लिये अता फरमाइये।

नवाब—अच्छा, मैं तुम्हारा साहूकार बननेके लिये दिलो-जानसे मुस्तैद हूँ। बात भी ठीक है। तुम औरत की ज़ात का इतना रुपया लेकर अकेली ऐसी जगहमें जाना मुनासिब नहीं है, पर तोभी एक हज़ार रुपया हमराह लेती जाओ।

प्यारी—इतने रुपयों का क्या होगा ?

नवाब—मेरा कहा मानो। हज़ार रुपये बहुत नहीं। सफर लम्बा है। इतने बिना काम न चलेगा। परदेशमें पैसा ही मा बाप और पैसाही सच्चा दोस्त है। परदेशमें पैसे से अनेक तकलीफें दूर हो जाती हैं।

अन्तमें प्यारी जानने नवाब साहब की बात मान ली। हज़ार रुपये ले, फ़कीराना भेष कर, स्टेशन की तरफ चलती

हुई। चलती दफा प्यारी और नवाब दोनों के दिल साफ़ होगये थे। उन दोनोंके दिलोंमें ईर्षा-द्वेषका नाम भी नहीं था।

हाथरस ष्टेशनसे प्यारीने बम्बई का टिकट लिया। वहाँसे वह एक जहाज़ में सवार हो, अदन के लिए रवान: होगई। आज उसने हिन्दुस्तान का समुद्री किनारा छोड़ दिया। अतएव हम उसे यहीं छोड़कर अपने प्यारे पाठकों को दूसरी ओर लेजाना चाहते हैं।

लेकिन नवाब साहबका महल छोड़नेके पहले, हम अपने पाठकों का एक कौतुक मिटा देना आवश्यक समझते हैं। नूरजहाँ उस दिन नवाबके कमरे में जानमान कर अपने मन से न आई थी। उसे एक रोग ऐसाही था, वह रातको सोती-सोती उठ बैठती और इसी तरह चाहे जहाँ चक्कर लगाया करती थी। उस दिन वह हठात् नवाब के कमरे में आगई। कुछ दिनों तक लगातार इलाज होने से उसका वह रोग दूर होगया।

चलिये पाठक, अब ज़रा लाला दौलतराम की भी ख़बर लीजिये।

उन्नीसवाँ परिच्छेद।

दौलतराम की रिहाई।

आज दौलतराम ने जेलसे रिहाई पाई है। आज वह कारागार-मुक्त हुआ है। मगर दुःखका विषय है कि, आज उसका स्वागत करने वाला कोई नहीं। न कोई मित्र है न कुटुम्बी है। ऐसे समय पर मनुष्यको जो दुःख होता है—जो मनोवेदना होती है, उसे वही समझता है, जिस पर बीतती है।

जेल से छूटकर दौलतराम फिर धर्मशालामें आया। वहाँ पहुँचतेही उसने अपना बचा हुआ सामान बेंच डाला। उसकी बिक्री से जो कुछ मिला, उससे उसके पाँच दिन आराम से कटे। इसके बाद उसकी दशा पहले से भी ख़राब होगई। हाँ, एक बात उसमें नई होगई थी। वह यह कि, वह पहले से अधिक मोटा-ताज़ा और निर्लज्ज होगया था। जेलमें जाकर अनेक मनुष्य परले सिरेके बेशर्म और बेहया हो जाते हैं। वहाँ कुछ दिन रहनेसे वे उसके ऐसी आदी

हो जाते हैं कि, अनेकोंको तो वहाँ ही रहना अच्छा मालूम होता है और वहाँ जाने के लिये वह अपराध पर अपराध किया करते हैं। सभ्यता ऐसों से हज़ार कोस दूर भागती है। भले आदमी उनके पास खड़े भी नहीं होते। क्योंकि जेलसे छूटा मनुष्य बहुधा नाना प्रकारके अपराधों पर कमर कस लेता है।

एक रोज़ दौलतराम एक शराब की दूकानमें पहुँचे। वहाँ उनके साथियोंने उनसे खूब ही असभ्यता का बर्ताव किया। वहाँ से धौल-धप्पे खाकर वह अपने ठिकाने पर आगये और सोचने लगे कि, अब क्या करना चाहिये? पेटको तो नित उठ सवेरे चाहिये। बहुत कुछ विचार करने के बाद वह नगर की एक भूरी जान वेश्या के यहाँ सारङ्गी बजाने पर, दस रुपये मासिक पर, नौकर होगये।

देखा पाठक! दौलतराम का अधःपतन!

बीसवाँ परिच्छेद।

दौलतरामकी घोर दुर्दशा।

रात का समय है। भूरी जान इस समय अपनी बैठकमें अपने एक चाहनेवालेके साथ हँस-हँसकर बातचीत कर रही है। इसी बीचमें उसका एक और चाहनेवाला आ पहुँचा और आकर दौलतरामके पास बैठ गया।

दौलतरामने उससे कहा—"आप तशरीफ रखिये, मैं अभी आता हूँ।" यह कहकर वह पासकी एक शराब की दूकानमें शराब पीनेके लिए चला गया। उसके पीठ फिरते ही वह दूसरा प्रेमी, जो दौलतरामके पास बैठा था, भूरीजान की बैठकमें चला गया। वहाँ अपने प्रतिस्पर्धीको देखतेही उसके खूनमें जोश आगया। उसका रक्त उबलने लगा। क्रोधके मारे अन्धा होगया। आगे-पीछेका ख़याल न कर, मरने-मारनेपर उतारू होगया। उसकी यह हालत देख दूसरेको भी गुस्सा चढ़ आया। अन्तमें दोनों प्रतिस्पर्धी एक दूसरे पर

बनारसी साँडोंकी तरह टूट पड़े। खूबही लात जूते घूँसे और मुक्के चलने लगे। हलचल देखकर बीट के कॉन्सटेबिलने सीटी बजाई। बात की बातमें पुलिसके कई जवान भूरीजान की बैठक में घुस आये और उन दोनों साँडोंको अलग-अलग कर दिया। अन्तमें दोनों ही प्रेमी भूरी से नाराज़ होगये और यह कहते हुए बाहर निकल गये कि, आजसे हम लोग तुमसे किसी प्रकारका तअल्लुक न रक्खेंगे।

प्रेमियों की यह बात सुनते ही भूरीजानका रङ्ग फीका होगया। उसे बड़ा भारी रञ्ज हुआ। इसी समय दौलतराम भी शराबके नशेमें झूमता-झामता आ पहुँचा। उसे देखते ही भूरी एकदमसे लाल-पीली होगयी। वह अपने गुस्से को को रोक न सकी। उसने दौलतरामके सिर पर अनगिन्ती जूतियाँ लगाईं। जूतियोंके मारे दौलतकी चाँद गञ्जी होगई। सिरके बाल उड़ गये। फिर भी न जाने दौलतरामको क्या सनक सवार हुई, कि वह जूतियाँ खाता जाता था और हँस-हँसकर कहता जाता था—"शाबास! वाह वाह! बड़ा ही मज़ा है! और लगे, और मारो, वाह क्या कहना है!

दौलतको इस तरह चिल्लाते और बकते देख भूरी का गुस्सा और भी तेज़ होगया। उसने दौलत के सिर पर थूक दिया और लगी हज़ारों गालियाँ देने। मगर दौलत तो फिर भी यही कहता रहा—"मारो, मारो, बड़ा मज़ा आता

है।" अन्तमें भूरोने ही हार खाकर और धक्के देकर उसे बाहर निकाल दिया। लेकिन दौलतने तो इतने पर भी चिल्लाना न छोड़ा, तब दो कॉन्सटेबिल उसे पकड़ कर पास के थानेमें ले गये। वहाँ वह हवालातमें रात भर सड़ता रहा।
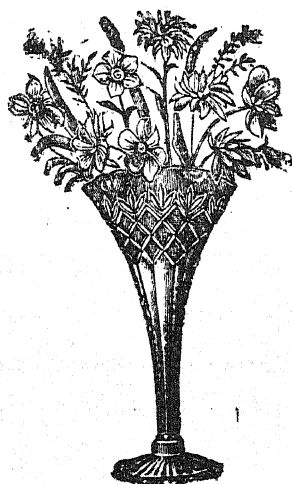
इक्कीसवाँ परिच्छेद।

दौलत और गुलाब।

दूसरे दिन सवेरेही दौलतने नशा उतरतेही हवालातसे छुटकारा पाया। छुटकारा पातेही वह फिर भूरी जान के यहाँ पहुँचा। भूरी उसे देखते ही जलकर ख़ाक होगई और लगी उसे उलटी-सूधी सुनाने। पर बेहया दौलत वहाँ से टस से मस न हुआ। वहाँ ही जमकर खड़ा होगया।

असलमें क़ुसूर भूरी जानका अपनाही था। भूरी के क़ुसूर से ही उसके दोनों चाहनेवालोंने उसे त्याग दिया था। मगर भूरी अपना क़ुसूर दौलत के सिर लगाती थी और इस झगड़े की जड़ उसका वहाँसे चलाजाना बताती थी। इसी अपराधके कारण वह उसे अपने यहाँ रखना न चाहती थी। इस वक्त भूरी की हालत उनलोगोंकी सी थी, जो चोरी करते हैं और जब चोरीके अपराधमें विचारकके सामने उपस्थित होते हैं, तब अपने अपराध को अपने सङ्गी-साथियों के सिर पोंछते हैं। पर

यह धारा तो संसार ही की है। सभी अपने अपराधको, अपनी ग़लती को, पराये सिर लगाते हैं। कभी-कभी यह अधा-धुन्धी न्यायशास्त्र तक में होती है। तब भूरी ने अपना दोष दौलतके सिर मढ़कर हमारी समझमें तो कुछ अनुचित नहीं किया।

इतनी ज़िल्लत उठाने पर भी दौलतने भूरी का दरवाज़ा न छोड़ा। यह देख भूरी उसके सिरमें फिर जूतियाँ लगाने लगी। जब वह मारते-मारते थक गई, तब उसने फिर गालियाँ बकना शुरू किया। जब उसे जूतियों और गालियों से रिहाई मिली, तो उसने नीचा सिर करके चुपकेसे अपने कपड़ोंकी गर्द झाड़ डाली और गिड़गिड़ा कर कहने लगा—"मेरी मिहरबान! आप मुझे चाहे जितना मारें, चाहे जितनी गालियाँ सुनावें, मुझे ज़रा भी उज्र नहीं। मैं आपका ज़र-ख़रीद ग़ुलाम हूँ, मरज़ी हो सो कीजिये, मगर इतनी ही मिहरबानी कीजिए कि मुझे इस बड़े शहरमें अपनी नौकरी से बतरफ न कीजिए। अगर आप मुझे निकाल देंगी, तो आपका यह जूतियों का ग़ुलाम कुत्ते की मौत मर जायगा। इससे मेरी आर्ज़ू पर ध्यान दो और इस ग़ुलाम को कुछ दिन और इस दुनिया में रहने दो।

देखा जाता है कि, शहर की स्त्रियोंमें दया नाममात्रको भी नहीं होती, यही हाल भूरी जानका था। दौलत का उसके सामने रोना-चिल्लाना और विनय करनी अरण्य-रोदन या जङ्गल

में रोनेके समान था। जिस तरह पत्थर पर बीज नहीं जमता, उसी तरह भूरी के दिल पर भी उसकी मिन्नत-आर्ज़ुओंका ज़रा भी असर न हुआ। उसे ज़रा भी दया न आई। दौलत उसके पैरों में गिर गया, आसुओं से उसके पैर तर कर दिये, मगर उस वज्रहृदयाने कुछ भी ख़याल न किया। वह उकता-कर बोली—"नालायक, नीच कुत्ते! तेरे मरनेसे मेरा क्या नुक़सान? सूअर! छोड़ मेरे पैर, भाग यहाँ से! अगर जल्दी ही काला मुँह नहीं करेगा, तो अबके इतनी लगा-ऊँगी कि खोपड़ी सफ़ाचट हो जायगी। इतना ही नहीं, तेरे सिरके भेजे तक को निकाल लूँगी और तेरा गोश्त चील कव्वोंके आगे डाल दूँगी।

दौलत जब भूरीके इन व्यंग वचनों और गालियों पर विचार करता हुआ अपने विचारों में लीन था, उसके सिरपर फिर जूतियों की बौछार होने लगी। अत्याचार की भी एक सीमा होती है। अति तो सभी की बुरी होती है। सहन-शीलता की भी एक सीमा होती है। कहते हैं कि, चन्दन शीतल है, पर रगड़ते-रगड़ते उस में भी आग पैदा होजाती है। चींटी एकाएकी किसी को नुक़सान नहीं पहुँचाती, पर दबने पर क्रोधके वश होकर वह भी मनुष्यको काट खाती है। फिर दौलतराम तो हाड़चामका मनुष्य था, उसे भी क्रोध चढ़ आया। और ऐसा चढ़ा कि, वह उसे रोक न सका। उसने तानकर एक घूँसा भूरी के मुँहपर जमा ही

तो दिया। अब क्या था? एक क्षण में ही भूरीजान भूरी बिल्ली की तरह हाथ पाँव फैलाकर गिर पड़ी और बेहोश होगई।

दौलत यह हाल देखते ही वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया। इधर-उधर के लोग वहाँ जमा होगये। उन्होंने समझा कि थोड़ी ही देरमें भूरी को होश हो जायगा। पर ज्योंही नज़दीक पहुँचे तो क्या देखा कि, उसके मुँहसे बेतहाशा खून की धारा बह रही है।

उस एकत्रित मण्डलीमें एक नीम हकीम यानी मूर्ख वैद्य भी थे। वह जानते तो नहीं थे, मगर वाहवाही लूटनेके लिए भूरी की नब्ज़ हाथमें लेकर बोले—"इसे मूर्च्छा है, सिरपर पानी डालो।" खूब पानी छिड़का गया, मगर कोई फ़ायदा नज़र न आया। लोगों ने दौलतको खोजा, मगर वह न मिला। क्योंकि इतनी देर में तो वह कलकत्ते की गोरखधन्धे रूपी गलियोंमें ग़ायब होगया था।

पुलिस के भय से दौलत गलियोंमें चक्कर काटने लगा। घूमते-घूमते उसे तीन घण्टे होगये। इस समय उसके शरीर और मन दोनों ही शिथिल होगये। वह एक दम थक गया। न उसका दिमाग़ काम देता था, न हाथ पैर चलते थे। सिर चकराता था, हाथ पैर अपने-अपने स्थानों से अलग होना चाहते थे। ऐसे ही समयपर उसका एक बचपन का सहपाठी मिल गया। वह दौलतको अपने घर लिवा लेगया।

कई दिन तक दौलत उसके मकानपर पुलिसके भय से निर्भय होकर आनन्दपूर्व्वक रहा। तीसरे दिन उसने कलकत्ते के एक अँगरेज़ी अख़बार में पढ़ा:—

भूरीजान की मृत्यु।

"इस शहर की भूरीजान नामक वेश्या एक शख़्सके घूँसे से मरकर इस दुनिया से पिशाच-लोक को चली गई। पुलिस अपराधी की तलाश में है, मगर अपराधी अभीतक हाथ नहीं आया है। जो सज्जन अपराधीका पता देंगे या उसे पकड़ा देंगे, उन्हें भरपूर इनाम दिया जायगा।"

यह समाचार पढ़ते ही दौलत ने विचारा कि, अब कलकत्ते में रहना उचित नहीं। उसने अपने मित्र की अनुपस्थितिमें उसका रुपयोंका सन्दूक़ ले, ष्टेशन की राह ली। ष्टेशनपर पहुँचकर उसने दिल्ली जाने के विचार से लखनौ का टिकट लिया। दिल्ली पहुँच उसने भाँड़ोंकी विद्यामें पारदर्शिता प्राप्तकर उस विद्याका सारटीफिकेट हासिल किया। पीछे उसने अपनी एक मण्डली स्थापित की और उसीसे उसकी रोज़ी चलने लगी।

देहली के नामी ग्रामी सेठ लाला मङ्गलदासजी के चिरञ्जीव पुत्रका विवाह होनेवाला था। यद्यपि सेठ लोग प्रायः स्वभाव से ही कञ्जूस होते हैं, एक-एक कौड़ी के लिए जान देते हैं। पैसे के लिए अपने शरीर को महान कष्ट देते हैं।

रात-दिन तेलीके बैल की तरह पैसे के पीछे पड़े रहते हैं। मगर विवाह-शादी के वक्त वाहवाही लूटने के लिए एकदम उदार और फैयाज़-दिल हो जाते हैं। ऐसे मौक़ोंपर पैसे के दुश्मन हो जाते हैं और उसे पानी की तरह बहाकर दुनिया को अपने परले सिरे की बेवकूफी का नमूना दिखाते हैं। हमारे सेठ मङ्गलदास ने कलकत्ता, लखनौ, आगरा, बनारस और मुरादाबाद से बढ़िया-बढ़िया वेश्याएँ बुलवाईं। आतिश-बाज़ी तय्यार कराई। जाति-बिरादरी और नाते रिश्तेदारोंके सिवा सभी सरकारी नौकरों तथा अन्यान्य सभ्य पुरुषों को निमन्त्रण दिया। सेठजी ने मेहमानों के मनोरञ्जनार्थ वेश्याओंके सिवा भाँड़ोंका भी इन्तज़ाम किया।

इस सुअवसर पर सेठ जी के मकान के सामने महफिल तैयार की गई। उसकी सजावट में कोई बात उठा न रक्खी गई। चारों तरफ कद्दे-आदम आइने और अनेक तरह के झाड़-फानूस लगाये गये। सैकड़ों तस्वीरें लगाई गईं। हज़ारों बिजली के लट्टू लगवाये गये। जिस वक्त बिजली जलने लगी, उस वक्त वहाँ रात में दिन होगया। बहुधा ऐसे खुशी के मौक़ोंपर नाच-गाना न होने से जलसा अधूरा और बेमज़ा समझा जाता है, इसी से सेठजी ने नाच-गाने वगैरः का पूरा प्रबन्ध किया।

गानेवाली वेश्याओंमें सब से अधिक सुन्दरी और हाव-भाव नाज़ो-नखरे एवं नाचने गानेमें परम प्रवीण गुलाबजान

देहलीवाली ही समझी जाती थी। दर्शकगण उसके हाव-भाव, उसकी बाँकी चितवन, उसकी मनोहर सुन्दरताई पर जी जान से लट्टू होगये। और भी अनेक वेश्याएँ आईं थीं, मगर लोग उनके पास फटकते तक न थे। सब वहीं जमे हुए थे, जहाँ गुलाबजान नाच रही थी। सभी के मुँह से वाह-वाह ही वाह-वाह निकल रही थी। इसी तरह भाँड लोगोंमें दौलतरामका दर्जा अव्वल था। लोग उसके हाव-भाव से बड़े प्रसन्न होते थे। उसकी नक़ल देखकर मनहूस से मनहूस खिलखिला उठता था।

गुलाबजान और दौलतराम दोनों एक दूसरे को पहचान गये। दोनोंके दर्म्यान आँखों में इशारेबाज़ी होनी लगी। उनके इशारों से यह मालूम होता था, कि वे एक दूसरेको न चाहते हुए भी यह चाहते थे कि, हम दोनों की असलियत किसीको न मालूम होवे। खैर, दोनों ने ही एक दूसरेका भेद छिपा रक्खा। गाना-बजाना नाच-रङ्ग और नक़ल वगैरः मज़े में होते रहे। गुलाबजान और दौलतराम की खूब तारीफ होती रही।

इसी बीचमें जब कि जलसा खूब जमा हुआ था, सारी मजलिस मज़े में डूब रही थी, एक बूढ़ा सेठ कहींसे टपक पड़ा। लोगोंने उसे एक अच्छे आसनपर बड़ी खातिर से बिठाया। दैवयोग से बैठने के पहलेही उसकी नज़र गुलाबजान और दौलतराम पर पड़ गई। इन दोनोंपर नज़र

पड़ते ही उसके हृदय में भारी चोट लगी। वह बड़े ज़ोरसे चिल्लाकर ज़मीन पर गिर पड़ा और गिरते ही बेहोश होगया।

उसे इस हालतमें देख सेठ मङ्गलदासजी तथा और बहुत-से लोग वहाँ जमा होगये। फौरन ही गुलाबजल और केवड़ा उनके चेहरेपर छिड़का गया। पङ्खे भी चलने लगे। तब कुछ देर में बूढ़े सेठजी को होश आया। वे उठ कर तकिये के सहारे बैठगये। तब सेठ मङ्गलदासजीने उन से पूछा—"भाई लक्ष्मीचन्दजी! कहिये क्या हाल है? अब तबियत कैसी है? हमारी समझमें तो गर्मीसे चक्कर आगया। अब तो तबियत ठीक है न?" लक्ष्मीचन्दने उनकी बातों का कुछ भी जवाब न दिया। चन्द मिनिट तक वह बावले से बैठे रहे, इसके बाद उन्हें फिर मूर्च्छा आगई।

ये वृद्ध सेठ लक्ष्मीचन्दजी हमारे सेठ मङ्गलदासजीके परम मित्र हैं। ये ग्वालियर के एक प्रतिष्ठित रईस और बड़े भारी सेठ हैं। सेठ मङ्गलदासजी ने इनको निमन्त्रित किया था, इसी से यह इस विवाह में शामिल हुए थे। जिस समय महफ़िलमें लक्ष्मीचन्दजी के बेहोश होने के कारण गड़बड़ी फैली, उस समय तबियत ख़राब होनेका बहाना करके गुलाबजान और दौलतराम भी वहाँ से खिसक गये।

बूढ़े सेठजीको यह हालत होने से वहाँ रङ्गमें भङ्ग होगया। महफ़िलका मज़ा किरकिरा होगया। लोगों के चेहरोंपर उदासी छागई। लोग भीतर बाहर आने-जाने

और दौड़धूप करने लगे। अन्त में दवा-दारू देनेसे कुछ देरमें सेठजीको फिर होश हुआ, मगर उनकी बुद्धि अबतक भी अपने ठिकानेपर न आई थी। वह यकायक चिल्ला उठे— "मेरी दग़ाबाज़ और बेईमान स्त्री गुलाब कहाँ भाग गई !"

वृद्ध सेठजी के उपरोक्त वाक्य सुनते ही लोग सारा मतलब समझ गये। कितनेही आदमी फौरनही गुलाब और दौलतकी तलाशमें दौड़ पड़े। एक पुलिस इन्सपेक्टर साहब भी, जो उस मौके पर वहाँ मौजद थे, गुलाब की तलाशमें, उसके डेरे की ओर रवान: हुए। वहाँ पहुँचने पर मालूम हुआ कि, आधा घण्टे पहले वह डेरेपर थी। अभी-अभी न जाने कहाँ पार बोल गई। बहुत कुछ खोज और तलाश की गई, पर दोनोंका कुछ भी पता न चला। दोनोंके नाम से फिर गिरफ्तारीका वारण्ट निकला। देहली छोड़ने बाद दोनोंकी क्या दशा हुई, इसका हाल पाठकों को आगे चलकर मालूम होगा।
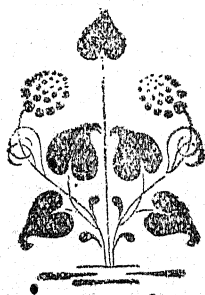
बाईसवाँ परिच्छेद।

कैलाश-कुञ्ज।

रामानन्द अपने साथी दयानन्द के साथ सूक्ष्म शरीर में प्रवेशकर, दुर्गम घाटियों अलङ्घ्य पर्वतों को लाँघकर कैलाशकी घाटी में पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही उसकी आँखोंमें चकाचौंधीसी छा गई। वह जिधर देखता था, उधर ही उसे मनोहर दृश्य दिखलाई पड़ते थे। उसे प्रकृतिदेवी की सुन्दरता पर अतीव आश्चर्य्य और विस्मय होता था।

उस घाटीमें नाना प्रकार के ऐसे-ऐसे मनोहर महल, बाग़, बग़ीचे और फव्वारे इत्यादि थे, जैसे रामानन्द ने अपने जीवन-कालमें पहले कभी न देखे थे। वहाँ उसे कृष्णगुलाब भी देखनेको मिला, जो खूब अच्छी तरह से खिलकर अपनी अजीब बहार दिखाकर, दर्शकके मनको मुग्ध किये लेता था। हँस, मोर, कीर, मैना इत्यादि पक्षियों ने उस शोभाको और भी मनोरम कर रखा था। वहाँ की शान्ति-प्रदायिनी शोभा

का यथार्थ रूपसे वर्णन करना, इस काठकी लेखनीकी शक्तिके बाहर है।

वहाँ केवल खेत नहीं थे ; किन्तु सेब, अनार, अखरोट, बादाम, पिस्ते प्रभृति मेवाओं के वृक्ष चारों ओर खड़े हुए अपनी अपूर्व्व शोभा प्रदर्शित कर रहे थे। अङ्गूर खूब ही फले हुए थे। गुच्छेके गुच्छे लटक रहे थे। पककर एकदम तय्यार थे। उनके देखने से ऐसा मालूम होता था, मानो वे हाथों को तोड़ने के लिए और रसनाको उनका स्वाद लेनेके लिए बुला रहे हों। वहाँके आमोंको देख-देखकर सहारनपुरके आम लज्जाके मारे अपना मुँह छिपाये लेते थे। यही हालत वहाँके शन्तरों और अमरूद प्रभृति फलों की थी। वहाँके शन्तरों के सामने नागपुर और सिलहटके शन्तरे, इलाहाबाद के अमरूद तथा बम्बई के केले बिलकुल निकम्मे मालूम होते थे। वहाँकेसे बादाम, पिस्ते, चिलगोज़े आदि सूखे मेवे तो काबुलने भी कभी देखे-सुने न होंगे। वहाँके निवासी इन्हीं फलों को खाकर अपनी ज़िन्दगी बसर करते हैं। वहाँ इतने प्रकारके फल उत्पन्न होते हैं, कि उनकी नामावली देना भी कठिन है। अतएव इस विषय को छोड़कर अब हम दूसरी ओर चलते हैं।

रूपके लिये तो यह परिस्तान ही है। सभी स्त्रियाँ परिस्तान की परियाँ या स्वर्गीय अप्सरा हैं। ऐसा मालूम होता है, मानों किस्से-कहानियोंका परिस्तान और हमारे पुराणोंका स्वर्ग

यही है। काश्मीर के लोग अपनी सुन्दरताई और सरकेसिया के निवासी अपनी लूनाई और सुघड़ाई के लिए प्रसिद्ध हैं, किन्तु यहाँ के निवासियों ने तो सुन्दरता में उनको भी मात कर दिया है। ये लोग काश्मीरियोंसे भी अधिक खूबसूरत और सरकेसियनोंने से भी अधिक सुघड़ हैं। यहाँ कुरूप और बदसूरत आदमी तलाश करने पर भी नहीं मिलता। इसके सिवा यहाँ एक और खूबी देखो। यहाँ भारतकी तरह करोंड़ों मँगते-भिखारी नहीं। खोजनेसे भी भिक्षुक या लूला, लँगड़ा, अन्धा, कोढ़ी नहीं मिलता। यहाँ राहे आम पर पैसा माँग-माँगकर लोगों को दिक़ करनेवाले कहीं भी नज़र नहीं आते। भारतमें लाखों पण्डे और दूसरे लोग आप न कमा-कर दूसरोंके लिए भार होते हैं—दूसरोंके गले पड़ते हैं, मगर यहाँ यह बात नहीं है। यहाँ सभी सुखी हैं, सभी अपने-अपने आश्रय हैं, कोई किसीके आश्रय नहीं। किसीको किसी की सहानुभूति या हमदर्दी की आवश्यकता नहीं। यहाँ न रेल है, न तार है, न टेलीफोन है, न यहाँ नोटोंका ही चलन है। यहाँ शान्ति देवीका परमानन्दमय राज्य है। यहाँ लोभ, मोह ईर्षा, मत्सर, छल, कपट आदिका नाम तक नहीं है। छल, धूर्त्तता, कुटिलता प्रभृति को तो कोई जानता ही नहीं। यहाँ दया, उदारता, सत्य, अहिंसा, पवित्रता आदि उत्तम वृत्तियों का अटल राज्य है। यहाँ के लोग रूप, गुण धन-दौलत प्रभृति सभी बातों में एक दूसरेके समान हैं। इस

समानतता के कारण यहाँ आपसमें लड़ाई-झगड़ा और कलह नहीं है। यहाँ बेईमानी, चोरी, ज़ोरी, जुआ-चोरी, डकैती वगैरः कुछ भी नहीं है। इसीसे यहाँ मुक़दमे-बाज़ी नहीं होती, वकील मुख्तारों के घर नहीं भरे जाते। यहाँ ऊँचाई-निचाई छुटपन-बड़प्पन आदि कुछ भी नहीं है। न यहाँ सेना है, न दुर्ग हैं, क्योंकि यहाँ कोई किसी पर चढ़कर आनेवाला नहीं। न यहाँ पुलिस है न मैजिस्ट्रेट, क्योंकि कोई किसीके साथ अन्याय नहीं करता, चोरी-जारी तो यहाँ होती ही नहीं। सभी एक दूसरे से प्रेम रखते हैं और हिल-मिलकर शान्तिसे रहते हैं। यहाँका प्रत्येक मनुष्य धन-जनसे परिपूर्ण है। किसीको भी किसी वस्तु की आकांक्षा नहीं। ये लोग नाचने-गानेके बड़े प्रेमी हैं। पर यहाँ पराया धन हड़पनेवाली थिएट्रिकल कम्पनियाँ या नाटक-मण्डलियाँ नहीं। यहाँ पर रेशमके कीड़ों की इफ़रात है। इसलिए यहाँके निवासी ज़ियादातर रेशमी वस्त्रों से ही अपनी लज्जा निवारण करते और अपने अङ्ग ढँकते हैं। यहाँ गर्मी, जाड़ा, बर्सात प्रभृति ऋतुएँ नहीं होतीं, सदा वसन्त या मौसम बहार बना रहता है।

यहाँके निवासियों की भाषा शुद्ध संस्कृत है। यहाँके विद्यालयोंमें उसीका पठन-पाठन होता है। यहाँ कपिल, पतञ्जलि, विश्वामित्र-लिखित दर्शनशास्त्रों पर तर्क-वितर्क और आलोचना-प्रत्यालोचना होती है। यहाँ छापनेकी मैशीनें

नहीं हैं, परन्तु यहाँके निवासी लिथोग्राफीके ढँगसे पत्थरों पर इच्छानुसार प्रतियाँ किसी भी हस्तलेखकी तैयार कर लेते हैं। काग़ज़ वगैरः बनानेकी विधि से भी ये लोग अनजान नहीं।

यहाँ कितने ही स्थानोंमें परमात्मा का ज्ञान सिखानेवाली संस्थाएँ हैं। यहाँ की अनेक पाठशालाओंमें मोक्ष या मुक्ति कैसे होती है, आत्मा का उत्थान या पुनरुत्थान कैसे होता है, प्रभृति आत्माके सम्बन्ध की शिक्षा दीजाती है। इन पाठ-शालाओंके अतिरिक्त यहाँ ऐसी पाठशालाएँ भी हैं, जिनमें बनस्पतिशास्त्र भूगर्भशास्त्र, गणित, बीजगणित, रेखागणित ज्योतिष आदि लौकिक विद्यायें भी सिखाई जाती हैं।

यहाँ भारतकेसे डाकख़ाने नहीं हैं, किन्तु पुराने फेशन के डाकघर हैं। यहाँ की सड़कों पर चोर-डाकुओं का ज़रा भी खटका नहीं। यहाँ सब तरह का आनन्द और प्रत्येक प्रकार की सुविधा है। यहाँके लोगोंसे चुङ्गी वसूल की नहीं जाती, टैक्स लगाये नहीं जाते। यहाँ लोगों को दुश्चरित्र और मूर्ख बनानेके लिये महकमा आबकारी भी नहीं। न यहाँ ज़ाब्ते फौजदारी है, न ताज़ीरात हिन्द है, न यहाँ जाब्ते दीवानी आदि क़ानूनी क़िताबें हैं, न यहाँ हाजत-हवालात और जेल या कारागार हैं। यहाँ इन सबकी ज़रूरत क्यों होने लगी, जब कि यहाँका प्रत्येक प्राणी स्वभावसे ही धर्मात्मा और स्वतन्त्र प्रकृति का है?

यहाँ तक हमने अपने प्यारे पाठकों के मनोरञ्जन के लिये, रामानन्दके देखे हुए दृश्योंका संक्षिप्त वर्णन किया। पाठकों को जानकारी के लिए कैलाश का इतना हाल यथेष्ट होगा, अतः अब हम दूसरी ओर झुकना मुनासिब समझते हैं।

उपरिलिखित दृश्योंको देखते हुए हमारे दोनों साधु एक सुन्दर बाग़के फाटक पर पहुँचे। दयानन्दके इशारा करते ही फाटक का दरवाज़ा खुल गया। "ईश्वर" शब्द का उच्चारण करतेही दोनों प्राणी उस बाग़ की रम्य कुटीमें प्रवेश कर गये। वहाँ पहुँचते ही उन्हें परमब्रह्म परमात्माकी महिमा का अद्‌भुत चमत्कार नज़र आया। वहाँ उन्होंने क्या-क्या देखा, उस सब का वर्णन न करके हम अपने पाठकों का ध्यान एक परम मनोहर वृक्ष की ओर आकर्षित करना चाहते हैं। उसके पत्ते मोर-पङ्खकी तरह रङ्गबिरंगे और बहुत ही मनोहर थे। उनसे एक प्रकार की महामनभावन सुगन्ध निकल-निकल कर चारों दिशाओं को सुवासित करती थी। कोई भी विदेशी सेण्ट या सुगन्धित पदार्थ उसकी समता नहीं कर सकता। उसकी शीतल छायामें मन-प्राण शीतल होकर परम शान्तिकी उपलब्धि करते थे। उसी वृक्ष की सघन छाया में एक महातेजस्वी वयोवृद्ध महापुरुष विराजमान थे। उनके सिर पर दो चक्र थे, जिनके तेजने दिशा-विदिशाओंको व्याप्त कर रक्खा था। ऐसा मालूम होता था, मानों

आकाश-मण्डलमें दो सूर्य्य उदय हो रहे हों। यह तेज उस महापुरुष की पवित्र आत्मा का तेज था।

वहाँ पहुँचने पर रामानन्द और दयानन्द ने चार पाँच व्यक्ति और देखे, जो उस महापुरुषसे ब्रह्मज्ञानका उपदेश लेने के लिये वहाँ बैठे हुए थे। दयानन्दने महात्माके पास पहुँचते ही उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। दयानन्द की देखादेखी रामानन्द ने भी उन्हें उसी तरह प्रणाम किया। महात्माने आशीर्व्वाद देकर उन्हें बैठनेकी आज्ञा दी। किन्तु वे व्यक्ति, जो महात्मा के पास उपदेश लेने के लिये बैठे हुए थे, रामानन्द और दयानन्द को न देख सके। महात्माको आशीर्वाद देते देख वे लोग बहुतही चकराये। ये लोग सूक्ष्म शरीरमें थे, इसीसे उनलोगोंको न दीखे। अपने पहले के बैठे हुए शिष्यों के कौतूहल-निवारणार्थ महापुरुष मुस्कराकर बोले—"मैं तुम्हारे विस्मय का कारण समझ गया। मैंने व्यर्थ ही "आशीर्वाद" शब्दका उच्चारण नहीं किया है। दयानन्द मेरा एक पुराना शिष्य है। वह आज भारतवर्ष से अपने साथ एक भारतीय प्राणी को लेकर आया है। यदि तुम लोग उन दोनों को देखना चाहो तो मैं दिखला सकता हूँ।

उन लोगोंका अनुमोदन पाते ही महात्माने एक मन्त्र पढ़ दिया। उस मन्त्र के प्रभावसे उन्होंने दयानन्द और रामानन्द को उनके सूक्ष्म शरीरोंमें ठीक उसी तरह देखा, जिस तरह कि वे किसीको स्थूल शरीरमें देखते। रामानन्द भी

महात्माके शिष्योंकी सौन्दर्य्य-शोभा देख प्राण-मनसे प्रसन्न होगया। उनमें एक अनुपम रूपवती स्त्री भी थी। उसे देखकर स्वामीजीकी उपस्थितिके कारण रामानन्दके मनमें किसी प्रकार की दुर्वासना न हुई।

उन व्यक्तियों को रामानन्द अच्छा अवश्य मालूम हुआ। मगर फिर भी उन्हें उसमें वह रूपच्छटा नज़र न आई, जो स्वयं उनलोगों को अपने शरीरोंमे दीखती थी। फिर भी उसमें नवीनता देखकर वे लोग खुश ही हुए। नई चीज़ कैसी भी हो, अपनी नूतनता के कारण वह एकबार सभीका मन अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। यही बात यहाँ भी हुई। वे लोग रामानन्द से बातचीत करना चाहते थे। रामानन्द संस्कृत जानता था। इसलिये वह बिना किसी प्रकारकी रुकावटके उनसे बात कर सकता था, पर वह बातें न कर सका, क्योंकि सूक्ष्म शरीरमें रहनेके कारण उसकी वाणीमें यह शक्ति न थी, कि वह दूसरे नाशवान शरीरधारी को सुनाई दे सकती। यदि महापुरुष चाहते तो अपने शिष्योंको ऐसी शक्ति प्रदान कर सकते थे, जिससे उन्हें रामानन्दकी बातें सुननेमें कठिनाई न होती। किन्तु महापुरुषने यह न करके कुछ ऐसा काम किया, जिससे रामानन्दका सूक्ष्म शरीर फैलकर स्थूल शरीर जैसा लम्बा-चौड़ा होगया। इसके बाद रामानन्द और उनमेंसे एक सर्वोत्तम शिष्यसे इस प्रकार बातचीत होने लगी :—

शिष्य—क्या हिन्दुस्तानके और लोग भी रूपरङ्गमें तुम्हारे जैसे ही हैं ?

रामानन्द—नहीं। कुछ मुझसे अधिक सुन्दर और कुछ मेरी अपेक्षा कुरूप भी हैं। काश्मीर-निवासी तो रूपरङ्गमें प्रायः आपलोगोंके जैसे ही हैं। पञ्जाबी मज़बूत और मिहन्ती होते हैं। परन्तु उनका रङ्ग भारतकी कड़ी धूप और गरमीके मारे गेरुआसा होता है। युक्तप्रान्तके लोग प्रायः मेरे जैसेही हैं। बङ्गाली हम युक्तप्रान्तवालों की अपेक्षा क़दमें किसी क़दर छोटे और अधिकांश रङ्गमें कुछ काले होते हैं, पर बुद्धिबलमें वे लोग खूब ही बढ़े-चढ़े हैं। महाराष्ट्र लोग चुस्त, चालाक, फुर्तीले और योद्धा होते हैं। मदरासी यद्यपि तवे के पेंदे की भाँति काले होते हैं, तथापि बुद्धि-बलमें वे भारतमें सबसे अग्रगण्य हैं। इन सबके सिवा वहाँ अँगरेज़ लोग भी हैं, जो सात समन्दर चौदह नदियाँ पार करके, ६००० मीलकी दूरीसे, अनेक तरहके दुःख भोगकर, भारतमें आये और अब हमलोगों पर हुकूमत कर रहे हैं। वे लोग भी बड़े ही शूरवीर और बुद्धिबल-सम्पन्न हैं।

शिष्य—अङ्गरेज़ भारतवर्षमें क्यों और किस तरह आये ?

रामानन्द—कोई १५० वर्ष पहले वे लोग वणिक-रूपमें व्यवसायके लिए भारतमें आये थे। उस ज़मानेमें भारतमें बड़ी अशान्ति थी। एक ज़ात दूसरी ज़ात से लड़ रही थी। मदरासी, पञ्जाबी, मरहटे, बङ्गाली, युक्तप्रान्तीय सभी आपसमें

एक दूसरे का गला घोंटते थे। एक जाति दूसरी को भूतल से मिटाने पर कमर कसे हुए थी। मुसल्मान बादशाहत का पतन होरहा था, मरहटाओं की तूती बोल रही थी। उन्होंने अपने ही देशवासियों का दम नाकमें कर रक्खा था। सारे देशमें लूटमार का बाज़ार गर्म था। भारतवासी त्राहि-त्राहि कर रहे थे, ऐसे ही समय दीनदयालु ईश्वर ने भारतको अधोगति के गढ़े में गिरनेसे बचानेके लिए, निर्बलों को बलवानोंके अत्याचारसे बचानेके लिये, सतियोंकी सतीत्वरक्षाके लिए, देशमें सुख-शान्ति स्थापन करनेके लिए, अङ्गरेज़ों को भारतमें भेजकर अपनी दीनदयालुता का परिचय दिया। उनके भारतमें आनेसे अशान्ति दूर हुई, सुखशान्ति फैली, निर्बल-सबल समान हुए, सतियों की सतीत्व रक्षा और प्राण-रक्षा हुई; शेर बकरी एक घाट पानी पीने लगी, अनेक तरह के सुधार हुए, सती-प्रथा और ठगीका अन्त हुआ, रेल तार और डाकखाने खुले, जिससे भारतवासियों को बड़ा भारी आराम और सुविधायें हुईं, विदेशी शत्रुओं की चढ़ाइयों का खटका मिटा। यदि उस मौके पर अङ्गरेज़ जाति भारतमें न आती तो भारतकी महान दुर्गति होती। भगवान् की इस कृपाके लिए भारतीय उन्हें नित उठ धन्यवाद देते हैं।

रामानन्द की उपरोक्त बातें सुनते ही महापुरुष बोले—"अङ्गरेज़ लोग यथार्थ में शूरवीर और उदारचित्त हैं।"

शिष्य—अङ्गरेज़ोंने आप भारतवासियों की भलाईके लिए क्या-क्या काम किये हैं।

रामानन्द—अभी बहुत कुछ तो मैं कह चुका हूँ। उन्होंने रेल, तार, डाकखाने के अतिरिक्त प्रत्येक ज़िलेमें ज़िला स्कूल, हाईस्कूल, बड़े-बड़े नगरों में कालिज या महाविद्यालय खोल दिये हैं। छोटे-छोटे नगरों या क़स्बोंमें तहसीली स्कूल, बड़े-बड़े गाँवोंमें ग्राम्यपाठशालायें खोल दी हैं। अच्छी चौड़ी-चौड़ी सड़कें बनवादी हैं। सड़कोंके किनारे वृक्षावलि लगवा दी हैं। शहर की गलियों और सड़कों पर गैस, बिजली, अथवा तेलके लेम्पोंकी रोशनी करवादी है। अनेक शहरोंमें मिल, पुतलीघर, धूएँके एञ्जिन प्रभृति चलवा दिये हैं।

शिष्य—धूएँके एञ्जिन, रेल, तार आदिका मतलब मैं नहीं समझा।

रामानन्द—रेलगाड़ी एक प्रकार की गाड़ी है, जो बिना घोड़े, बैल या ऊँट वगेरः के भाफ के बल से, लोहेकी पटरियोंपर, धड़ाधड़ चलती है। उसके ज़रियेसे महीनोंका सफर दिनोंमें और दिनोंका घण्टोंमें तय हो जाता है। भाफ के एञ्जिनोंकी शक्ति से पुतलीघरोंमें कपड़े बुने जाते है, छापेखानों में छपाई होती है, तेल निकाला जाता है, आटा पीसा जाता है। आजकल ये काम बिजलीकी शक्तिसे भी होने लगे हैं। तारद्वारा एक जगहकी खबर दूसरी जगह बड़े थोड़े समयमें आती-जाती है।

शिष्य—हमें तो आपकी बातें शेख़चिल्ली की कहानी जैसी मालूम होती हैं।

रामानन्द—जबतक आप अपनी आँखोंसे उन चीज़ों को न देखेंगे, तबतक हरगिज़ विश्वास न होगा। देखने परही आपको अङ्गरेज़ों की बुद्धिमता का परिचय मिलेगा।

शिष्य—आपकी बातोंसे तो यही मालूम होता है कि, अङ्गरेज़ परले सिरेके बुद्धिमान और पुरुषार्थी हैं। पर भाई, उनका यह ज्ञान हमें तो भौतिक ज्ञान मालूम होता है।

रामानन्द—वे लोग भौतिक विषयों की उलझन में ऐसे फँसे हुए हैं, कि उनका ध्यान आध्यात्मिक विषयों की ओर जाता ही नहीं। यदि वे लोग आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते, तो इसमें भी वे लोग कमाल करते। श्रीमती मेडम ब्लावस्की, एनी बसन्त, और कर्नल अल्काट प्रभृति स्त्री-पुरुषों ने इसकी सत्यता और महत्ता संसारको दिखा दी है। आत्मा शरीर से शरीर के नाश हुए बिना निकाली जा सकती है, एक आत्मा दूसरी आत्मा से बिना शरीरके आश्रयके बात-चीत कर सकती है, मनुष्य कितने भी अन्तर पर हो, आत्माके विकाश और यथोचित्त शुद्धिके कारण सदा सुखमें लीन हो सकता है। फिर उसकी आत्मा स्थान, दूरी, कालके अधीन न रहकर स्वतन्त्र होजाती है—मनुष्य त्रिकालदर्शी होजाता है। अगर अङ्गरेज़ इन बातोंको सुनें तो हँसने लगें और उन्हें भी आपकी तरह विस्मय हो। जिस तरह कि आपको

उनके भौतिक आविष्कारोंका पता नहीं, उसी तरह उन्हें आपके आध्यात्मिक आविष्कारोंका पता नहीं।

महात्मा—पर इस विषय में दोनों हीं ग़लती पर हैं। असल में प्राणियोंको दोनों तरहका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

महात्मा की बात सुनते ही सब लोग चुप होकर बैठगये और ध्यान देकर बड़े आदर से उनकी बातें सुनने लगे। इसके बाद फिर शिष्य कहने लगाः—

शिष्य—भारतवासियोंको ऐसे बुद्धिमान और पुरुषार्थी राजकर्मचारी पाकर, अपने भाग्यको सराहना चाहिये।

दू० शिष्य—भारतवासियोंको भारतमें कैसा आनन्द आता होगा!

ती० शिष्य—वहाँकी रेलगाड़ी में बैठकर यात्रा करने से तो बड़ा मज़ा आता होगा।

रामानन्द—हम लोग वहाँ रहकर इतने सुखी नहीं हैं, जितना कि आप समझते हैं।

महात्मा—कहा है कि "अति सर्वत्र वर्जयेत्"। भौतिक ज्ञानकी विशेषता मनुष्योंको सुख, शान्ति और सन्तोष प्रदान नहीं कर सकती।

एक शिष्य—इन लोगोंको अपना भाग्य सराहते हुए भी अङ्गरेज़ोंका कृतज्ञ होना चाहिए, जिन्होंने इन्हें अधोगति की ओर जाने से रोका, अन्यथा ये कबके नाश होगये होते।

रामानन्द—वहाँके बहुत से लोगोंका मत तो आप जैसा ही है, पर कुछ लोगों को असन्तोष भी है। जो अङ्गरेज़ों के उपकारोंको नहीं समझे हैं, जो आँख होते हुए भी अन्धे हैं, वे तो यहाँ तक चाहते हैं कि अँगरेज़ भारत को त्यागकर चले जावें। ऐसे विचारवाले उस मनुष्यकी तरह ग़लती करते हैं, जो जिस डालपर बैठा है उसीको काटता है।

शिष्य—पर कुछ असन्तोषी लोग जो उनसे घृणा करते हैं, इसका कारण क्या है?

रामानन्द—यह निर्विवाद है कि अङ्गरेज़ लोग न्यायी, वीर, उदारचित्त और सत्यप्रिय हैं। पर वे लोग पूर्वीय देशोंकी रीति-रवाज से कुछ कम परिचित हैं, इसीसे उनसे नासमझी के कारण अक्सर भूलें हो जाती हैं, इसीसे असन्तोष फैलता है। उन लोगोंके आन्तरिक विचार हम लोगोंके हक़में बुरे नहीं हैं।

शिष्य—न्यायी, वीर और सत्यप्रिय लोगोंसे असभ्य बर्ताव की उम्मीद स्वप्नमें भी नहीं। अतः आपकी बात ठीक मालूम होती है। नासमझी से ही मनोमालिन्य होता है। पर इसका परिणाम क्या होगा?

रामानन्द—मैं भविष्यद्वक्ता नहीं, इसलिए मैं हाथ जोड़ कर विनय करता हूँ कि, गुरुजी महाराज ही इस प्रश्नका उत्तर सन्तोषदायक रीति से देनेकी कृपा करें।

रामानन्द का विनीत भाव देख महापुरुष बोले—"अङ्गरेज़

लोग भारतमें भारतोद्धार के लिए आये हैं। उनके रहने से भारत बाहरी शत्रुओं से सदा निर्भय रहेगा। संसारमें प्रत्येक काम ईश्वरेच्छानुसार होता है। जब तक गङ्गाजमुनामें जल रहेगा, तबतक अङ्गरेज़ लोग भारतमें रहेंगे।

महात्माकी भविष्यद्वाणी सुन, रामानन्द तथा दूसरे लोग जो वहाँ उपस्थित थे, खूब प्रसन्न हुए। सबसे ज़ियादा खुशी रामानन्दको हुई। रामानन्द सच्चा राजभक्त और देश-भक्त था। प्रत्येक स्वदेश-प्रेमीके ऐसेही ख़यालात होने चाहिएँ।

इसके बाद वे लोग आध्यात्मिक चर्चा करने लगे।

जिस समय सूर्य भगवान् पश्चिमी क्षितिज में अपना मुँह ढकने लगे, उस समय उन महापुरुष और उनके शिष्यवर्ग ने सायं सन्ध्याकी तय्यारी की। चारों ओर से वेदध्वनि होने लगी। उस से वन पर्वत आदि सभी गूँजने लगे।

सन्ध्यावन्दनके बाद प्राणायाम की साधना होने लगी। कई शिष्योंको नाकके अगले भागको देखते हुए ईश्वराराधन का उपदेश मिला। कई शिष्योंको योगकी छोटी-छोटी क्रियाएँ बतलाई गईं। उन्हींमें रामानन्द भी शामिल था। पूर्ण ब्रह्मज्ञान केवल इन्द्रियजीत मनुष्यको प्राप्त हो सकता है। दयानन्दके मनका झुकाव यद्यपि आध्यात्मिक ज्ञान की ओर था, तथापि भौतिक शरीर की प्रेरणा उसके दैवी ज्ञान को बहुत कुछ धुँधला किये देती थी।

मनुष्यको पूर्ण ब्रह्मज्ञान सीखनेके लिए कमसे कम एक दो जन्म चाहिये। कितनी ही बार कई जन्मके बाद थोड़ा बहुत ब्रह्मज्ञान होता है। रामानन्दको अभी तो ब्रह्मज्ञानका प्राथमिक ज्ञान ही उपलब्ध हुआ था। अभी तो उसे इतना ज्ञान भी न हुआ था कि, जिससे वह उस महापुरुषका शिष्य होने योग्य समझा जा सके।

जबतक रामानन्द स्वामीजीके पास रहता था, तबतक मलिन भाव उसके चित्तपर प्रभाव न जमा सकते थे। एक दिन वह स्वामीजी से अलग एक मीलकी दूरी पर था। उसने उस दिन उस पुष्प-सदनमें एक सुन्दरीको एक फव्वारेके पास, जिसकी जलधारा कोई सौ फुट ऊँची पड़ रही थी—खड़े देखा। कान्तिमय चन्द्रमा, उपवन और उस युवतीकी कमनीय कान्तिके वश होकर वह अपने मलिन मानवीय विचारों को दमन न कर सका। उसका मन चलायमान होगया। काम-शरसे वह पराजित होगया, उसने कामान्ध होकर उस लावण्य-वती देवीको अपनी छाती से लगा लिया। यह देख वह स्त्री चिल्ला उठी। उसकी सहचरियाँ जो इधर उधर थीं, उस स्थान पर इकट्ठी होगईं और अपनी सखीको इस दुर्दशामें देख क्रोधके बदले खेद प्रकाशित करने लगीं। शीघ्रही रामानन्द महापुरुषके सामने हाज़िर किया गया। महापुरुष उसके ऐसे आचरण से बड़े नाराज़ हुए। उन्होंने उससे क्रोधपूर्ण वचनोंमें कहाः—

देखो रामानन्द! तुमने बड़ा बुरा काम किया! यहाँके निवासियोंकी आत्माएँ विशुद्ध और परम पवित्र हैं और वे दिव्य रूपधारी हैं। उनमें काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि का नाम नहीं है। ईश्वरने उन्हें इन ऐबों से बचे रहने के लिए ऐसे स्थान पर रख दिया है और इस स्थानको अलंघ्य पर्वत, दुर्गम घाटियों तथा हिमाद्रि से सुरक्षित कर दिया है, जिससे हरेक जीवधारी बिना सौभाग्यके यहाँ तक न पहुँच सके। तुम्हारा सौभाग्य तुम्हें यहाँ तक ले आया, पर तुमने अपने सुअवसरका दुरुपयोग किया!" यह कहकर महात्मा ने दयानन्दको पुकारा और उसे आज्ञा दी कि, रामानन्दको तुमने जो सूक्ष्म शरीर दिया है, उसे वापिस लेलो और उसे गुफा तक पहुँचा दो, जहाँ इसका स्थूल शरीर पड़ा हुआ है।

स्वामीजी का आदेश तत्काल ही पालन किया गया। एक क्षणमें ही वे दोनों उसी गुफामें आपहुँचे। वहाँ पहुँचकर देखा तो दयानन्दका स्थूल शरीर तो ज्यों का त्यों पड़ा पाया, किन्तु रामानन्द के स्थूल शरीरका कुछ भी पता न था। यह देख दयानन्द और रामानन्द दोनोंको बड़ा विस्मय हुआ। दयानन्द ने रामानन्दसे कहा—"कहो भाई! अब क्या करना चाहिये? अगर तुम चाहो, तो तुम्हारा इस शरीर में प्रवेश करा दूँ? मेरी समझ में तो यही अच्छा है कि, तुम इस शरीर में घुस जाओ और मुझे विदा दो।" रामानन्द क्या

कहता? उसने अकुता-पछता कर उसी शरीरमें प्रवेश किया और दयानन्द से इस जन्म के लिए विदा ग्रहण की। वे दोनों फिर किसी जन्म में मिलेंगी, इस से हमें कोई सरोकार नहीं।

तेईसवाँ परिच्छेद ।

उलट पुलटका परिणाम ।
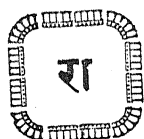
रामानन्दको हिमालयकी तराईमें छोड़, अब हमें अपने पाठकोंको यह बतलाना आवश्यक मालूम होता है, कि रामानन्द का स्थूल शरीर कैसे बदला ।

रामानन्द को कैलाश से वापिस आनेमें चौबीस घण्टे लगे। जिस समय रामानन्द वहाँ उस सुन्दरी रमणी को आलिङ्गन करने में मस्त था, उसी समय उस गुफा में एक साधु पहुँचा । उसका नाम सिद्ध गोपाल था । उसने नर्मदा-तटके एक महात्मासे कुछ साधारण योग-क्रिया सीख ली थी, परन्तु उसका मन सांसारिक वासनाओं से तृप्त न हुआ था। उसके मनमें भोग भोगने की इच्छा थी। उसको अपने स्थूल शरीर में रहकर इस संसारमें विचरण करने की बड़ी तीव्र अभिलाषा थी। उसने विचारा कि, मैं अपने इस पुराने देह पञ्जर में बहुत दिन तक जी न सकूँगा, अतः कोई नया

शरीर मिलता तो कैसा अच्छा होता। उस गुफामें उसे रामानन्द का नया शरीर दीखा। उसने सोचा कि, अब अपने संसारी जीवन को बढ़ानेका अच्छा मौक़ा है। देह बदलनेकी विद्या तो उसे आती ही थी, अतः उसने अपनी आत्माको रामानन्दके शरीरमें प्रवेश करा, अपना स्थूल शरीर उसी गुफामें छोड़ दिया और आप बद्रीनारायणके दर्शनोंकी अभिलाषा से हिमालयकी ओर चल दिया। जिस समय सिद्ध गोपाल रामानन्दके शरीरमें बद्रीनारायणकी ओर जा रहा था, उस समय रामानन्द सिद्ध गोपालके शरीरमें हरिद्वार की ओर आरहा था।

पाठक, थोड़ी देरके लिए सिद्ध गोपाल का पीछा छोड़ रामानन्दके साथ चलिये। रामानन्द सिद्ध गोपालकी जर्ज्जर देहमें हरिद्वार होता हुआ दिल्ली की ओर चल दिया। उसके दिलमें कोई निश्चय बात न थी। वह अपने घरभी न लौट सकता था। अगर लौटकर घर जाता तो उसे कोई भी न पहचानता। क्योंकि संसार में शरीरसे ही पहचान होती है। उसका शरीर बदला हुआ था, इससे वह बड़ी उधेड़ बुन में था। वह किंकर्त्तव्य विमूढ़ होरहा था। वह बारम्बार यही विचार करता था कि, मैं अपने माता-पिता, हितु-मित्रों को अपना परिचय किस तरह दूँ।

इसी तरह की चिन्तामें ग़ोता खाता हुआ वह दिल्ली पहुँचा। वहाँ पहुँचकर वह जमुना-घाट पर स्नान करने के

लिए जलमें उतरा। वह छाती-छाती जल में उतरा होगा कि, उसने देखा कि एक बुढ़िया दौड़ती हुई उसकी ओर आ रही है। वह हक्काबक्कासा होगया। इतने में बुढ़िया उस के शरीर से लिपट गई और कहने लगी:—"हे मेरे प्राणपति! हे मेरे सर्व्वस्व! क्षमा करो, अब मैं तुम्हें कहीं न जाने दूँगी। ईश्वरको कोटि कोटि धन्यवाद हैं, जिसने आज मेरे बिछुड़े हुए प्राणपतिको मुझ से फिर मिलाया!"

स्त्री की बातें सुनते ही रामानन्द चक्करमें पड़गया। उसने बुढ़िया से पीछा छुड़ाकर भागना चाहा, पर भाग न सका। बुढ़ियाने उसे खूब जकड़कर पकड़ लिया और उसे जल के बाहर खींच लाई।"

जलसे बाहर आकर रामानन्द ने कहा—"तुम ग़लती कर रही हो, तुम्हें भ्रम होगया है, मैं तुम्हारा पति नहीं हूँ।"

स्त्री—प्राणेश! इस बुढ़ापे में मुझे पागल न बनाओ। उम्र सठिया गई है, पर अभी अक्ल नहीं सठियाई है। तुम मेरे पति हो, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। मैं तुम्हारी बातोंमें न आऊँगी, तुम्हें हरगिज़ न छोड़ूँगी।

रामानन्द—अम्माँ! भ्रममें पड़कर क्यों बकती हो? होश में आओ, समझ-बूझकर मुँहसे बात निकालो।

इन दोनोंकी खींचातानी देखकर वहाँ बहुतसे तमाशाई जमा होगये। उनमें से एक बोला—"क्योंजी, तुम अपनी स्त्रीको माँ कहते हो? क्या तुम्हें शर्म नहीं आती?"

रामानन्द—(सक्रोध) पर जब वह मेरी स्त्री ही नहीं है, तब मैं उसे कैसे अपनी स्त्री कहूँ ? सच बात में कैसी शर्म ?

यह कहकर रामानन्द सिरपर पैर धरकर भाग छूटा। स्त्री भी उसके पीछे हो ली। कोई तीन सौ गज़की दूरी पर उस स्त्री ने उसे फिर पकड़ लिया, क्योंकि रामानन्द की जर्जर देह में और भागने की सामर्थ्य न थी। फिर खींचा-तानी होने लगी। फिर भीड़ इकट्ठी हुई। इतने में वहाँ एक बीस वर्षका नौजवान आदमी आ पहुँचा। वह रामानन्दको देखते ही उसके पैरों में गिरपड़ा और गिड़गिड़ाकर कहने लगा—"पिता जी ! आजका दिन बड़ा शुभ है, जो साढ़े चार वर्षके बाद आपके दर्शन हुए। धन्यवाद है भगवान को जिन्होंने आपको हमसे मिलाया। आप माताके व्यङ्ग वाक्यों से क्रुद्ध होकर चले गये थे, पर मैंने तो आप से कभी कुछ न कहा था। जहाँतक मुझे याद है,मैंने अपनी जानमें कोई अप-राध नहीं किया। पर आप इतने दिनों बाद मिलने पर भी बोलते नहीं, उलटा तिरस्कार करते हैं, मैं नहीं समझता इस का क्या कारण है ?

उस नवयुवककी बातें सुनतेही रामानन्द अपना क्रोध संवरण न कर सका। वह चिल्लाकर बोला—"देखोजी, तुम मेरे लड़के हरगिज़ नहीं हो सकते और वास्तवमें हो भी नहीं। तुम मुझे अपना पिता कहते हो, यह बड़ेही आ-

श्चर्यकी बात है। अभी तो मैं इस वृद्धासे भी अपना पिण्ड न छुटा सका था। बीचमें ही तुम आ कूदे।" वह सिद्ध गोपाल के जर्जर शरीरमें प्रवेश करनेकी बात भूलकर चट से बोल उठा—"अरे मूर्ख! अभी तो मेरी उम्र बाईस ही वर्षकी है। तू स्वयं बीस वर्षका है। भला, मैं तेरा पिता किधरसे हुआ?

रामानन्द की बात सुनतेही उपस्थित जन-समुदाय एकदम खिलखिलाकर हँस पड़ा। कितनोंही के तो हँसते-हँसते पेटमें बल पड़ गये, कितनोंहीको हिचकियाँ चलने लगीं। उनमें से एक शख्स यों उठ बोला:—"वाह जी वाह! देखो तो इस बूढ़े बालकको! यह अपने स्त्री पुत्रको पागल समझता है, पर असलमें यह स्वयं पागल है।

रामानन्द—मुझे कौन पागल कहता है?

एक दर्शक—"मैं कहता हूँ।" यह कहकर वह हँसने लगा। उसके हँसते ही सारी मण्डली हो हो करके हँसने लगी।

रामानन्द उनलोगों की बातें सुनकर और उन्हें दिल्लगी करते देखकर एकदम लालपीला होगया और गरज कर कहने लगा—"धूर्तो! मैं तुम सबका सिर फोड़ डालूँगा! तुम मुझे जालमें फँसाना चाहते हो, पर मैं फँसने वाला नहीं।

यह कहकर उसने सड़क से पत्थर उठा-उठाकर लोगोंपर बरसाने आरम्भ कर दिये। अब क्या था, किसी का सिर किसीका पैर, किसीका हाथ, किसी की नाक आदि अङ्ग

टूटने लगे। लोगोंने रामानन्दकी यह कार्रवाई देखकर ही उसे पागल समझ लिया। उनलोगों को इस बातका निश्चय होगया कि यह नुक़सान पहुँचाने वाला पागल है, अतः उन्होंने उसके हाथ पाँव बाँधकर उसे कोतवाली पहुँचा दिया। कोतवालने उसे मैजिस्ट्रेटके सामने पेश कर दिया। मैजिस्ट्रेट ने कुछ पूछताछके बाद उसे पागलख़ाने भेजनेका हुक्म दे दिया।

रामानन्द और मैजिस्ट्रेटके दर्म्यान जो सवाल-जवाब हुए, वे अपनी विचित्रताके कारण पाठकों को रोचक मालूम होंगे, अतः हम उन्हें ज्यों के त्यों पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ नीचे लिखे देते हैं :—

मैजिस्ट्रेट—तुमने लोगों पर पत्थर क्यों फेंके ?

रामानन्द—क्योंकि ये लोग मुझे पागल कहते थे।

मैजि०—तो क्या तुम पागल नहीं हो ?

रामा०—हरगिज़ नहीं।

मैजि०—सामने जो बूढ़ी स्त्री खड़ी है, क्या वह तुम्हारी स्त्री नहीं है।

रामानन्द—हरगिज़ नहीं।

मैजि०—क्या वह लड़का भी तुम्हारा नहीं है ?

रामा०—हरगिज़ नहीं।

मैजि०—मगर ये सब लोग तो कहते हैं कि, तुम उस स्त्री के पति और उस लड़के के बाप हो।

रामा०—ये सब झूँठे हैं। मुझे वृथा जालमें फँसाते हैं।

मैजि०—क्या तुम सिद्ध गोपाल नहीं हो?

रामा०—हरगिज़ नहीं?

मैजि०—अच्छा, तो तुम्हारा नाम क्या है?

रामा०—मेरा असली नाम ब्रजलाल है। लेकिन जबसे साधु होगया हूँ, तबसे मेरा नाम रामानन्द है।

मैजि०—तुम कहाँके रहने वाले हो?

रामा०—लखनौका।

मैजि०—तुम्हारी उम्र क्या है?

रामा०—२२ वर्ष।

रामानन्द की उम्र की बात सुनकर सब लोग हँस पड़े। यहाँतक कि मैजिस्ट्रेट साहब भी अदालतके क़ानून के ख़िलाफ़ हँसने लगे। उन्होंने हँसी रोकनी चाही, मगर रुकी नहीं।

मैजि०—मगर तुम्हारे शरीर से तो तुम ६० बरससे कम उम्रके नहीं मालूम होते।

रामा०—मैं अपने शरीरकी उम्रके सम्बन्धमें कुछ नहीं कह सकता, पर इसमें ज़रा भी शक नहीं कि मैं स्वयं २२ साल का हूँ।

मैजि०—तो फिर क्या तुम अपने शरीरसे भिन्न कोई दूसरे ही व्यक्ति हो?

रामा०—जी हाँ, असल बात यह है कि मेरा अपना शरीर किसीने चुरा लिया है।

रामानन्द की उपरोक्त बात सुनतेही फिर सब लोग खिलखिलाकर हँस पड़े।

मैजि०—किसने चुरा लिया है ?

रामा०—यह मुझे नहीं मालूम।

मैजि०—अगर तुम्हें फिरसे तुम्हारा चुराया हुआ शरीर मिल जाय, तो क्या पहचान लोगे ?

रामानन्द—बेशक, पहचान लूँगा।

यह जवाब सुनतेही मेजिष्ट्रेट साहबने व्यङ्ग्का उपयोग करते हुए कोतवाल साहबसे कहा—"कोतवाल साहब ! यह बड़े मार्के की चोरी है। इसका पता ज़रूर लगाइये।" मेजिस्ट्रेट की बात सुनते ही उपस्थित वकील लोग ज़ोरसे हँस पड़े।

रामानन्द इस हँसीको बर्दाश्त न कर सका। उसने क्रोध में आकर अपने पैर का जूता निकाल कर खूब ही ज़ोरसे हँसनेवाले वकील की ओर फेंका। मगर वकील साहब बच गये। वह उनसे ज़रा ही बचकर दूर जा पड़ा। बिना समझे-बूझे हँसनेवाले वकील साहब को जूतेसे कुछ नसीहत मिली होगी। मगर रामानन्द तो उसी वक्त पागलखाने भेज दिया गया। उसके जाने बाद भी मेजिस्ट्रेट साहब मुस्कराते रहे और एक वकीलसे बोले—"यह तो पागलपन का एक अजीब केस है ! आप की इसमें क्या राय है ?"

वकील—महोदय ! मेरी तुच्छ रायमें इस मामलेमें पराये शरीरमें घुसनेकी कुछ बात मालूम होती है।

रौजि०—पर मैं तो इस बातपर विश्वास नहीं कर सकता। मेरी समझमें तो उसकी भ्रममूलक कल्पना का यह फल है।

वकील—मेरे ख़्यालमें भी अब आपही की बात ठीक जँचती है।

पाठक ! अब रामानन्द को यहीं पागलख़ानेमें छोड़कर, हिमालय की तराईमें सिद्धगोपाल का पीछा कीजिए।
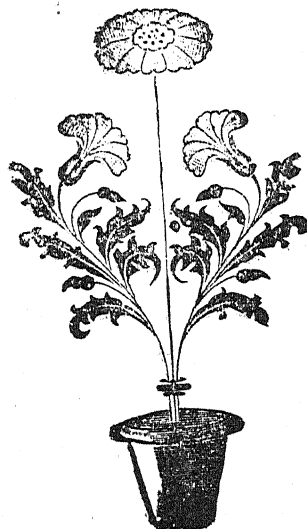
चौबीसवाँ परिच्छेद।

सिद्धगोपाल की करतूतें।

हिमालय पर्वत में होकर जो रास्ता बद्रीनारायण को गया है, वह बहुत ही भयानक, दुर्गम, और सङ्कीर्ण है। एक ओर तो बड़े-बड़े पर्वत-शिखर दिखाई देते हैं, जिन पर बर्फ जमी हुई है; दूसरी ओर एक बहुतही भयङ्कर खाई नज़र आती है। यहाँ पहाड़ी झरनों के जलके गिरनेसे घोर शब्द होता है। कितनेही स्थानों पर इन दोनों दृश्यों के बीचमें होकर राह गई है और कितने ही स्थानों पर दोनों ओर पर्वत-श्रेणियाँ हैं और बीचमें आने-जाने की राह है। मनुष्य धार्मिक निष्ठाके कारण इन अलङ्घ्य पर्वत और दुर्गम घाटियों को पार कर जाता है। हमारा सिद्धगोपाल भी अनेक प्रकारके कष्ट सहता हुआ, इन पर्वत और घाटियोंको पार करके जैसे-तैसे बद्रीनारायण पहुँच गया।

जिस समय भारतमें ग्रीष्मऋतुके कारण धरती और आकाश तपने लगते हैं, गर्म लूएँ चलने लगती हैं, गरमीके मारे मनुष्य

और पशु-पक्षी त्राहि-त्राहि करने लगते हैं, उस समय उसी ग्रीष्म ऋतुमें वहाँ सूर्य्यनारायणकी किरणों की उष्णता ज़रा भी नहीं व्यापती। गरमीके मौसमके तीन महीनोंके सिवा, बाक़ीके नौ महीने यहाँ शीतमें बीतते हैं। सब जगह बर्फ़ जमी रहती है। इन नौ महीनों में कोई प्राणी यहाँ जा नहीं सकता। बर्फ़ के कारण राह नहीं मिलती। इसलिये भक्त लोग गरमी के मौसममें ही इस पुण्यक्षेत्र की यात्रा करते हैं। इस मौक़े पर, हिन्दुस्तानके प्रत्येक प्रान्तसे यहाँ हज़ारों यात्री जमा होते हैं।

सिद्धगोपाल बद्रीनारायण के दर्शन करके वापिस लौटा। एक दिन वह अपनी राह-राह चला आरहा था कि, रास्तेमें उसे एक लखनौका व्यापारी मिला। उसने उसे रामराम-प्रणाम करके अपना परिचय देना चाहा, किन्तु सिद्धगोपालने उसका कुछ भी ख़याल न किया। व्यापारी ने इस बातसे बुरा न माना। वह साहस करके एकदम सिद्धगोपालके पास जा खड़ा हुआ और उसके कन्धे पर हाथ रखकर पूर्व्व-मैत्रीकी याद दिलाते हुए कहा—"कहिये मित्र ब्रजलालजी! यात्रा कर आये? क्या आप अपने मित्र नन्दलाल को भूल गये? अफ़सोसकी बात है कि, आपने अपने मित्रके प्रणाम का उत्तर भी न दिया! जबसे आप संसार-त्यागी साधु होगये हैं, तबसे आपमें बड़ा परिवर्त्तन होगया है।

सिद्धगोपाल उस पुरुषकी बात का कुछ भी उत्तर न दे

सका। उसने उसको नीचेसे ऊपर तक कई बार निहारा। मनमें बहुत कुछ याद भी की। अन्तमें चकरा कर बोला:—"महाशय! मैंने बहुत कुछ याद किया, पर मुझे याद नहीं आता कि, मैंने आपको कभी आज के पहले देखा हो। मेरी समझमें आपको भ्रम हुआ है। आप पहचाननेमें ग़लती कर रहे हैं।"

उस पुरुषने जंवाब दिया—"अगर मैं अपने पहचाननेमें ग़लती कर सकता हूँ, तो आपके पहचाननेमें भी ग़लती कर सकता हूँ। आपके पहचाननेमें ग़लती करना, अपने पहचानने में ग़लती करनेके बराबर है। क्या कभी ऐसा हो सकता है? मुझे पूर्ण विश्वास है कि, आप मेरे मित्र ब्रजलाल हैं। पर अगर आप मुझे पहचानने की ज़रूरत नहीं समझते, तो मुझे भी इसके लिये आग्रह नहीं है। यह बात कहकर उस पुरुषने अपना रस्ता लिया।

सिद्धगोपालको इस मुलाक़ात से आनन्द के बजाय दुःख ही हुआ। वह समझ गया कि मैंने जिस शख़्सके शरीरको चुराकर धारण कर लिया है, उसका नाम ब्रजलाल है और वह इस व्यापारी का मित्र है। सिद्धगोपाल भी उससे विदा ले हरिद्वार की ओर चल दिया। हरिद्वार पहुँचने पर उसे एक और भी विचित्र बात मालूम हुई। वहाँ उसे एक मनुष्यने रामानन्दके नाम से पुकार कहा—"मित्र रामानन्दजी! आप आगये? आपने रेलमें मुझसे हरिद्वारमें एक सप्ताह ठहरने

का वचन दिया था। मैंने आपको यहाँ तलाश किया, पर आप कहीं न मिले, न जाने कहाँ ग़ायब होगये।"

उस आदमी की बात सुनतेही रामानन्द भौंचकसा हो गया। उसकी दशा पागलों की सी होगई। उससे यदि कोई पूछता कि तुम सिरके बल खड़े हो या पाँवोंके, तो वह इस प्रश्न का भी उत्तर न दे सकता। वह बड़े असमञ्जसमें पड़ गया और उसकी बात का कुछ भी जवाब न देकर, अपने मनहीमन बुदबुदाने लगा। अपने मनमें वह क्या कहता था, इसको वह स्वयं भी न समझ सका।

वह मनुष्य—भाई रामानन्द! मामला क्या है, जो आप मुँहसे भी नहीं बोलते ? मैंने आपकी हालत आजके पहले कभी ऐसी नहीं देखी।

उस मनुष्य की यह बात सुनते ही रामानन्द और भी उलझनमें पड़ गया। अन्तमें लाचार होकर बोला—"मुझे तो याद नहीं आता कि,आजके पहले मैंने कभी कहीं आपको देखा हो।

वह मनुष्य—आपकी बातोंसे मालूम होता है कि, आपकी स्मरण-शक्ति बिल्कुल कमज़ोर है। क्या आपको यह भी याद नहीं है कि, आप मेरे पन्द्रह रुपये के क़र्ज़दार हैं ?

सिद्धगोपाल—जहाँतक मुझे याद है, मैंने आपसे कभी एक पैसा भी क़र्ज़ नहीं लिया।

वह मनुष्य—जहाँतक मुझे याद है, मैं पकाई से कह

सकता हूँ कि, आपने मुझसे पन्द्रह रुपये बतौर क़र्ज़ के लिये हैं।

सिद्धगोपाल—आपकी बातोंसे मालूम होता है कि, आप परले सिरेके झूँठे हैं !

मनुष्य—और आप परले सिरेके बेईमान हैं।

सिद्धगोपाल—ज़बान सम्हालकर बोलो, नहीं तो अभी सिर फोड़ दूँगा।

मनुष्य—मैं भी आपकी हड्डियाँ नर्म कर दूँगा।

सिद्धगोपाल—तुम बड़े धूर्त्त मालूम होते हो।

मनुष्य—मुझे तुम डाकू मालूम होते हो।

इस तरह आपसमें तू तू मैं मैं होते-होते दोनों क्रोधमें बावले होगये। क्रोधान्ध होकर दोनों हिन्दुस्तानी साँडों की तरह एक दूसरे पर टूट पड़े। दोनोंमें लगी लात घूँसे और जूते चलने। दुर्भाग्यसे एक कॉन्सटेबिल ने दोनों को पकड़ कर मैजिस्ट्रेट के सामने पेश कर दिया। मैजिस्ट्रेट ने आम सड़कपर दङ्गा-फिसाद करनेके लिये दोनों पर जुर्माना ठोक दिया। इसके पीछे उस मनुष्यने सिद्धगोपाल पर अदालत दीवानी में १५) रुपये की नालिश कर दी। अदालतने उसे डिग्री दे दी। उसने डिग्री इजरा कराकर उसका सामान नीलाम करा दिया और अपने रुपये वसूल कर लिये। ऐसी आफतोंसे तङ्ग आकर सिद्धगोपाल हरिद्वार से हाथरसको चल दिया। उसे स्वप्नमें भी ख़याल

नहीं था, कि ऐसी ऐसी आफ़तोंका सामना करना पड़ेगा।

नन्दलालने लखनौ पहुँचकर लोगों से नक़ली ब्रजलाल का सारा क़िस्सा कह सुनाया। ब्रजलालके पिताने सारा समाचार राजकुमारके बापको लिख दिया। इस पत्रसे राजकुमारके पिता को ब्रजलालका साधु होजाना मालूम हो गया। उन्होंने अपने मनमें समझ लिया कि,वह साधु होजाने के कारण ही लोगोंके सामने अनजानसा बननेका ढोंग करता है।

इधर ये बातें होरही थीं, उधर सिद्धगोपाल हाथरस पहुँच गया। एक दिन वह हाथरसके चौक में घूम रहा था कि, उसी समय उसे राजकुमार के नौकर ने देख लिया। इन दिनों राजकुमार गर्म्मियोंकी छुट्टी के कारण फिर अपने घर आया हुआ था। नौकर से ख़बर पाते ही वह दौड़ा हुआ बाज़ार गया। मगर वहाँ पहुँचकर उसने जो कुछ देखा, उससे उसके आश्चर्य्य की सीमा न रही। उसने देखा कि ब्रजलाल साधुका भेष बनाये बाज़ारमें भीख माँग रहा है। राजकुमारको इस नक़ली ब्रजलाल पर सन्देह हुआ। जिस हाथरसमें वैसी भयङ्कर घटना घटी थी, जिसके कारण ब्रजलाल को घोर मनोकष्ट हुआ, जिसके कारण वह सर्व्वस्व त्याग कर साधु हुआ, उसी हाथरसमें ब्रजलाल का आना और भीख माँगना राजकुमारको सन्देहसे ख़ाली न जँचा। उसने साधुसे

कुछ भी न कहा, परन्तु उसके पीछे लग गया। थोड़ी देरके बाद सिद्धगोपाल भीख माँगता-माँगता राजकुमार के मकान पर पहुँचा और वहाँ भिक्षा माँगने लगा। राजकुमार झटसे पीछे के द्वार से अपने मकानमें घुस गया और एक बर्तनमें थोड़ासा आटा लेकर उसे देनेके लिये बाहर निकल आया। उसे मालूम था कि, ब्रजलालकी हथेलीमें एक तिल है। उसीको देखनेके लिये उसने यह चाल चली। उसने सोचा कि जब वह आटा लेने के लिए हाथ पसारेगा, तब मैं उस तिलको देख लूँगा। अगर उसके हाथमें तिल होगा, तब तो वह ब्रजलाल ही होगा। हुआ भी ऐसा ही, सिद्धगोपालके भिक्षा लेते समय राजकुमारको तिल दिख गया। अब उसे उसके ब्रजलाल होनेमें ज़रा भी सन्देह न रहा।

सन्देह भञ्जन होतेही ब्रजलाल सिद्धगोपालको घरके अन्दर लेजाने पर आमादा हुआ। वह उसे अन्दर लेजाता था और वह जाना न चाहता था। दोनोंमें खूब झगड़ा और हाथापाई होने लगी। परिणाम यह हुआ कि, सिद्धगोपालकी माँगी हुई भिक्षा सब रास्तेमें बिखर गई। सिद्धगोपाल क्रोधित होकर बोला—"भले आदमी! मेरा पीछा छोड़। मुझ ग़रीबको नाहक़ क्यों तङ्ग करता है?"

राजकुमार बोला—"बड़ी मुश्किलसे आप मिले हैं। आपको तलाश करते-करते हमारी नाकमें दम होगया। अब मैं आपको पहचान गया। जान-बूझकर आपको नहीं छोड़ सकता।

राजकुमारकी बात सुनतेही सिद्धगोपालको हरिद्वारकी घटना याद आगई। उसने मनमें सोचा—'मैंने जिस मनुष्य का शरीर चुराकर धारण कर लिया है, उसने इस शख़्स को कुछ तकलीफ दी है, इसीसे यह मुझे भीतर ले जाकर मारना चाहता है।' यह विचार दिमाग़में आते ही वह एकदम डर गया। उसने अपने तईं मारपीट से बचानेके के लिए राजकुमारसे अपना पीछा छुड़ानाही श्रेयस्कर समझा। जब उससे कुछ भी न बन पड़ा, तब उसने दाँतों से राजकुमारका हाथ काटना शुरू किया। राजकुमारने उसका हाथ छोड़ दिया। हाथ छूटते ही वह सिर पर पाँव धरके भागा। राजकुमार भी उसके पीछे-पीछे भागता जाता था और चिल्लाता जाता था—"पकड़ो! पकड़ो!! यह ब्रजलाल है। पागल होगया है।"

यह सुनते ही अनेक लोग दौड़ पड़े और थोड़ी देरमें ही उसे पकड़ लिया। उसके हाथ पाँव उसकी पीठसे बाँध दिये गये और मुँह पर भी एक कपड़ा इस ग़रज़ से बाँध दिया गया, कि वह किसी को अपने हाथ पाँव और मुख द्वारा नुक़सान न पहुँचा सके।

इस हालतमें सिद्धगोपाल राजकुमारके घर लाया गया। वहाँ उसकी मुश्कें खोल दी गईं और मुँहके ऊपरका कपड़ा भी हटा दिया गया। फिर उसके और राजकुमारके दर्म्यान बातचीत होने लगी। उन दोनोंमें जो वार्तालाप हुआ, वह

पाठकों के मनोरञ्जनार्थ अविकल रूपमें नीचे लिखा जाता है:—

राजकुमार—आप मुझे जानते हैं ?

सिद्धगोपाल—बिल्कुल नहीं।

राजकुमार—यह किसका मकान है ?

सिद्ध॰—मुझे क्या मालूम ?

राजकुमारके पिता—मुझे जानते हो ?

सिद्ध॰—जी नहीं, मैं आपको भी नहीं पहचानता।

राज—आप मेरी बहिन गङ्गाबाईको जानते हैं ?

सिद्ध॰—गङ्गाबाई किस चिड़िया का नाम है ? मैंने तो आज तक उसका नाम भी नहीं सुना।

राज॰—आप एक मास के पहले उसे लेने आये थे न ?

सिद्धगोपालने इस प्रश्नसे समझा कि गङ्गाबाई के सम्बन्धमें उसपर कुछ अपराध लगाया जायगा, इसलिये बोला:—

"मैं उसके लिए अपनी ज़िन्दगीमें कभी नहीं आया।"

राज॰—आपने उसे कभी देखा है ?

सिद्ध॰—कभी नहीं।

राज॰—आप लखनी रहते हैं न ?

सिद्ध॰—मैं ख़्वाब में भी कभी लखनी नहीं गया।

राज—आपका निवास-स्थान कहाँ है ?

सिद्धगोपाल—देहली।

राजकुमार आगरा कॉलिजकी बी॰ ए॰ क्लासका विद्यार्थी

था। वह दर्शनशास्त्र के ज्ञाता एक धुरन्धर विद्वान् अँगरेज़ से मानवशास्त्र पढ़ता था। उसने समझ लिया कि यह गड़बड़ी भ्रममूलक कल्पनासे हुई है। अतएव उसने पितासे सिद्ध-गोपाल को डाक्टर क्लाफ़ सुपरिण्टेण्डेन्ट पागलखाना देहलीके पास इलाजके लिए भेजने का आग्रह किया।

सिद्धगोपालको लाचार होकर अपना साधु-भेष छोड़कर साधारण मनुष्योंकेसे कपड़े पहनने पड़े। पुराने कपड़े उतारते ही उसके कोटमें गङ्गाबाई का फोटो भी मिला। राजकुमारने वही फोटो सिद्धगोपालको दिखाकर पूछा—"क्योंजी! आप जानते हैं यह तस्वीर किसकी है?"

सिद्ध०—मुझे नहीं मालूम, यह तस्वीर किसकी है?

राज०—यह तस्वीर आपको कहाँ मिली?

सिद्ध०—यह भी मुझे नहीं मालूम।

अब तो राजकुमारको निश्चय रूपसे विश्वास होगया कि, ब्रजलाल का शरीर किसी दूसरेसे अवश्य बदल गया है। अतः उसने सिद्धगोपालको डाक्टर क्लाफ़के पास दिल्ली भेज दिया।

पच्चीसवाँ परिच्छेद ।

डाक्टर क्राफ्ट ।

डाक्टर क्राफ् बड़ेही विद्वान् और बुद्धिमान हैं। चिकित्सा-कर्ममें सिद्धहस्त और पीयूषपाणि हैं, इसीसे चारों ओर उनकी शोहरत होरही है । प्रायः सौमें नव्वे रोगी उनके हाथमें जाकर आरोग्य लाभ करते हैं। चिकित्साशास्त्रमें पारङ्गत होनेके सिवा, लोग उन्हें मानव-शास्त्रवेत्ताओंमें भी अद्वितीय समझते हैं। वर्त्तमान शताब्दीमें उनके जोड़का मेस्मराईज़र देखा नहीं गया। उन्होंने बहुतसे लोगोंको अपने योगबल अथवा मेस्मरेज़म विद्यासे जीवनदान दिया है। रामानन्द भी कुछ दिनों से इनके ज़ेर इलाज है। आज एक दूसरा रोगी सिद्धगोपाल भी उन्हींके पास इलाजके लिए आया है। दोनों रोगी क़रीब-क़रीब एकसे हैं। डाक्टर साहबने दोनो रोगियोंको एकसी स्थितिमें देख मनमें विचारा "इन दोनोंको आपसमें मिलानेसे बड़ा मज़ा आवेगा। किसी उर्दू शायरने कहा है—"खूब गुज़रेगी, जो मिल बैठेंगे दीवाने दो।" खैर, डाक्टर साहबने दोनों दीवानोंको मिलानाही मुनासिब समझा और दूसरे दिन सवेरे ही सिद्धगोपालको रामानन्दके कमरेमें भेज दिया।

सिद्धगोपालको देखते ही रामानन्द ज़ोर से चिल्ला उठा—"डाक्टर साहब देखिये, चोर मिल गया। इसीने मेरे शरीरकी चोरी की है। इसने जो देह धारण कर रक्खी है, मेरी है।" यह कहकर वह सिद्धगोपालकी ओर झपटा। सिद्धगोपाल भी अपना शरीर दूसरेके पास देख बड़ा लज्जित हुआ। इस पराये शरीरके कारण वह अनेक प्रकारकी मुसीबतें झेल चुका था, तरह-तरहके दण्ड भोग चुका था। इसलिये वह रामनन्दके शरीरसे भारी आगया था। अब उसके मनसे अधिक जीनेका विचार दूर भाग गया था। वह उकताकर रामानन्दसे कहने लगा—"भाई! तुम अपना शरीर शौक़ से ले लो। मैं कुछ भी आपत्ति नहीं करूँगा। मुझे यह बात सहर्ष स्वीकार है। मैं अपना शरीर धारण कर लूँ और और तुम अपना, इसीमें हमारी तुम्हारी भलाई है।" डाक्टर साहबके लिए इतना इशारा ही काफी था। वे समझ गये कि, दोनों के स्थूल शरीर बदल गये हैं।

इसके बाद उन्होंने योग-क्रिया द्वारा दोनों को सुला दिया। जब दोनों सुषुप्ति अवस्थामें होगये, तब उन्होंने ज़ोर से कहा—"रामानन्द और सिद्धगोपाल! मैं आदेश करता हूँ कि तुम अपने-अपने असली शरीर धारण करो।" इसके बाद उन्होंने रामानन्दके शरीरसे, जो सिद्धगोपालके पास था, पूछा—"तुम अपने असली शरीरमें प्रवेश कर चुके या नहीं?" उसके "हाँ" कहने पर, उन्होंने वही प्रश्न दूसरे से भी किया।

उसने भी जब "हाँ" कहा, तब उन्होंने अपने मनमें समझ लिया कि चिकित्सामें सफलता होगई। जब उन्हें इस बातका निश्चय होगया, तब उन्होंने दोनों शरीरों से फिर कहा—"मैं थोड़ी देरमें कचहरी जाऊँगा। जानेके पहले १ से ६ तक गिन्ती बोलूँगा। मेरा आदेश है कि, ज्योंही मेरे मुँह से ६ की आवाज़ निकले त्योंही तुम दोनों जाग्रत अवस्थामें आजाना। जागतेही साधु होनेका ख़याल छोड़ देना और अपने-अपने घर जाकर अपनी-अपनी गृहस्थीमें सन्तुष्ट रहना। तुम दोनों में क्या-क्या गुज़री है, इसे भी भूल जाना।" ये बातें समझा कर डाक्टर साहबने गिन्ती शुरू की। उनके मुँहसे ६ की आवाज़ निकलतेही दोनो होशमें आगये। उस दिनसे पर-काया-प्रवेश की असत्यता संसारसे सदाके लिये उठ गई। जो इस बात पर विश्वास न करते थे, इसे महज़ पागलपनकी बात समझते थे, उन्हें भी इस बात पर विश्वास होगया। इस इलाजमें कामयाबी होनेसे डाक्टर क्राफ्ट की प्रशंसा और भी ज़ोर शोरसे होने लगी।

ब्रजलालके पिता को यह समाचार सुननेसे बड़ी प्रसन्नता हुई। यह ख़बर पातेही वह दिल्ली आकर अपने बेटे को लखनौ लिवा लेगया। वहाँ पहुँचते ही ब्रजलालको अपनी पत्नी के मिल जानेकी ख़बर मिली। उससे उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। वह दुबारा दूल्हा बनकर बरातके साथ हाथरस गया। इस बार विवाह निर्विघ्नता-पूर्व्वक समाप्त होगया। दुलहिन

को लेकर दूल्ह मय बरात के लखनौ लौट आया। अब पति-पत्नी दोनों प्रेमपूर्व्वक रहने लगे।

सिद्धगोपाल भी साधुपनेका विचार छोड़, अपने घर दिल्ली आगया और स्त्री-पुत्रके साथ आनन्दपूर्व्वक गृहस्थ-सुख भोगने लगा। उसकी आयुके शेष दिन आनन्दमें व्यतीत होने लगे।

अब ये लोग आनन्दपूर्व्वक गृहस्थ-सुख भोग रहे हैं। हम भी भगवानसे इनके सदा सुखी रहने की प्रार्थना करते हुए सदा के लिये इनसे विदा ग्रहण करते हैं।

छब्बीसवाँ परिच्छेद

अरबिस्तान ।

आइये पाठक, अब ज़रा अरब चलकर प्यारी जानकी खबर लीजिए। वह पहले कैसी सुन्दर थी और पीछे कैसी कुरूपा होगई, यह तो आपलोगोंको मालूमही है। वह जहाज़में सवार होकर बम्बईसे अदनके लिए रवाना होगई, यह भी आप जानते हैं।

प्यारी का जहाज़ बम्बई बन्दरसे अदनके लिये रवाना होकर चन्द रोज़में अदन पहुँच गया। अदन आजकल ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत है। यहाँ अँगरेज़ सरकारकी पल्टन-फौज और तोपख़ाने रहते हैं। अपने देशके हज़ारों व्यापारी भी यहाँ व्यापारके लिये चले गये हैं। अदन बन्दर आजकल खूब गुलज़ार है। हज करने वाले यात्री यहीं से मक्का शरीफ के लिए रवाना होते हैं। प्यारी जानको अदनसे ऊँट किराये करना पड़ा। उसी जङ्गलके जहाज़ पर सवार होकर वह दस दिनकी कठिन यात्राके बाद अपने गन्तव्य स्थानपर पहुँच गई। वहाँ पहुँचकर उसने एक दिन-रात निराहार रहकर

ईश्वराराधना की। ईश्वरने उसकी प्रार्थना सुनी और स्वीकार की। उसका चित्त सांसारिक जञ्जालोंसे मुक्त होकर एकदम शान्त होगया। काम, क्रोध, मोह, लोभ प्रभृति शत्रुओंने उस का पीछा छोड़ दिया। शोक, सन्ताप, दुःख न जाने कहाँ चले गये। उसका अन्तःकरण विशुद्ध और निर्मल होगया। वह एकाग्रचित्तसे ईश्वर के ध्यानमें लीन होगई।

जब तक मनुष्य पर ईश्वर-कृपा नहीं होती, तबतक मनुष्य का मन संसारी वासनाओंमें संलग्न रहता है—काम, क्रोध, मोह, मद, लोभ, आदि परम शत्रु उसका पीछा नहीं छोड़ते। जबतक ये दुष्ट मनुष्य का पीछा नहीं छोड़ते तब तक मनुष्यका चित्त मैला रहता है। किन्तु जब ये पीछा छोड़ देते हैं, तब मनुष्य का मन शुद्ध और साफ हो जाता है। जिस तरह साफ कपड़े पर प्रत्येक प्रकारका रङ्ग अच्छी तरह चढ़ता है, निर्मल दर्पणमें चेहरा स्पष्ट दीखताहै ; उसी तरह विशुद्ध अन्तःकरणमें शान्तिका सञ्चार होता है। शान्तचित्तही एकाग्र होकर ईश्वराराधनमें लग सकता है आज प्यारी जानपर परमात्मा की कृपा है। उसका अन्तःकरण विशुद्ध और निर्मल है, इसीसे उसका ध्यान ईश्वर की ओर जारहा है। ईश्वर-भजन ही उसे सबसे अधिक प्रिय मालूम होता है।

उसने अपने हाथमें एक तस्बी—माला—ले रक्खी थी। कपड़े दरवेशों के से हरे पहन रक्खे थे। इस समय वह पहले

से बिल्कुल ही बदल गई थी। उसके पहले के कुत्सित आचरण का कोई चिह्न उसके चेहरे पर नज़र न आता था। उसके चेहरे पर एक परम मनोहर दिव्य कान्ति झलकती थी।

कुछ दिन मक्कामें रहने पर उसका चित्त शुद्ध होगया। उसके धार्म्मिक विचारोंमें एकदम परिवर्त्तन होगया। अब उसका इरादा हिन्दुस्तान लौटनेका हुआ। किन्तु इसी बीचमें उसका मदीना जाकर मुहम्मद साहब की दरगाहके दर्शन करनेका विचार होगया। उसकी वह इच्छा भी पूरी होगई। अन्तमें वह मदीना से ऊँट किराये कर के हिन्दुस्तान आनेके लिए अदन की ओर वापिस रवाना हुई।

ऊँट को बहुधा लोग "मरुस्थलकी नौका" या "रेगिस्तान का जहाज़" कहते हैं। ये जानवर है भी ऐसाही। उन रेतीले रेगिस्तानों में जहाँ आठ-आठ दस-दस दिन तक जल नहीं मिलता, जहाँ नाम मात्रको किसी वृक्ष की छाया नज़र नहीं आती, जहाँ गाड़ी घोड़ा बैल इत्यादि कोई पशु चल नहीं सकता, ऊँट ही काम देता है। भगवान्‌ने इसे उन्हीं जङ्गलोंके लिए बनाया है। यह आठ-आठ दस-दस दिनके लायक़ जल अपने पेटमें भर लेता है। जङ्गलमें जो कुछ भी मिल जाता है, उसी पर गुज़र कर लेता है। यह ग़रीब और सीधा जानवरही रेतीले समुद्रके पार करनेमें सफलीभूत होता है। प्यारी जान ऊँट पर सवार होकर दूसरे दिन

मरुभूमिके मध्यस्थलमें जा पहुँची। उस समय रात्रिका अवसान हो चुका था, भास्कर भगवान् पूर्व्व दिशामें उदय होकर संसारको अपने दर्शनोंसे सञ्जीवनी शक्ति प्रदान करनेवाले ही थे, चारों ओर शान्ति का राज्य था, कोसों तक कोई पशु-पक्षी या वृक्ष-पादप नज़र न आता था. जिधर देखो उधर रेतके टीलेही टीले दिखाई देते थे। ऐसे स्थानको देखनेसे प्रत्येक दर्शक के चित्तमें भयका सञ्चार होना सम्भव है।

जिस समय बाल सूर्य्य की किरणों से जगत् का अन्धकार नाश होकर प्रकाश फैल रहा था, पापियों के मनमें भय का सञ्चार होरहा था, ठीक उस समय उसने अपने ऊँटको बैठा दिया। आप उतर कर, हाथ मुँह धोकर, रेतमें ही एक कपड़ा बिछाकर, ईश्वरकी प्रार्थना करने लगी। उस शान्त निर्जन मरुभूमिमें प्यारी के कोमल मुखसे "अल्लाहो अकबर" का शब्द बहुत ही मधुर और मनोहर मालूम होता था। प्यारी के तृषित चित्तमें ईश्वर-प्रार्थना से वैसाही सन्तोष हुआ, जैसा कि कई दिनके प्यासेको शीतल जलके मिलनेसे होता है। प्यारी जान प्रार्थना या नमाज़ से फ़राग़त होकर, फिर अपने ऊँटपर सवार हुई और आगेकी यात्रा आरम्भ की। उस समय मार्त्तण्डकी प्रखर किरणों की असह्य ज्वाला क्षण क्षण बढ़ती जाती थी। यहाँ तक कि दिन के दस बजे के क़रीब तो वह नितान्त ही असह्य हो उठी।

प्यारीका ऊँटवाला पक्का अरब था। उसमें अपनी जाति के स्वाभाविक गुणोंका समावेश पूर्णरूपसे था। वह दुश्चरित्र और व्यभिचारी था। प्यारीको निर्जन मरुभूमि में, जहाँ कोई आदमी न आदमज़ाद था, अकेली देखकर उसका पापी मन पाप-पन्थ की ओर प्रवर्त्तित होगया। वह कामातुर होने के कारण निर्भय और निर्लज्ज होगया। यद्यपि प्यारीके एक आँख नहीं थी, यद्यपि वह फ़कीराने भेष-लिबासमें थी, तथापि वह इतनी कुरूपा न मालूम होती थी, जो एक अरबी ऊँट वालेके मनको भी मोहित न करती। उसमें अब भी रूप-लावण्य था, इसके सिवा उसके पास द्रव्य भी था। ऊँटवा-लेने इन सब बातोंका विचार करके उसे अपनी बीबी बनाने का संकल्प कर लिया। उसने शीघ्रही ऊँटका रुख बदल दिया। रुख बदला हुआ देखतेही प्यारीने अरबसे कहा—"अदन तो जुनूब (दक्खन) में है और हमलोग शुमाल (उत्तर) को क्यों चल रहे हैं ?"

ऊँटवाला—हम लोग अपने घरकी तरफ चल रहे हैं।

प्यारी०—क्या कहा! तुम्हारे घरकी तरफ चलने से मुझे क्या मतलब ? खुदा के लिए ठीक-ठीक हाल बयान करो, तुम्हारे मनमें क्या है ? शिशोपञ्ज में मत रक्खो।

ऊँटवाला—असल बात यह है कि, तूने मुझे दीवाना बना दिया है। मैं तुझ पर हज़ार जान से फिदा हूँ, तेरी खूबसूरती मेरी आँखोंमें चुभ गई है। अब मुझे तेरे बिना

क्षणभर कल नहीं। खुदा जाने मैंने इतने दिन कैसे काटे हैं, अब मैं तुझे छोड़ना नहीं चाहता, इसीसे तुझे अपने घर लिये चलता हूँ। मेरा घर ही तेरा घर होगा। मेरी माँ और बहिन तुझे प्यारसे रक्खेंगी। तू घरकी मालकिन बन कर रहियो और खुदा ने जो कुछ मिहरबानी करके दिया है, उसे मञ्जूर कीजियो।

प्यारी ऊँटवाले की बात सुनते ही एकदम घबरा गई, मगर फिर धीरज धरकर बोली—"मियाँ साहब! अरबमें तो एक से एक खूबसूरत औरतें हैं, यहाँ की औरतों को देखकर तो हूरें भी शर्माती हैं। न जाने क्यों आप एक फ़क़ीरनी पर आशिक़ हुए! खुदाके लिए रहम कीजिये और मेरी गुस्ताख़ी माफ़ कीजिए। मैं आपके लायक़ नहीं।"

ऊँटवाला—इन बातों से कोई मतलब नहीं। मुझे अरब की औरतों और हूरों से क्या काम? मेरा दिल तो तुम्हीं से राज़ी हुआ है, इसलिए मेरी नज़र में तुम्हीं हूर हो।

प्यारी—आप मुझपर रहम कीजिये, खुदाके लिए तर्स खाइये, मुझे न सताइये। मैं अर्ज़ कर चुकी हूँ कि मैं आपकी बीबी बनने लायक़ नहीं। मैं खुदावन्द करीमकी एक अदना लौंडी हूँ, मुझे उसीकी बन्दगीमें ज़िन्दगी बसर करने दीजिये। मैंने मक्का शरीफमें ऐसे कामों से तोबा कर ली है। अहद कर लिया है कि, इस ज़िन्दगीमें मैं ऐसे कामोंके नज़दीक न जाऊँगी।

ऊँटवाला—मैं तुम्हारी एक न सुनूँगा। बातें न बनाओ, सीधी मेरे घर चलो चलो। घर अब दूर नहीं है।

प्यारीजान—रहम करो! रहम करो! ख़ुदासे खौफ़ करो! वह हाज़िर और नाज़िर है। मुझे न छेड़ो, मुझे अपनी राह-राह जाने दो। हाँ, मेरे पास जो मालोज़र है, उसे तुम चाहो तो ले सकते हो।

ऊँटवाला—तुम्हारी इन वाहियात बातों को मैं नहीं सुनूँगा। मेरी बीबी बननेमें ही तुम्हारी ख़ैर है। जब तुम मेरी बीबी बन जाओगी, तब तुम्हारा माल ख़ुद ही मेरे पास आ जावेगा, मैंही मालिक बनूँगा, और कौन बनेगा?

प्यारी—मियाँ! ये ख़याल छोड़ दीजिये। मैं आपके साथ हरगिज़ न चलूँगी।

ऊँटवाला—मान लो कि आप मेरे हमराह न चलेंगी, पर ऊँटके हमराह तो चलेंगी। मान लो, आप ऊँट से कूदकर कहीं भागें, मगर कहीं भी क्यों न जायँ, इस जङ्गल में मेरी नज़रों से छिप नहीं सकतीं। मैं तुम्हारा पीछा छोड़ने वाला नहीं। जहाँ जाओगी, वहीं मौजूद मिलूँगा। अगर किसी तरह मेरी आँखोंमें धूल झोंककर निकल भी जाओगी, तो कुत्तेकी मौत मरोगी। इस रेगिस्तान बयाबानमें ऐसा कौन है जो तुम्हें इसके पार लगावे?

प्यारी—या अल्लाह! या पर्वरदिगार! या ख़ुदावन्द

करीम ! तू हाज़िर और नाज़िर मग्रज़्र है । मेरी ख़बर ले, इस वक्त मैं बेढ़ब फँसी हूँ ; तेरे सिवा इस वक्त मेरा कोई नहीं । अगर तू भी मेरी ख़बर न लेगा, तो बस फिर मेरा ठिकाना नहीं । बुरी हालत होगी ।

ऊँटवाला—बेशक बुरी हालत होगी । ख़ुदाको ख़ुद मञ्ज़ूर है कि तू मेरी बीबी बने । मेरे हाथ से अब तेरी रिहाई मुहाल है ।

प्यारी—अरे नालायक़ ! ओ जल्लाद ! क्या ख़ुदाको एक दम भूल गया ? ऐसे अल्फ़ाज़ ज़बान पर मत ला । ख़ुदा सब जगह मौजूद है, वही मुझे बचावेगा । वही तेरे हाथ से रिहाई करावेगा । वह ग़रीबों और बेकसों को जल्द ख़बर लेता है । मुझे पक्की उम्मीद है कि, वह मुझे तुझ से ज़रूर बचावेगा ।

ऊँटवाला—नाहक़ क्यों बड़बड़ाती है, अभी थोड़ीही देरमें तो सब फ़ैसला हुआ जाता है ।

ऊँटवाले की बात सुनकर प्यारी घबराई नहीं । उसने धीरज धारण करके परमात्मा से प्रार्थना करनी शुरू की ।

इस वक्त दिनके ११ बजे हैं । दिवाकर की प्रचण्ड किरणें मरुभूमिको उत्तप्त कर रही हैं । हवा आगके समान गर्म होकर चल रही है । बदन जला जाता है । ज़मीन पर पैर टेके नहीं जाते । वायुमण्डलमें नाना प्रकार के खेल नज़र आते हैं । ऊँट ऊँटवालेके घरकी ओर चला जा रहा है ।

प्यारीको कोई एक मीलकी दूरीपर एक हरा भरा बाग़सा दीखा। लेकिन जब वह नज़दीक पहुँची तो कुछ भी नज़र न आया। इस मरुस्थली में प्रायः ऐसेही दृश्य नज़र आ आकर बेचारे पथिकों को भटकाया करते हैं। पथिक जब पास पहुँचता है, तो वहाँ कुछ भी न देखकर विस्मय में डूब जाता है। फिर आगे की ओर नज़र फेंकता है, तो फिर मृगमरीचिका की तरह हराभरा बाग़सा दिखाई देता है। कभी खजूरके वृक्ष, निर्मल शीतल जलके सोते, कुण्ड, तालाब प्रभृति इस प्रकार दीखते हैं, मानो वे मानव-कल्पना-मात्र न होकर सचमुच ही हों। किन्तु नज़दीक पहुँचने पर जब वे ग़ायब होजाते हैं, तब पथिकके दिलपर भारी चोट लगती है। इन मृगमरीचिकाओं—इन जञ्जालों—में फँस पथिक अपना सीधा रास्ता छोड़कर भटकने लगता है और भूख-प्यास से तङ्ग होकर अपना नाश कर बैठता है।

जिसतरह धर्मशास्त्र उपदेश देते हैं कि "कि कहो थोड़ा, पर करो बहुत" उसी तरह उसके विपरीत मरुस्थलकी मृग-मरीचिका उपदेश देती है कि "कहो बहुत, करो कुछ भी नहीं।" इन दोनों उपदेशों में से कौनसा ग्रहण करने योग्य है और कौनसा त्यागने योग्य? पाठक इस सीधीसी बातको स्वयं विचार सकते हैं, हमारे बतानेकी ज़रूरत नहीं। इससे ठीक नसीहत यह मिलती है कि, जो लोग भ्रमके वश असत

को सत समझते हैं, विष-समान विषयों में फँसते हैं, झूठे संसार में लगे रहकर इस जन्मको वृथा खोते हैं, वे मरुभूमि के पथिकों की तरह नाश हो जाते हैं। अतः बुद्धिमानोंको सत और असत—असल और नक़ल—की पहिचान रखनी चाहिए। इस जगत्को झूठा प्रपञ्च समझ कर, इसकी माया-मरीचिका से बचकर परमब्रह्ममें ध्यान लगाना चाहिये। हम क्या कह रहे थे और क्या कहने लगे, अत: हम पाठकों से क्षमा माँगकर फिर प्यारीजानकी ओर बढ़ते हैं।

इस समय भुवन भास्कर भगवान् अपने पूर्ण तेजसे मध्याकाशमें पहुँच गये हैं। उनकी तीव्र किरणें महाज्वाला उगल रही हैं। धरती और आकाश एकदम सन्तप्त होरहे हैं। मशकमें भरा हुआ पानी सूखा जा रहा है। असह्य गरमी के मरे जीवजन्तु और प्राणीमात्र विकल होरहे हैं। उधर मृगमरीचिका पथिकों को भ्रमजालमें फँसा भटका रही है। ऐसे समय में प्यारीजान सब दुख-कष्ट भूलकर एकाग्रचित्तसे परमात्मा से अपनी प्रार्थना कर रही है। ठीक ऐसेही समय में दक्खन दिशा की ओर आकाश में एक वृहत् मेघखण्ड दिखाई देने लगा और शनैः शनैः बढ़कर प्यारीकी ओर आने लगा। परन्तु प्यारीको इसकी कुछ भी ख़बर नहीं, वह तो अपने ध्यान में मग्न है। ऊँटवालेको भी आनेवाले तूफान की ख़बर नहीं। देखिये, लीलामय की लीलाका तमाशा! चन्द मिनिटों में ही वह तूफान प्यारी जानके

ऊँटके पास आ पहुँचा। वह तूफान ऐसा प्रबल था कि, उसमें प्यारीजान, उसका ऊँट और ऊँटवाला—तीनोंही ज़मीन से कोई बीस फीटकी ऊँचाईपर उड़ने लगे।

थोड़ी देर में तूफान शान्त होगया; प्यारीजान और उसका ऊँट फिर ज़मीनपर आगये, मगर ऊँटवालेका पता-निशान भी न था। भगवान् जाने वह कहाँ गायब होगया। ईश्वर ही जाने वह कहाँ उड़ गया और गिरकर मरगया अथवा बालूके टीलोंमें दबकर सदाके लिए सोगया। कुछ भी हुआ हो, हमारी समझ में तो उसके पापका उसे यथोचित दण्ड मिल गया। उसने प्यारीसे जैसी अहङ्कारपूर्ण बातें कही थीं, उनका प्रतिफल उसे मिलगया। वह प्यारीजानका फैसला करता था, मगर खुद उसका फैसला होगया।

पाठक! इस मौक़ेपर ईश्वरकी महिमा देखिये। प्यारी को उस उजाड़ जङ्गलमें उस दुष्ट अरब से बचानेवाला कौन था? प्यारीजानने जब देखा कि यहाँ सिवा परमात्माके और कोई नहीं है, उसने सच्चे मन से एकमात्र परमात्मासे विनय की और परमात्माने अपने भक्तकी किस तरह रक्षा की, यह तो आप लोगोंने देखही लिया है। भगवान् ने अनेक बार कहा है—"जो प्राणी सबका आशा-भरोसा छोड़कर, एकमात्र मेरी शरणमें आजाते हैं, एकमात्र मेरा ही भरोसा करते हैं, उनको मैं प्रत्येक आपद् मुसीबत से बचाता हूँ, उनका बाल भी बाँका नहीं होने देता।" सच है, लाखों बैरी भी यदि किसी

को कष्ट पहुँचाना चाहें, किन्तु यदि परमात्मा उसके साथ हो, उसके अनुकूल हो, तो वे कुछ भी नहीं कर सकते।

एक बार एक शिकारी अपने कुत्ते लेकर वनमें शिकारको गया। उसने दो ओर जाल लगा दिया। सामनेकी ओर वनमें भयङ्कर आग लगा दी। चौथी ओर आप तीर-कमान लेकर खड़ा होगया। बीचमें एक हिरनी और उसका बच्चा आ गये। हिरनी बहुत ही दुखित और निराश होगई, उसे भागनेको कहीं राह न मिली। अगर दाहिने बायें भागती है तो जालमें फँसती है, सामने जाती है तो भयङ्कर अग्नि दिखाई देती है, पीछेको घूमती है तो शिकारी और कुत्तों को तय्यार पाती है। ऐसे मौक़ेपर उसे उन्हीं दीनबन्धुकी याद आई, उसने आर्त्त स्वरसे प्रार्थना करनी आरम्भ की, भगवान् का आसन हिला। आकाशमें बादलोंका नाम भी न था, परन्तु एकदम से बिजली कड़की और कुत्तोंपर गिरी, कुत्तों की सफाई होगई। अब रह गया, शिकारी। उसे भी एक काले सर्प ने वहीं से निकलकर डस लिया। वह वहीं गिर कर मरगया। हिरनी की राह साफ होगई और वह अपने बच्चे समेत बचकर साफ निकल गई। इसी तरह प्यारीजान की भी रक्षा हुई। ईश्वरकी महिमा के ऐसे हज़ारों-लाखों दृष्टान्त मौजूद हैं। इसमें कोई शक नहीं कि, जो प्राणी एकमात्र परमपिता की शरणमें चला जाता है, उसको कभी दुःख-कष्ट नहीं होता।

प्यारीजान ने जब देखा कि मैं सकुशल ऊँटपर चल रही हूँ, ऊँटवालेका पता भी नहीं है, उसे ईश्वरकी यह लीला देख परम सन्तोष हुआ। वह ऊँटसे उतरकर फिर परमात्मा का ध्यान करने और उस दीनबन्धुको हार्दिक धन्यवाद देने लगी। ज्योंही वह उठी और फिर ऊँटपर सवार हुई, तो क्या देखती है कि सामनेही एक सरसब्ज़ हराभरा स्थान नज़र आ रहा है। वह वहीं पहुंची। वह स्थान सचमुच ही बड़ा रमणीक था। वहाँ खजूरके विशाल वृक्षोंकी कुञ्जें थीं। उनके नीचे थके-माँदे गरमीके सताये हुए मुसाफिर शान्ति लाभ कर सकते थे। हाथ मुँह धोने और पीनेके लिए सुन्दर सुन्दर हौज़ निर्मल जल से लबालब भरे हुए थे, वहाँ पहुँचते ही प्यारी के मनकी कली-कली खिल उठी।

प्यारीने ऊँटसे उतर कर ऊँटको पानी पिलाया और उसे चरनेको छोड़ दिया। स्वयं एक निर्मल हौज़ पर जाकर हाथ मुँह धोने और जल पीने लगी। इसके बाद उसने दोपहर की नमाज़ की तैयारी की। वह नमाज़ पर बैठना ही चाहती थी कि, उसके कानमें "अल्लाहो अकबर" की आवाज़ सुनाई दी। उस समय उसे ऐसा मालूम हुआ, मानों कोई देवदूत उसकी प्रार्थना में शामिल होनेके लिये आना चाहता है। उसने जिधरसे आवाज़ आई थी उधर देखा तो क्या देखती है कि ईश्वर का नाम उच्चारण करनेवाला कोई देवीदूत नहीं,—एक तोता है। वह तोता कोई साधा-

रण तोता नहीं था। उसे सारी नमाज़ कण्ठ थी। वह मुल्ला की तरह ठीक क़ायदे के मुआफ़िक़ नमाज़ पढ़ता था। प्यारी भी उसके साथ-साथ नमाज़ पढ़ने लगी।

नमाज़ ख़तम होते ही तोता उड़कर एक ओर जाने लगा। प्यारी भी उसी के पीछे हो ली। तोता एक सघन कुञ्ज के द्वारपर जाकर ठहर गया। प्यारी भी वहीं रुक गयी। ज्योंही उसने नज़र उठाकर ऊपर देखा तो क्या देखती है कि,सामने ही एक महापुरुष बैठे हैं। उनकी सफ़ेद दाढ़ी ज़मीन तक लटक रही है। आँखों की पलकें उनके गालों तक पड़ी हुई हैं। सिर की जटाएँ खूब लम्बी-लम्बी हैं, जो उनके सारे शरीर को ढँके हुए हैं। उनको देखते ही प्यारी एकबार तो डर गई,फिर धैर्य्य धर कर उनके क़दमोंमें जा गिरी और उनको प्रणाम करने लगी। चन्द मिनिट में महापुरुषकी समाधि भङ्ग हुई। उन्होंने हाथों से आँखों की पलकें उठाकर प्यारी की ओर देखा और उसे आशीर्वाद देकर एक आसनपर बैठने का आदेश दिया। प्यारी थोड़ी दूर पर एक आसन पर बैठ गई।
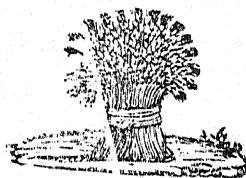
सत्ताईसवाँ परिच्छेद।

पहुँचा हुआ फ़क़ीर।

पूर्वोक्त तोता उस फ़क़ीर का ही था। फ़क़ीर और तोता दोनोंही परमात्माके पूर्ण भक्त थे। फ़क़ीर के भेष-लिबास के विषयमें कुछ भी कहना व्यर्थ है। फ़क़ीर साहब पहुँचे हुए फ़क़ीर थे।

प्यारीके आसन ग्रहण करके बैठनेके बाद, फ़क़ीरने तोते को अपने पास बुलाकर कुछ फलफूल खिलाये। तोता क्षुधा शान्त होने पर फिर एकबार "अल्लाहो अकबर" कहकर उड़ गया और सामनेके एक वृक्ष पर जा बैठा। पाँच मिनट तक बिल्कुल शान्ति रही। इसके बाद शान्तिको भङ्ग करके प्यारीने महापुरुषसे हाथ जोड़कर कहा—

प्यारीजान—हज़रत! आज मुझे खुदाकी मिहरबानीसे आपके दीदार नसीब हुए, इससे मेरी खुशी की हद नहीं है। मालूम होता है, आज़ आपके क़दमों में आनेसे मैं बिल्कुल ही पाक-साफ होगई।

फ़कीर—तुम जो कुछ कह रही हो वह नेक-नियतीसे कह रही हो, इसका मुझे पूरा यक़ीन है। खुदा तुमपर मिहरबान है, बुरे कामों से तोबा करनेके सबब वह तुमसे खूबही खुश है। उसने तुम्हें वह ताक़त अता फ़रमायी है, जो हर किसीको हासिल नहीं होती। इसके अलावा, तुम्हें और भी न्यामतें हासिल होंगी। तुम यहाँ राह भूलकर या भटक कर नहीं आई हो, उसीकी मरज़ी से तुम यहाँ तक आई हो।

प्यारी—मेरे पाक वालिद! मुझे अब और किसी न्यामत की ज़रूरत नहीं। मुझे आपकी क़दमबोसी हासिल हुई. यही मेरे लिये काफी है। अब मुझे दुनियाके मालोज़र और ऐश-आरामकी तमन्ना नहीं। अब मेरी ख्वाहिश है कि, मेरा दिल सदा उस पाक पर्वरदिगार के क़दमों में लगा रहे।

फ़क़ीर—ज़ियादा कहनेकी ज़रूरत नहीं। मुझे सब मालूम है। मैं तुम्हारा पुराना क़िस्सा अच्छी तरह जानता हूँ। खुदा की मरज़ी पर सबको चलना चाहिये। उसकी बातोंमें दस्तन्दाज़ी करना या उसकी मरज़ी के खिलाफ काम करना अच्छा नहीं। उसीमें राज़ी रहो, जो उसकी रज़ा हो।

प्यारी—मैं उसकी मरज़ीके खिलाफ कैसे चल सकती हूँ ? मेरी मुतलक़ ख्वाहिश नहीं कि उसके खिलाफ चलूँ। वह मेरे लिए जो कुछ करेगा, मैं खुशीसे उसे मंज़ूर करूँगी। मगर मेरी दिली मन्शा तो यही है कि, मैं यहीं आपकी खिदमतमें रहूँ और ज़िन्दगीके बाक़ी दिन इबादते इलाहीमें सर्फ करूँ।

फ़क़ीर—मैं तेरी इस ख़्वाहिश को बड़ी ख़ुशीसे क़बूल कर लेता, अगर ख़ुदा की मरज़ी तुझे सुल्ताना बनानेकी न होती। अब तो तुझे अपनी तकलीफ़ों की एवज़ यह आराम भोगना ही होगा।

महापुरुषकी उपरोक्त बात सुनतेही प्यारी एकबार तो विस्मयमें डूब कर सुन्न होगई। ज़बान से बात न निकली। चन्द मिनिटमें होशहवास दुरुस्त होनेपर बोली—

"हज़रत! आप किसी और का ज़िक्र तो नहीं कर रहे हैं? भला, मुझ जैसी बदसूरत को 'सुल्ताना' बनाना कौन मंज़ूर करेगा? अब मुझे ऐसी ख़्वाहिशों की ज़रूरत नहीं। मैं तो अपनी ज़िन्दगीके बाक़ी दिन ख़ुदाकी बन्दगीमें ही बिताना चाहती हूँ।

फ़क़ीर—मैं ख़ुद ही जानता हूँ कि, तुझे मेरी बातों पर यक़ीन न आवेगा। तू अपने मनमें समझती है कि अगर ख़ुदाको मुझे सुल्ताना बनाना ही मंज़ूर था, तो उसने मुझे ऐसी बद-सूरत और बेढङ्गी क्यों कर दी? पर तुझें मालूम नहीं कि, ख़ुदा की हरकतें हमलोगों की हरकतों से कहीं पाक-साफ़ और मतलब भरी हैं। वह जो कुछ करता है इन्सानकी भलाईकी ग़रज़ से करता है, मगर इन्सान इस बातको समझ नहीं सकता। उसने तुझें बदसूरत इसलिए कर दिया था कि, तेरे दिलसे बुरे ख़यालात निकल जावें, बुरे कामोंसे तुझे नफ़रत हो जावे, तेरा दिल पाक और साफ़ हो जावे। चूँकि

अब तेरा दिल बिल्कुल पाकीज़ा होगया है, इसलिए ख़ुदावन्द करीम अब तुझे पहले से भी ज़ियादा ख़ूबसूरती बख़्शेंगे।

फ़क़ीरकी बात सुनतेही प्यारी एकदम से आश्चर्यमें डूबकर यकायक कह उठी—"ख़ुदावन्द! मैं इस मिहरबानी के लायक़ नहीं।" यह कहती-कहती वह फ़क़ीर के क़दमों को आँसुओंसे तर करती हुई उनमें जापड़ी। फ़क़ीरने उसे उठाकर उसके सिरको चूमा। सिरके चूमते ही उसके सिरमें जो गिरने का निशान था वह लोप होगया। इसके बाद फ़क़ीरने कुछ जड़ी-बूटी पीस कर उसके चेहरे के दाग़ों पर लगादी। उसके प्रभावसे उसका चेहरा पहले जैसा साफ़-सुथरा होगया। फिर महात्माने एक गिलास जल हौज़से भरकर उसपर एक मन्त्र पढ़ा और उसे प्यारी से आँखोंमें लगानेको कहा। जलके लगाते ही उसकी आँखें ज्यों की त्यों पहलेसे भी अच्छी होगईं। इसके बाद उन्होंने एक गिलास जल देकर उससे मुँह धोनेको कहा। मुँहके धोते ही उसकी मुखकान्ति पहले से भी चौगुनी सुन्दर होगई। अन्तमें उससे उस हौज़में स्नान करने को कहा गया। हौज़में ग़ोता लगाते ही उसकी शारीरिक शक्ति भी पहलेसे डबल होगई।

कायापलट होनेपर प्यारी स्वर्गीय अप्सरा या मुसल्मानों के बहिश्तकी हूर होगई। इस समय उसका रूप-लावण्य स्वर्गीय देवियों का सा होगया था। अतः उसे बनावटी हावभावोंकी

ज़रा भी ज़रूरत न थी। सौन्दर्य्य की प्राप्तिके अतिरिक्त उसका चित्त भी निर्मल होगया था। मलिनभावोंका नाम-निशान भी न था।

ऐसी रूपवती होकर वह फ़क़ीर साहबके सामने हाथ जोड़कर खड़ी होगई। इस समय उसके अङ्ग-प्रत्यङ्गसे फ़क़ीर साहब के प्रति श्रद्धा और भक्ति टपकी पड़ती थी। प्यारी को देखते ही फ़क़ीर ने उससे बड़े स्नेह के साथ कहा—"अभी तुम थकी हुई हो, इसलिये दो एक दिन यहीं आराम करो। इसके बाद सफ़र करने क़ाबिल होजाओ, तब यहाँसे चली जाना। मेरी मन्शा है कि, तुम अपने नये जिस्मके साथ अपना नाम भी बदल दो।

प्यारी—आप मेरे मालिक हैं, आपको मुझपर सोलह आने अख़्त्यार है, आप जो नाम रखना चाहें रक्खें, बन्दीको आपका रक्खा हुआ नाम ख़ुशीसे मंज़ूर होगा।

फ़क़ीर—अच्छा, आज से तुम्हारा नाम "जहानआरा" हुआ।

प्यारी—बहुत ख़ूब! ख़ुशी से मंज़ूर है।

फ़क़ीर—तुम यहाँ आई थीं तब प्यारी जान थीं, पर आजसे तुम जहानआरा कहलाओगी। ख़ुदाकी मिह-रबानी से तुम्हारे इस नामके मुताबिक़ रुतबा भी तुम्हें जल्दी ही हासिल होगा।

प्यारी—मुझे अब किसी रुतबे की ज़रूरत नहीं, मगर

जब कि ख़ुदा की ऐसी ही मरज़ी है तो मुझे इँकार भी नहीं। हम तो राज़ी हैं उसीमें जो उसकी रज़ा है। वह चाहे जैसे रक्खे, मैं तो अब सदा नेकनियती और पाकदामनी से अपनी ज़िन्दगी ख़ुदा की बताई हुई राह पर बसर करूँगी।

फ़क़ीर—आमीन, आमीन! ऐसा ही हो। मुझे तेरी ओरसे पूरा भरोसा है।

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद ।

शान्तिसदनमें निवास ।

शान्ति सदनमें जहानआराको आज पाँच दिन होगये । वह सानन्द ईश्वर-आराधनामें अपना समय व्यतीत कर रही है । वहाँ उसके चित्तकी धार्मिक वृत्तियों को पलटनेका कोई साधन नहीं है । वह सुख-सन्तोषसे महात्मा के साथ रहती है । महात्मा उसे निज पुत्रीके समान मानते हैं ।

जहानआराके पहुँचनेके चौथे दिन उस फ़क़ीर ने उसे अपनी जीवनी इस भाँति सुनाई :—

फ़क़ीर—तुम जानती हो कि मैं कौन हूँ और पहले कौन था ?

जहानआरा—मैं तो आपको ख़ुदावन्द करीम का सच्चा मुरीद समझती हूँ । आपके एक-एक अङ्गसे उसकी शान टपक रही है ।

फ़क़ीर—मेरा यह मतलब नहीं, मैं यह जानना चाहता

हूँ कि, तुम यह जानती हो या नहीं कि, फ़क़ीर होनेके पहले मैं कौन था ?

जहानआरा—मुझे ये बात कैसे मालूम हो सकती है ? हाँ, अगर आप बराहे मिहरबानी अपना पुराना क़िस्सा इस लौंडी को सुनावें, तो उससे मुझे बहुत कुछ नसीहत मिलेगी और बड़ी ख़ुशी होगी।

फ़क़ीर—आज तक मैंने अपना हाल किसीसे भी नहीं कहा। मगर तुझे पाक-साफ समझकर अपना क़िस्सा कहता हूँ। उम्मीद है कि, तू उसे बड़े ग़ौर और दिलचस्पीसे सुनेगी। यह कहकर फ़क़ीर अपनी रामकहानी कहने लगा :—

"मेरा नाम मिर्ज़ा मुराद है। मैं उस शाहनशाह तैमूर के ख़ान्दानमें से हूँ, जिसने हिन्दुस्तानमें कई सौ बरस तक बड़ी शान शौकतके साथ बादशाहत की। मैं देहलीके बादशाहोंमेंसे आख़िरी बादशाहका फ़र्ज़न्द हूँ। मैं आगरेके लाल क़िलेमें पैदा हुआ था। जिस दिनमें इस दुनियामें आया, उस दिन मेरे आनेकी ख़ुशी में हज़ारों तोपों की सलामी हुई। दस दिन तक सारे राज्यमें नाचरङ्ग और जलसे होते रहे। दरबारी नुजूमीने मेरी जन्मपत्री बनाकर कुछ ऐसी बातें कहीं, जो आख़िरमें बावन तोले पाव रत्ती ठीक गुज़रीं ! उनके कहनेकी कोई ज़रूरत नहीं।

"मेरे पैदा होनेके दो साल बाद मेरे एक बहिन हुई। उसके पैदा होनेसे मेरी माँ को ऐसी बीमारी खड़ी होगई,

कि वह जल्द ही इस दुनियासे कूच कर गई। माँ के इन्तकाल कर जानेके बाद मेरी बहिन भी चलती हुई। मैं बच्चा था, इसलिये इन सब बातोंका मुझपर ज़ियादा असर न हुआ। मैं अपने खेलकूदमें मस्त रहा। मगर मेरे वालिद साहबको मेरी माँ के मरनेसे सख़ अफसोस हुआ। उस रञ्जसे पीछा छुड़ानेके लिये उन्होंने शराबको मुँह लगा लिया और साथ ही दूसरी क़िस्म की बुरी सुहबत में पड़ गये। मगर उन्होंने उस हालतमें भी मेरा ख़याल अच्छी तरह रक्खा। मेरे तालीम देनेके लिये एक मौलवी रक्खा गया। मौलवी बहुत ही पाक-साफ और अच्छा आदमी था। उसके साथही एक अङ्गरेज़ भी रक्खा गया, जो अरबी, फारसी और संस्कृत का ऊँचे दर्जे का विद्वान् था। दोनों उस्ताद अपना-अपना फ़र्ज़ बड़ीही ईमान्दारीसे अदा करते थे। इस तरह उन दोनोंने मुझे २१ सालकी उम्र तक पढ़ाया। इसके बाद जब मेरा पचीसवाँ साल चल रहा था, मेरठ में गदर हुआ। वहाँसे कुछ सिपाही भागकर मेरे बूढ़े वालिद के पास आये और पनाह माँगने लगे। मैंने वालिद को हरचन्द मना किया, पर उन्होंने मेरी एक न सुनी और उनकी मदद करने पर राज़ी होगये। उन दिनों हमलोग अँगरेज़ोंकी मातहतीमें सल्तनत का कारोबार चलाते थे। मेरे बूढ़े वालिदने उन्होंके ख़िलाफ जो नादानी की, उसकी सज़ा हमें ठीक तौरसे मिल गई। नतीजा यह हुआ

कि, हमारी सल्तनत हमारे हाथसे मरहटोंके हाथोंमें और मरहटोंके हाथोंसे अङ्गरेज़ोंके हाथों में चली गई। ऐसा होना वाजिब ही था। जबतक हमारे खान्दानने इन्साफ पर नज़र रक्खी, हिन्दू मुसल्मानमें भेदभाव न रक्खा, रिआयाकी बेहतरीका ख़याल रक्खा, तबतक हमारी सल्तनत बढ़ती ही रही। हमारी सल्तनत हमारे पड़दादा अकबरके ज़मानेमें ख़ूब बढ़ी, क्योंकि उनकी पालिसी बड़े ऊँचे दर्जे की थी। वह हिन्दू-मुसल्मान सबको एक नज़र से देखते थे। उनके बाद जहाँगीर और शाहजहाँ तक भी ख़ैरियत रही। हालाँ कि वह बात तो न रही, पर कुछ बढ़ा नहीं तो घटा भी नहीं। मगर हमारे दादा आलमगीरके ज़मानेमें हमारी सल्तनत की नींव ढीली पड़ी और ज़वाल शुरू हुआ, क्योंकि उन्होंने तो ज़ुल्मोंकी हद ही करदी। ख़ैर, बहुत कहनेसे क्या, ज्यों-ज्यों हमारे खान्दानसे नेकनियती और इन्साफने किनारा किया, त्यों-त्यों हमारी सल्तनत की बर्बादी होने लगी। खुदा को जो मंज़ूर होता है वही होता है। उसके क़ायदे बड़े ज़बर्दस्त और सबके लिये यकसाँ हैं। वे किसी ख़ास आदमी के लिए घटाये बढ़ाये नहीं जा सकते। उसके क़ायदोंमें किसीके लिये रू-रियायत भी नहीं। होनहार सिर पर सवार थी, मेरे बूढ़े बापने मेरा कहना न मानकर मेरठके बाग़ी सिपाहियोंको अपने क़िलेमें पनाह दे दी। मैं तो उसी वक्त समझ गया कि, अब हमारी

सलतनतका अखीर आ पहुँचा। अब इसकी हालत बुझते हुए चिराग़की सी है। उसीकी तरह इसका भी ख़ात्मा होने में देर नहीं। उस वक्त शैतान मेरे वालिदके सिरपर सवार था, वही उन्हें उलटा सबक़ पढ़ा रहा था।

"मैंने उस वक्त यही मुनासिब समझा कि, मैं यहाँ से चल दूँ। अपने इरादे के मुताबिक़, मैं अपने साथ बहुतसा ज़र-जवाहिरात लेकर, फ़क़ीराना भेष बनाकर, १२ मई सन् १८५७ ई० को वहाँ से चल दिया। सूरत पहुँचने पर मैंने जो अहवाल सुना, वह ठीक मेरे ख़्यालके मुआफिक़ था। मैंने सुना कि, मेरे वालिद गिरफ़्तार कर लिये गये हैं और शाही झण्डा गिरा दिया गया है। हमारे ख़ान्दान के कितनेही लोग गिरफ़्तार कर लिये गये और कितने ही क़त्ल भी कर दिये गये हैं।

"लड़कपन में बहुतही लाड़-प्यार में पलने के सबब मैं कमज़ोर रहगया। ऐश-आराम में रहने के बाइस मुझे ऐश-आराम ही अच्छा लगने लगा। बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ झेल कर मैं देहली से सूरत पहुँचा। हिन्दुस्तान में रहकर क्या करूँगा, यह सोच मैंने मक्का जानेका विचार कर लिया। बम्बई पहुँचा। बम्बई से एक जहाज़ अदन जानेवाला था, मैं उसीपर सवार हो लिया। चन्द रोज़ में अदन पहुँचा। अदन से ऊँटपर चढ़कर मक्का पहुँचा। वहाँ मैंने सिर्फ़ इबादते ख़ुदा से मतलब रक्खा। रात-दिन मैं ख़ुदाकी याद

में सफर करने लगा। नतीजा यह हुआ कि, उसने मेरे दिल में एक ऐसी अजीब ताक़त बख़्शी, जो हिन्द की सल्तनत और मालोज़रसे कहीं बढ़कर है। कुछ रोज़ बाद उस पाक परवरदिगार ने मुझे एक ज़ईफ फ़क़ीर से मिला दिया, जो इसी मुक़ाम पर रहता था। अब वह बहिश्तमें है। असल में यह तोता, जो मेरे पास है, उन्हीं शाह साहबका है। उन शाह साहब के बहिश्त तशरीफ ले जानेके बाद से, मैं यहीं हूँ। मुझे यहाँ जो खुशी और आराम है, उस के सामने सारी दुनियाकी सल्तनत भी हेच है। अब मुझे दुनियवी ऐश-आराम की तमन्ना मुतलक़ नहीं। मुझे खुदावन्द करीम की इबादत ही पसन्द है। उसी की बदौलत बहिश्त मेरी नज़रों में है, मैं उसके दरवाज़े पर खड़ा-खड़ा वहाँ के सब तिलिस्मात अपनी इन आँखों से देख रहा हूँ। थोड़े दिन बाद मेरी भी वहाँ ज़रूरत होगी।"

जहानआरा—हज़रत! क्या मैं बहिश्त नहीं देख सकती?

फ़क़ीर—इन दुनियवी आँखों से अगर बहिश्त देखना चाहती हो, तो तुम्हें अभी कितने ही बरस यादे इलाही में मशग़ूल रहना पड़ेगा, उस के बाद मैं तुमको बहिश्त दिखा सकूँगा। अगर तुम रूहानी तरीक़े से देखना चाहो, तो अभी दिखला सकता हूँ। ज़रा इस घासपर लेट जाओ।

जहानआरा फ़क़ीर साहबकी आज्ञानुसार घासपर लेट

गई, वह उसपर अपनी योग-क्रिया करने लगे। कुछ ही देर बाद वह नींद में ग़र्क़ होगई। उसको उस अवस्था में फ़क़ीर साहब ने उसे हुक्म दिया कि, छठवें स्वर्गमें जाकर देखो कि क्या हो रहा है। जहानआराने वहाँ जाकर जो देखा, उसका वर्णन इस प्रकार है:—

वह स्थान बहुतही रमणीक और अपूर्व्व शोभा-सम्पन्न है। जहाँ नज़र डालो वहाँ गुलाब ही गुलाब खिलरहे हैं। उनकी सुगन्ध से तमाम वायुमण्डल सुगन्धिपूर्ण हो रहा है। भौंरों के झुण्डके झुण्ड काँटोंका ख़याल न करके गुलाबोंमें अपने प्राण दे रहे हैं। भौंरोंके मधुर गुञ्जार से बड़ा आनन्द आ रहा है। वहाँके प्राणी इच्छा करते ही जहाँ चाहते हैं वहीं उड़ जाते हैं। उनके पैर हैं, मगर वे पैरों से काम न लेकर उड़ते फिरते हैं। उन लोगोंकी ख़ूबसूरती को तो कोई हद ही नहीं। चारों दिशाओंमें चार चन्द्रमा शोभायमान होकर अपना शीतल और मधुर प्रकाश विस्तार कर रहे हैं। वहाँ के निवासियोंको किसी वस्तु के लिये तकलीफ उठाने को ज़रूरत नहीं। इच्छा करते ही इच्छित वस्तु उनके समीप आप से आप जाती है। वहाँके निवासी संख्यामें बहुत थोड़े हैं। वे लोग दर्शनशास्त्र और आत्मा के उत्थान-पुनरुत्थानके नियमोंका अध्ययन करते हैं।

फ़क़ीर साहब ने जहानआरा को जाग्रत अवस्थामें लाना चाहा, इसवास्ते उन्होंने उसे होश में आने का हुक्म दिया, मगर

उसने होश में आनेसे इँकार कर दिया। जहानआरा को फ़क़ीर की आज्ञा उल्लङ्घन करने का यह पहला ही अवसर था। जहानआराका मन स्वर्गीय शोभा देखते-देखते न भरता था, इसी से उसने फ़क़ीर की आज्ञा नहीं मानी। उन्होंने उसे उसके अपराधका यथोचित दण्ड दे दिया। अपने मन्त्रबल से पानी छिड़ककर उसकी शक्तियोंको हीन कर दिया, अब उसे स्वर्ग में अन्धकार के सिवा कुछ भी न दिखाई देता था। जब यह दशा होगई, तब वह घबराकर वापिस आने पर राज़ी होगई। फ़क़ीर साहबने उसके होशमें आने के पहलेही उसे हुकम देदिया कि, तुझे इतना ही याद रहे कि मैंने स्वर्ग की आभा देखी है। जब वह जागी और उसे स्वर्ग देखने की बात याद आई, तो उसने समझ लिया कि मिर्ज़ा साहब पहुँचे हुए फ़क़ीर या सिद्ध पुरुष हैं। उसने उनसे चेली बना लेनेके लिए बहुत कुछ अनुनय-विनय की, किन्तु मिर्ज़ा साहबने यह कहा कि तेरे भाग्यमें अभी और कुछ लिखा है, जबतक तू उसे न भोग ले, मैं तुझे अपनी चेली नहीं बना सकता। जहानआरा ने अन्त में उन्हीं की बात पर विश्वास कर लिया।

जहानआरा के विदा होने का समय आया। मिर्ज़ा साहब और जहानआरा को एक दूसरे से अलग होते वक्त बड़ा दुःख हुआ। दोनोंकी वही दशा हुई, जो शादीके बाद पुत्रीको विदा करते समय पिता और पुत्री की होती है।

उन्होंने जहानआरासे चलते समय कहा—"मेरी प्यारी बेटी! तू जहाँ से आई है, वहीं जा। तेरी इस जन्मकी भलाइयों का फल भोगने का समय नज़दीक आगया है। अपने चित्त को सदा अच्छी राहपर रखना, कुराह पर मत भटकने देना। सदा सज्जनों से मुहब्बत करना, दुर्जनों से दूर भागना, संसारी माया-जाल में फँसकर स्वर्गको न खो बैठना। उस परम ब्रह्म परमात्मा की विशाल शक्तिका हर स्थान और हर मौक़ेपर ध्यान रखना। इस बातको कभी न भूलना कि, परमात्मा तुम्हें चाहे जिस विपद् से एक पल में मुक्त कर सकता है, और जो चाहो वह दे सकता है। कठिन से कठिन समय में भी अपने चित्त के विचलित विचारों को सुबुद्धि के बलसे अपने वश में रखना। ईश्वर हर जगह मौजूद है। उसकी दया से तुम्हारे सभी मनोरथ सिद्ध होंगे। अतः तुम सदा उसीकी स्तुति करती रहना।"

इस तरह उपदेश देकर मिर्ज़ा साहब फिर कहने लगे—"अगर तू मेरी नसीहतों पर अमल करेगी, तो मुझे उम्मीद है कि हम तुम एक दिन बहिश्त में ज़रूर मिलेंगे। अगर मेरी नसीहतोंको भूल जायगी, उनपर अमल न करेगी, तो नतीजा ख़राब होगा।" इसके बाद उन्होंने उसे दो बोतलें दीं और कहा—"तेरी ख़ूबसूरती की वजह से तुझपर फिर कोई आफ़त न आवे, इसीलिए तुझे ये दो बोतल दी हैं। एक बोतल काली है और दूसरी सफेद है। जब तू काली बोतल

के जल से अपना मुँह धोलेगी, तब तू तवे के पेंदेसे भी काली और एकदम बदसूरत हो जायगी; और जब तू सफ़ेद बोतल के पानी से मुँह धोवेगी, तब फिर पहले के जैसीही खूबसूरत हो जायगी। इन बोतलों से तेरा बड़ा काम निकलेगा, इनको तू अच्छी तरह छिपाकर अपने पास रखले और ये पत्तियाँ जो मैं तुझे दे रहा हूँ, कुछ तू चबा ले और कुछ अपने ऊँट को खिला दे। इन पत्तियोंके असर से तुझे और तेरे ऊँटको २० दिन तक भूख-प्यास बिल्कुल न सतावेगी।"

चलते समय उन्होंने उसे एक कम्पास दी और कहा —"बेटी! मुझे उम्मीद है कि यह ऊँट तुझे अमन-चैन से अदन पहुँचा देगा। जो कुछ तेरे मुक़द्दरमें है उसे खुशी से क़ुबूल करना, इसी में तेरी भलाई है। मेरी बताई हुई राह पर चलने से तुझे कामयाबी हासिल होजाय, तो समझ लेना कि तुझे बहिश्त भी मिलेगा। मैं दुआ देता हूँ। अब तू अपनी सफ़र अख़्त्यार कर। खुदा खैर करे!"

उन्तीसवाँ परिच्छेद

मरुभूमिकी यात्रा और उसका परिणाम

जहानआराको सफ़र करते हुए आज दस दिन बीत गये हैं। उसका चहरा कोयले की तरह काला हो रहा है। पर इसमें सूर्य्य की तपिशका अपराध नहीं है, यह काली बोतलके जल की करामात है।

प्रात:कालकी नमाज़के लिए वह ऊँट से उतर कर एक स्थानपर ठहरी। नमाज़ वगैर: से निश्चिन्त होकर, वह फिर ऊँटपर सवार हो आगे को चली। वहाँ से अधिक दूर न गई थी कि, उसने अपने पीछे तीन घुड़सवारों को आते हुए देखा। ज्योंही वे सवार उसके नज़दीक आये, त्योंही चिल्लाकर कहने लगे—"ठहरो! ठहरो! आगे मत बढ़ो!" इन लोगों की विचित्र पोशाक और पहनावे को देखते ही ऊँट चौंककर ज़ोरसे भागने लगा। ऊँट की सवारी की जहानआरा को आदत तो थी नहीं; इसलिए वह कभी काठी के इस ओर, कभी उस ओर हो जाती थी। परिणाम यह हुआ कि, वह

भट से रेतपर गिर पड़ी। ऊँट भागा। सवारों में से एकने जहानआराको उठा लिया। जहानआरा के चोट तो नहीं लगी, मगर एक धक्कासा बैठा। दूसरा घुड़सवार घोड़ा दौड़ाकर ऊँटको पकड़ लाया।

जहानआरा पर इस तरह हमला करनेवाले सवार मरुस्थलीके डाकू थे। ये लोग मुसाफिरोंको अकेले पा, उनका माल-असबाब लूट लेते थे और उनको अपना ग़ुलाम बना लेते थे। जहानआरा ने इन लोगों से अपने छुटकारेके लिए बहुत कुछ बिन्ती की, पर कुछ लाभ न हुआ।

वे लोग जहानआरा को सीरिया ले गये। वहाँ वह एक तुर्की व्यापारी के हाथ बेच दी गई। वह व्यापारी उसे कुस्तुनिया लेगया और उसे एक तुर्क पाशा के हाथ बेच दिया।

अरबकी मरुभूमिसे यहाँ तक पहुँचने में जहानआरा को जिन कठिनाइयों और मुसीबतोंका सामना करना पड़ा; उन सब के उल्लेख करने की यहाँ कोई आवश्यकता नहीं। इतना कहना ही काफी होगा, कि और सब ग़ुलामोंको जो तकलीफें सहन करनी पड़ीं, वही उसे भी सहन करनी पड़ीं। इतनी तकलीफें उठानेपर भी वही अपने धर्म-पथ से विचलित न हुई और न उसने परमात्माको ही दोषी ठहराया। ऐसी कठिन विपद् में पड़ने पर भी उसे फ़क़ीर साहब पर भी अविश्वास न हुआ। वह इन सब दुःखोंको अपने ही कर्मों का फल सम-

झती थी। उसे ऐसा मालूम होता था, मानो ईश्वर उसकी परीक्षा ले रहा है, अतएव वह उस परीक्षामें दृढ़ रहना उचित समझती थी। उसे इस बातका दृढ़ विश्वास था कि, भगवान् जिसे प्यार करते हैं; उसीपर कठिन विपद् डालकर उसकी परीक्षा लेते हैं। जिस तरह सोने की परीक्षा अग्नि द्वारा होती है, उसी तरह मनुष्यकी परीक्षा शारीरिक कष्टों से होती है। आत्माकी शुद्धिके लिए शारीरिक कष्ट रूपी परीक्षा अनिवार्य्य है। ईश्वर-परीक्षामें उत्तीर्ण होने के लिए वह अपनी सत्यनिष्ठा और धर्मनिष्ठा पर मज़बूत बनी रही। वह हर क्षण यही चाहती थी कि, मेरी परीक्षामें किसी प्रकारकी त्रुटि न रहे, मेरे सत्य धर्म का खरा रूप झलक उठे।

जहानआरा पाशाके घरमें दासी बनकर रहने लगी, पर उसके धार्म्मिक विचारोंमें ज़रा भी अन्तर न हुआ। वह हमेशा की तरह पाँचों वक़्तकी नमाज़ रोज़ पढ़ती थी। उसकी सूरत-शकल काली होगई, पर दिल स्वच्छ और साफ बना रहा।

एक दिन जब कि वह दोपहरकी नमाज़ पढ़ रही थी, उसकी साथिन एक हबसिन दासीने उसके गाल पर एक चपत ज़ोरसे जमाकर कहा—"बेवक़ूफ औरत! हम ग़ुलामों को रोज़े नमाज़ से क्या मतलब? चल उठ और अपना काम कर।"

जहानआरा—मैं अपने हिस्से का काम कर लूँगी। ज़रा ठहर जाओ, मैं नमाज़ पढ़ लूँ।

हवसिन—खुदाने तेरे साथ भलाई ही क्या की है,जो तू ऐसी नेकनीयती से उसकी इबादत कर रही है? उठती है, या दूसरी जमाऊँ?

जहानआरा—मैं कह रही हूँ कि मैं पहले नमाज़ पढ़ूँगी, उसके बाद कोई काम करूँगी। मिहरबानी करके यहाँ से हट जाओ, ज़ियादा न सताओ।

हवसिन—सताना वताना मैं कुछ नहीं समझती। बड़ी नमाज़ पढ़ने वाली आई! देखूँ, तो कैसे नमाज पढ़ती है!

यह कहकर उसने नमाज़ पढ़ती हुई जहानआराका हाथ ज़ोरसे पकड़कर खींचा और उसे घसीटने लगी। यह हाल देख जहानआरा की आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। उसने मन ही मन उस दुष्टा से छुटकारा पानेके लिए परमात्मा से प्रार्थना की।

ज्योंही जहानआरा की प्रार्थना शेष हुई, त्योंही न जाने किसने हबसिन के एक ऐसे जोरका तमाचा मारा कि, वह चक्कर खाकर ज़मीनपर गिर पड़ी। पाशा कहीं छिपे हुए यह सब तमाशा अपनी आँखों से देख रहे थे। पाशा पर नज़र पड़ते ही जहानआरा घबरा उठी। पाशा ने दया-भाव दिखलाते हुए उससे कहा कि घबराने की ज़रूरत नहीं, तुम अपनी नमाज़ खतम करके मेरे कमरे में आओ।

जहानआरा ने एकाग्रचित्त से ईश्वराराधना की। उस मौक़े पर पाशाके अचानक आजाने पर परमात्मा को धन्यवाद

दिया। तदनन्तर वह काँपती-काँपती पाशाके कमरेमें पहुँची। वहाँ पहुँचकर शर्म से सिकुड़ती हुई नीची आँखें करके चुपचाप अपने क़ायदे के मुआफ़िक़ दरी पर एक तरफ खड़ी हो गई।

जहानआरा को इस प्रकार खड़ी हुई देख पाशा बोला—"मैं तुम्हारे मज़हबी विचारोंसे बहुत खुश हुआ। मैंने आज तक किसी भी ग़ुलाम को तुम्हारी तरह अपनी ग़ुलामीके लिए खुदाको शुक्रिया अदा करते नहीं देखा। देखता हूँ, तुम्हारी इबादते इलाही बहुत ही पाक-साफ, सच्ची और दिली है। तुम्हारी हरकतों से मालूम होता है कि, तुम्हारी असलियत ज़रूर ऊँचे दर्जे की है।

जहानआराने पाशाके दयाभावके लिए उस के क़दमों में गिरकर अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित की। पाशा ने उसे उठाते हुए कहा—"अगरचे ख़ुदावन्द करीम ने तुम्हारी सूरत काली बनाई है, लेकिन तुम नेक हो, इसमें शक़ नहीं। तुम्हारा वतन कहाँ है?

जहानआरा—लौंडीका वतन हिन्दुस्तान है। मैं मक्का शरीफ हज करने आई थी। लौटते वक्त डाकुओंने मुझे लूट कर गिरफ़्तार कर लिया और मुझे इस हालत को पहुँचा दिया। ख़ुदा की बातों को ख़ुदा ही जानता है। न जाने उसने मेरी इसी में कुछ भलाई सोची हो।

पाशा—मुझे तुम्हारी इस बेबसी की हालत पर तर्स आता

है। मगर इस बातकी खुशी है कि, तुम मुसीबतमें गिरफ्तार होकर उस पर्वरदिगारको न भूलीं। जहाँतक मैं जानताहूँ, तुम पढ़ी-लिखी भी ज़रूर हो। मैं तुम्हारी बेहतरी और तरक्की की फिक्रमें हूँ। देखो, क्या कर सकता हूँ?

जहानआरा—हुज़ूर का ख़याल ठीक है। मुझे कुछ फारसी और अरबी आती है।

पाशा—बहुत खूब! लो, आज से मैं तुमको अपनी बेगम साहिबाकी चीफ सेक्रेटरी बनाता हूँ।

परमात्मा की कृपा से आज जहानआरा गुलामीसे छुटकारा पा, पाशा की प्रधान बेगम के खास सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त होगई। बेगम भी उसके हरेक कामसे खुश रहने लगी। जो परमात्माका ध्यान रखते हैं, उसी पर अपना आशा-भरोसा रखते हैं, उसीको विपद्-मुसीबतमें अपनी सहायता के लिए पुकारते हैं, परमात्मा ज़रूर उनकी खबर लेता है। देर अबेर से ज़रूरही उनको कष्टमुक्त करता है। पाठको! जहानआरा के वृत्तान्तसे शिक्षा ग्रहण कीजिये और दुःख-सुखमें परमात्मा को न भूलिये। अगर लोग उसे सुखमें याद करते रहें, तो दुःख हरगिज़ न हो। कहा है—

दुख में सुमिरन सब करें
सुख में करे न कोय।
जो सुख में समिरन करें,
तो दुख काहे को होय।

तीसवाँ परिच्छेद ।

मनोहर मेला ।

आज ईदका दूसरा दिन है । कुस्तुन्तुनियाँ के गली-कूचे, हाटबाट चौहट्टे और बाज़ार बड़ी ख़ूबीसे सजाये गये हैं । प्रत्येक आदमीने अपनी-अपनी औक़ात के मुआफ़िक़ बढ़िया-बढ़िया कपड़े पहन रक्खे हैं । आज हरेक के चेहरे पर प्रसन्नताके भाव अङ्कित हैं । हमारे मुसल्मान भाइयोंमें आजका दिन सबसे उत्तम गिना जाता है ।

प्रकृतिका यह अटल नियम है कि, दुःख के बाद सुख अवश्य होता है; और दुःखके बाद जो सुख होता है, उसमें साधारण सुखों से कुछ विशेषता होती है। अस्तु । जिनलोगों ने रमज़ान के रोज़ों—निराहार उपवास—के बाद ईद के त्यौहार की सृष्टि की है, वे यथार्थमें ही बड़े दूरदर्शी थे । जिस तरह असह्य गरमीके बाद शीत आनन्दप्रद मालूम होता है, वर्षाके पश्चात् सूर्य्य का प्रकाश सुखद बोध होता है, प्रसूतिके कठोर वेदना सहनेके बाद पुत्रजन्म का शब्द आनन्ददायी होता

है मीठे पदार्थ के पश्चात खट्टा, चरपरा पदार्थ रोचक मालूम होता है, उसी तरह रमज़ान के कठिन व्रत-संयम के बाद ईदका त्योहार आनन्दमय मालूम होता है। अर्थात् किसी भी वस्तुकी विशेषता और रोचकता उसके विपरीत पदार्थों के देखने और मिलान करने पर ही मालूम होती है।

आज सुलतान के महलके चौक के सामनेके बगीचे में एक मनोहर मेला भरा है। उस मेलेमें दूकान्दार और खरीदार दोनों ही तुर्क राज्य की उच्चकुल-सम्भूत रमणियाँ हैं। यानी इस मेलेमें माल बेचने वाली भी स्त्रियाँ और माल खरीदनेवाली भी स्त्रियाँ ही हैं। इस मेलेकी पुलिसका काम भी अमीरज़ादियाँ ही करती हैं। यानी यहाँ के पाशा, मीर तथा अन्यान्य अमीर-उमराओं की स्त्रियाँ, बेटियाँ और बहुएँ ही यहाँ पहरे वग़ैर: का इन्तज़ाम करती हैं। प्रत्येक दूकानकी सजधज निराली ही होती है। दुकानों के सजानेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी जाती। जगह-जगह तरह तरहके फव्वारे चलते हैं। नाना प्रकारके पक्षी कलरव करते हैं। जहाँ देखो वहाँ सुन्दर रमणी-कण्ठ-निःसृत मधुर मनोहर गान की तानें उड़ती हैं। इसके सिवा यहाँ दर्शकोंके मनोरञ्जनार्थ नाना प्रकारके खेल-तमाशे थियेटर प्रभृति होते हैं। सारे तुर्क राज्यकी सुन्दरियाँ आज इस मेलेमें एकत्रित होती हैं। यह बाग़ आजके दिन दूसरा परिस्तान हो जाता है। मगर इस क्षणस्थायी संसारी

स्वर्ग-सम मेलेके देखने का सौभाग्य केवल सुल्तान को ही होता है और कोई भी इसे देख नहीं सकता।

दिनके दस बज चुके हैं। मेला ठसाठस भर गया है। भीड़के मारे तिल धरनेको स्थान नहीं। इसी समय सुल-तान अपने महल की सङ्गमर्मर की सीढ़ियों से उतरते हुए नज़र आरहे हैं। उनके पीछे-पीछे उनकी सुन्दरी बेगमों—सुलतानाओं—और लौंडियों की क़तार आरही है। सब आईं,मगर सुलतानकी ख़ास सुलताना—पटरानी नहीं आईं, वह महलमें ही रह गईं। थोड़ी देरमें सुलतान और उनका दल मेले के बीचमें पहुँच गया। सुलतानका मुख प्रसन्न है। उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गसे प्रसन्नता की आभा टपक रही है। वे एक दूकानसे चीज़ें ख़रीदते हुए दूसरी पर जा रहे हैं और दासियाँ ख़रीदी हुई सामग्री को लेजा-लेजाकर महलमें एक जगह रखती जाती हैं।

एक सुन्दर युवती को देख सुलतानने पूछा—"तुम्हारी दूकान पर क्या चीज़ मिलती है?"

दूकानवाली—मैं इन मिठाइयों को बेचती हूँ, जो जहाँ-पनाहके सामने सिलसिलेवार सजी हुई हैं।

सुलतान—इनमें सबसे ज़ियादा मज़ेदार कौनसी मिठाई है?

दूका०—मेरी दूकानके रसगुल्ले बहुतही रसीले और ज़ायकेदार हैं।

सुलतान—मगर मेरा ख़याल तो कुछ और ही है।

दूका०—फरमाइये, वो क्या ?

सुलतान—मेरे ख़यालमें आपके लब (ओठ) रसगुल्लोंसे भी ज़ियादा रसीले और मज़ेदार हैं।

दूकान्दारिन सुलतान की बात सुनतेही शर्मा गई और कुछ न बोली। सुलतानायें इस दिल्लगी को देखकर हँस पड़ीं। सुलतान आगे बढ़कर दूसरी दूकान पर ठहर गये।

दूका०—साहिब! मेरे यहाँकी पकौड़ियाँ बड़ी मज़ेदार हैं।

सुलतान—मगर वे इतनी नर्म हैं कि मुझे उनकी ज़रूरत नहीं। यह कह कुछ पकौड़ियाँ ख़रीद,दूसरी दूकानका रास्ता लिया।

अपनी दूकान की ओर आते देख एक नवयुवतीने सुलतान से कहा—"ग़रीबपर्वर! मेरी रसभरियाँ आपको ज़रूर पसन्द आयेंगी।

सुलतान—((हँसकर) बहुत ख़ूब! उन्हें शादीके दिनके लिए रख छोड़ो।

वहाँ से चलकर सुलतान एक और दूकान के सामने पहुँचे, तो उस दूकानवालीने कहा—"हुज़ूर! मेरी दूकान की मिठाईमें अजब तासीर है। जो खाता है वह भी पछताता है और जो नहीं खाता है वह भी पछताता है। (जिस स्त्रीने यह बात कही, उसकी उम्र कोई ३२ सालकी होगी, पर वह ख़ूबसूरत ज़रूर थी)

सुलतान—इससे तो यही कहना पड़ता है कि, आपकी मिठाई उन दुनियवी उम्मीदोंकी तरह है, जिनके हासिल हो जानेपर भी इन्सान पछताता है और न हासिल होने पर भी पछताता है। अच्छा, इसीसे मैं आपकी मिठाई एक दिन ख़रीदना ही चाहता हूँ। क़ीमत फरमाइये।

दूका०—दस गिन्नियाँ।

सुलतान—बहुत ठीक। आप इसे हमारे बुज़ुर्ग पाशा, आपके शौहर, को दे दीजिये। क़ीमत मैं चुका दूँगा।

यह कहकर सुलतानने वह दूकान छोड़ी ही थी कि, उन्हें एक युवती ग्वालिन के रूपमें सिर पर घड़ा लिये हुए दिखाई दी। घड़े के बोझ के मारे उसकी नाज़ुक कमर बल खाती और लचकती थी। उसे पास आती हुई देख, एक हँसमुख सुलताना ने पूछा—"आपके सिर पर क्या है?"

ग्वालिन—आपके सुलतानके लिये बढ़िया दूध।

सुलताना—आपही का है या और किसी का?

ग्वालिन—हुज़ूर! मेरा ही है।

सुलतान—मुझे तो दूध की दरकार नहीं। दूधके मालिक को दरकार है।

दूधवाली हँसकर चली गई। सुलतान फिर वहाँ से एक बाइसिकल वाली की दूकान पर पहुँचे।

सुलतान—इन दो चक्कोंसे क्या फायदा है? क्या यह इन्सान के हाथ पाँव तोड़नेका नुसख़ा है?

दूका०—क़यामत के दरवाज़े पर जल्द पहुँचने का ज़रिया है।

सुलतान—तब तो रूस की फौजमें इसके भेजनेसे हम्-लोगों का भला हो सकता है।

इस तरह हँसते-हँसाते हमारे सुलतान एक दवा बेचने-वाली की दूकान पर पहुँचे और उससे पूछा—

"आपकी दूकानमें क्या बिकता है?"

दूका०—दवा और तन्दुरुस्ती।

सुलतान—तब भी आपकी तन्दुरुस्ती में फ़र्क़ नहीं मालूम होता। क्या इन दिनों बिक्री कम है?

दूका०—जहाँपनाह यह लौंडी अपनी दवाके ज़रिये से एक मरीज़ की तन्दुरुस्ती दूसरे मरीज़ को बेचनेमें कामयाब होती है, मगर हुज़ूर के ज़मानेमें मेरा रोज़गार भी दीगर हकीमोंकी तरह मिट्टीमें मिल गया है।

यह जवाब सुन सुलतान बहुतही खुश हुए और उसका सारा सामान ख़रीद लिया। फिर आगे बढ़कर एक दूसरी दूकान पर जा खड़े हुए और दूकानवाली से सवाल किया:—

"तुम क्या बेचती हो?"

दूका०—यह मुहब्बत के क़ब्रों की दूकान है।

सुलतान—क़ीमत क्या है?

दूकान०—मुहब्बत की बीमार 'चिड़िया।'

सुलतान—अफसोस! वह तो मेरे पास हाज़िर नहीं है।

दूका०—यह तो इस लौंडोंको आपके फरमाने के क़ब्ल ही मालूम था।

सुलतान—अगर चिड़िया नहीं तो हर्ज ही क्या है? उसके बजाय सुर्ख़ चमकीली चौखूँटी मुहर (ईंट) ही सही।

दूका०—(हँसकर) इससे ताशके खेलमें कामयाबी होना ज़रा टेढ़ी खीर है। माफ़ कीजिये, इन ताशकी चिड़िया और ईंटों की मुझे दर्कार नहीं।

सुलतानने उसकी हाज़िर-जवाबीपर खुश हो, उसका सारा माल ख़रीद लिया। इसके बाद वे हारमोनियम बाजे बेचने वाली की दूकान पर गये और पूछा—

"इस दूकानमें कौन चीज़ बिकती है?"

दूका०—हारमोनियम।

सुलतान—तुम्हारा दिल हारमोनियम की तरह राग-तान में ठीक है न?

दूका०—क्यों नहीं?

सुलतान—किसके साथ?

दूका०—खुदावन्द हज़रत ताला और उसके बन्दे एवं मेरे आक़ा—मालिक—आप सुलतानके साथ।

सुलतान—मैं तुम्हारी गुफ़्तगू से निहायत खुश हुआ, तुम्हारा हारमोनियम ज़रूर ख़रीदा जायगा।

इसके बाद वे एक मोटर बेचनेवाली की दूकानपर पहुँचे और पूछा—

"यह गाड़ी किस काम आती है ?"

दूका०—आशिक़ को भगा लेजाने के काम में।

सुलतान—अच्छा—आपने कोई तलाश किया या नहीं ?

दूका०—ज़रूर किया है।

सुलतान—वह कौन है ?

दूका०—मेरी ख़ुद की परछाईं ही है, जो रोशनीकी हालत में मेरे साथ रहती है और अँधेरा होतेही न जाने कहाँ ग़ायब हो जाती है।

सुलतान—बहुत से आशिक़ों का यही हाल है।

वहाँ से चलकर सुलतान एक बन्दूक़ तलवार प्रभृति हथियारवाली की दूकान पर पहुँचे और उससे पूछा—"आपकी तेग़ में तेज़ सान है या नहीं ?"

दूका०—जितनी तेज़ होनी चाहिये उतनी तेज़ ज़रूर है।

सुलतान—क्या तेग़े अबरू की सान से भी बढ़कर ?

दूकान्दारिन सुलतानकी बात सुनकर शर्मा गई और कुछ न बोली। सुलतान भी हँसकर दूसरी ओरको जाने लगे। इतने में एक छैल-छबीली औरतने सुलतान को आवाज़ देकर पूछा—"क्या जहाँपनाह को आमों की ज़रूरत नहीं ?"

सुलतान—कच्चे हैं या पक्के ?

दूका०—पक्के।

सुलतान—मेरे पास पक्के आमोंका ढेर है, इस वजहसे मुझे तो कच्चोंकी ज़रूरत है।

प्रिय पाठको ! अब इन दूकानों के विषयमें अधिक न कह, हम आपलोगोंको एक औरही दूकान पर ले चलना चाहते हैं। इस दूकानकी मालिक उस पाशा की स्त्री आयशा है, जिसके यहाँ जहानआरा चीफ सेक्रेटेरीके पद पर नियुक्त है। आज वह भी इसी दूकान पर मौजूद है।

सुलतान ने उस दूकान पर जाकर "आयशा" से जहान-आरा के सम्बन्धमें पूछा कि यह कौन है, इसका पूरा परिचय दीजिये। आयशा ने जहानआराके संयम, नियम, धर्मनिष्ठा, कर्त्तव्यपरायणता, सत्यप्रियता आदि गुणों की प्रशंसा करते हुए उसका पूरा परिचय दिया और यह भी कह दिया कि, यह हिन्दुस्तानकी रहनेवाली है। आयशा से जहानआरा की लम्बी-चौड़ी तारीफ सुनकर सुलतान ने उसे अपनी बेगम हुसैनी की चीफ सेक्रेटेरी बनाने की इच्छा प्रकट की। हुसैनी बेगमने भी उसके काले रङ्ग का ख़याल न कर, इस बातमें अपनी रज़ामन्दी दिखाई। इसके बाद उसे अपने साथ ले लिया, और हँसकर बोले—"वाह! 'जहानआरा' क्याही सुन्दर और मीठा नाम है!

इसके बाद उन्होंने दो चार दूकानों से और भी माल ख़रीदा। ले देकर, वे अपने दलबल और जहानआरा समेत महलों में दाख़िल होगये।

इकत्तीसवाँ परिच्छेद।

नेकीका इनाम।
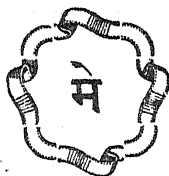
मेला समाप्त हो चुका है। सुलतान अपने महलमें आनन्दकी बाँसरी बजा रहे हैं। जहानआराको शाही महलोंमें पहुँचे हुए आज दस दिन होगये हैं। उसके सुन्दर स्वभाव, उसको बुद्धिमत्ता, धर्मनिष्ठा आदि से सुलतानकी सभी बेगमें उससे सन्तुष्ट और प्रसन्न हैं। हुसेनी बेगम तो उसे बहुत ही चाहती है। पल भर भी उसे अपनी आँखोंसे विलग नहीं करती।

ग्यारहवें दिन वह हम्मामसे ग़ुसल करके अपने कमरेमें जारही थी; इसी समय सुलतान की नज़र उस पर पड़ गई। आज उसका चेहरा एकदम गोरा था, आज वह आबनूसके कुन्दे जैसा कालापन न जाने कहाँ चला गया था, आज वह चन्द्रवदनी, मृगनयनी हो रही थी। सच तो यह है कि, अगर आज चाँद भी उसका चेहरा देखता तो शर्म के मारे मुँह छिपा

लेता। आज उसके गालोंके गुलाबी रङ्गको देखकर गुलाब भी लाज के मारे सिकुड़ा जाता था, दाँतों की पंक्तिको देखकर मोतियों की क़तार भी हेच मालूम होती थी, होठों की ललाई कुन्दरुफलकी ललाई को मात करती थी, सिर के श्यामकेश-गुच्छोंको देखकर भौरों की क़तार याद आती थी। आज वह एड़ी से चोटी तक साँचे में ढली हुई मालूम होती थी। विधाताने उसके गढ़ने में कोई बात उठा न रक्खी थी। चार नज़र होते ही सुलतान उसपर हज़ार जान से फ़िदा होगये। चन्द मिनिट तक तो उसकी ओर देखते-देखते चित्र-लिखे से होगये। किन्तु जहानआरा यह हाल देखकर कुछ लजा गई। मगर सुलतान सोफे से उठकर उसके पास ही पहुँच गये और कमलनयनी से मधुर वचनों में यों बोले—"आज मैं यह तिलिस्मा क्या देख रहा हूँ! मुझे तुम्हारी इस तब्दीली पर बड़ा ही तअज्जुब है! खैर, आज मैं सब समझ गया, मगर यह तो फरमाइये कि आपने अपनी हूरोंको भी शर्माने वाली खूबसूरती अबतक क्यों छिपा रक्खी थी?

जहानआरा—(नम्रता से) हुज़ूर! दुनिया की नज़र बदसे बचने और पाक-साफ़ रहनेकी ग़रज से; क्योंकि औरतों की इज्जत पाकदामनी ही से है।

सुलतान जहानआरा का जवाब सुनकर बहुतही खुश हुए। वह वहीं एक आसनपर बैठ गये और उसे भी बैठने

का इशारा किया। इसके बाद उन्होंने जहानआरा से उसकी गुज़री हुई रामकहानी कहनेका आग्रह किया। उसने भी अपनी कहानी शुरू से अख़ीर तक ज्यों की त्यों सुनादी।

सुलतान उसकी धर्मनिष्ठा और सत्यप्रियतासे ख़ूब सन्तुष्ट हुए और इसके एवज़में उसे अपनी बेगम बनानेकी इच्छा प्रकट की। जहानआराने भी इसके लिए अपनी स्वीकृति दे दी। अस्तु, दूसरे दिन ही वह सुलताना होगई। सुल्तान उसे सब सुल्तानाओं से अधिक चाहने लगे। जहानआरा आज अपनी मुसीबतों के पार होगई। आज उसे अपने सदाचरण और ईश्वर-निष्ठाका पुरस्कार मिलगया। इसी से आज वह बड़ी प्रसन्न है।

बहुत से आदमी नीचे से ऊँचे उठकर, निर्धनसे धनवान होकर, मूर्ख से विद्वान् होकर, निम्न पदसे उच्च पदपर पहुँच कर, इतने अभिमानी होजाते हैं कि, सब दुनियाको तिनके के समान समझते हैं। अपने यार-दोस्त नाते-रिश्तेदारोंसे भी मुँहसे नहीं बोलते। बहुतसे तो ऐसे देखे जाते हैं, जो उच्च-पदस्थ होकर, अपने जन्मदाता ग़रीब बापको बाप कहने में भी आनाकानी दिखाते हैं। कितनों ही ने तो अपने बापको अपना सेवक कहकर लोगों को परिचय दिया है। मगर जहानआरा में यह बू न आई थी। वह ख़ुदी से हज़ार कोस दूर भागती थी और कहा करती थी:—

है तजस्सुस शर्त यां मिलनेको क्या मिलता नहीं।
है ख़ुदी जबतक इन्सांमें ख़ुदा मिलता नहीं॥

ऐसेही उच्च विचारोंके कारण उसके स्वभाव में ज़रा भी परिवर्त्तन न हुआ। इतने ऊँचे दर्जे पर पहुँचकर भी उसे अभिमान छू नहीं गया था। अपने मातहतों और नौकरोंके साथ वह बहुतही सभ्यताका बर्ताव करती थी। नौकरों और ग़ुलामोंको ग़ुलाम न समझती थी, बल्कि उन्हें भी अपनेही जैसा ख़ुदाका बन्दा समझती थी, इसीसे उससे छोटे-बड़े सभी राज़ी रहते थे।

उसने अपने इस पदपर पहुँचने की ख़बर एक पत्र द्वारा हिन्दुस्तान के नव्वाब निज़ामुद्दौला के पास भेजी। उनको मक्का शरीफ जाने की सलाह देने के लिए, उन्हें हार्दिक धन्यवाद दिया। लिखा कि, आपके इस ऐहसान को मैं ताज़ीस्त न भूलूँगी, आपकी सलाह से ही मेरा भला हुआ है।

जहानआराका ख़त पाकर नवाब साहब बहुत ही प्रसन्न हुए। नवाब साहब भी अब वह पहले के नवाब नहीं रहे थे, ठोकरें खाने से उन्हें भी अक्ल आगई थी। अब उन्होंने भी ऐय्याशी और फिज़ूलखर्चीको धता बता दी थी। किन्तु पहले की फिज़ूलखर्ची वग़ैरः के कारण उनके सिरपर क़र्ज़ बहुत होगया था। नवाब साहब ने जहानआरा के ख़त का जवाब दिया। उस में उन्होंने उसकी इस तरक्की के लिए उसे मुबा-

रकवाद दिया। साथ ही अपनी बुरी हालत का ज़िक्र भी कर दिया।

कुछ दिनोंके बाद नवाब निज़ामुद्दौला को तुर्की सफ़ीर की मार्फ़त एक ख़त मिला। उसपर सल्तनत तुर्कीकी मुहर थी। पत्र खोलकर पढ़ा गया। उसमें नवाब निज़ामुद्दौला को तुर्की फौज में एक ऊँचा पद दिया गया था। नवाबने इस मौके को ग़नीमत समझा। वह शीघ्रही कुस्तुन्तुनिया को रवाना होगये और चन्द रोज़ की सफर के बाद सकुशल वहाँ पहुँच गये और अपने पदका चार्ज लेलिया। वहाँ इनके दिन आनन्द से कटने लगे। इनके अपने काममें दक्षता दिखानेके कारण इनके अफसर भी इनसे सन्तुष्ट रहने लगे। इनकी बहिन नूरजहाँ की शादी भी वहाँ के एक पाशा के साथ होगई।

भगवान् ने जिस तरह जहानआरा को उसकी नेकी का इनाम दिया, उसीतरह सबको दे! जिस तरह इन लोगोंके बुरे दिन जाकर अच्छे दिन फिरे, उसी तरह भगवान् सबके दिन फेरे!

आइये पाठक! अब हमलोग भी भारत लौट चलें।

बत्तीसवाँ परिच्छेद।

गुलाब और दौलतका दुर्भाग्य।
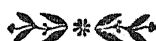
रानीगञ्ज ईस्ट इण्डियन रेलवे का ष्टेशन है और अपनी कोयलोंकी खानोंके लिए प्रसिद्ध है। इस की खानोंका विस्तार बहुत दूर-दूर तक है। यहाँ नित्यही हज़ारों कुली खानों से कोयले निकालने का काम करते हैं। प्रश्न उठता है कि इतना कोयला किस काम में आता है? यह कोयला उन अञ्जनों के लिए निकाला जाता है, जो हमारी रेलगाड़ी को खींचते हैं, जिनके द्वारा हमारे लिए रेशमी और सूती कपड़े तय्यार होते हैं, जिनके द्वारा हमारे बर्तनेके लिए तेल पेरा जाता है, आटा पीसा जाता है, पुस्तकें छापी जाती हैं। इसी कोयले से बिजली पैदा की जाती है, जो बड़े-बड़े पहाड़ और पत्थरों को चार-चार कर देती है। हज़ारों गधे और खच्चर यहाँसे कोयले ढो ढोकर

ष्टेशन तक पहुँचाते हैं। वहाँ से वह हर तरफ को रवानः हो जाता है।

आज हम यहाँ पर दो व्यक्तियों को तनक्षीण मन-मलीन देखते हैं। इनके चेहरे इस बातकी शहादत दे रहे हैं कि, ये मानसिक वेदना से अत्यन्त दुःखी हैं। कोयलेकी खानमें काम करने से इनके चेहरे और कपड़े काले स्याह हो रहे हैं। अच्छी तरह देखने से मालूम होता है कि, ये मामूली कुली नहीं हैं। पहचाना पाठक! यह कौन हैं? चक्करमें पड़ने की ज़रूरत नहीं। देखिये, ये हमारे पूर्व्वपरिचित गुलाब और दौलत हैं। वारण्ट के भय से इन्होंने यहाँ आकर आश्रय लिया है। अब ये दोनों पति-पत्नी बनकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब इनके चेहरों पर वह रौनक़ नहीं है। असमय में ही मानसिक क्लेश और चिन्ताके कारण बाल सफ़ेद होगये हैं, मुँह पर झुर्रियाँ पड़ गई हैं, गालों में सूख सूखकर खड्डे पड़ गये हैं; शरीर का रक्त मांस सूख कर हड्डियाँ ही हड्डियाँ रह गई हैं। हँसी तो कभी इन को आती ही नहीं। ज़बर्दस्ती हँसनेपर भी चेहरे पर प्रसन्नता के भाव नहीं झलकते।

पाठक! उन दोनों की दुर्गतिका इतना परिचयही यथेष्ट होगा। अब आपसे अनुरोध है कि, उन दोनोंकी बातें सुनिये:—

गुलाब—(घृणापूर्व्वक) हाय! दौलत, देखो हम लोगों की कैसी दुर्गति हो रही है!

दौलत—यह सब कुसूर तुम्हारी पहले की खूबसूरती का है। अगर मैं तुम्हारी मोहिनी मूरत और सोहनी सूरत पर मुग्ध होकर, तुम्हारी मधुर बातों के जालमें न फँसता, तुम्हारी सलाह से तुमको तुम्हारे विरहरोगी पति से अलग करके न ले भागता, तो आज यह दिन देखने को क्यों मिलता ? अगर तुम इतनी सुन्दर न होतीं, अथवा भागने पर राज़ी न होतीं तो मैं कैसे भाग सकता था ? अतः ये सारा दोष अपनी पूर्वकी सुन्दरता और चञ्चलताके माथे मढ़ें अथवा अपने माता-पिता को दोषी बनावें, जिन्होंने तुम जैसी सुन्दरी और चञ्चला नव-युवती की शादी वैसे बूढ़े खुर्राँट से की। अगर वे सब दोषी नहीं हैं, तो अपने फूटे भाग्यको दोषी बनाओ, मुझे दोष देनेसे क्या मतलब ?

गुलाब—मैं इस जीवन से ऊब उठी ! इस तरहके जीवन से तो जेल में रहना ही भला !

दौलत—मेरी भी यही इच्छा है। हमारे पापोंका प्रतिफल बड़े ही भयङ्कर रूपमें मिल रहा है।

गुलाब—अपराधसे भी अधिक दण्ड मिला। मुझे तो विश्वास था कि, दुर्दैव अब दया दिखावेगा और हमें क्षमा प्रदान करेगा।

दौलत—मेरा भी ऐसा ही ख़याल है कि, अगर दैव के यहाँ कुछ भी न्याय है, तो हमें अब और दण्ड न मिलना चाहिये।

गुलाब—पर जबतक हम इस साक्षात् नरक से विदा न होंगी, तबतक यही दशा रहेगी।

दौलत—मैं तो कलकत्ता चलना अच्छा समझता हूँ। अब हम लोगोंके पकड़े जानेका भय नहीं। अब तो हमें हमारे जन्मदाता माता-पिता भी नहीं पहचान सकते, तब दूसरे की तो क्या सामर्थ्य है? कलकत्ते पहुँचकर मैं ज़िन्दगी बसर करने का अच्छा उपाय खोज निकालूँगा।

गुलाब—मेरी भी यही राय है। अपने पास एक मास तक खाने पीने के लिए रुपया है ही। पकड़े जानेके लिए हम लोग आप ही उतावले हो रहे हैं, इसलिए पकड़े जायँ तो कोई हर्ज नहीं। इस जीवन से तो जेलखाना हज़ार दर्जे अच्छा।

इस तरह बातें करते-करते वे दोनों खानपर पहुँच गये। सब कुलियों के हाज़िर होते ही ये दोनों भी और कुलियों के साथ खान में नीचे उतार दिये गये। नीचे जहाँ देखो वहाँ कोयला ही कोयला दिखाई देता था। चारों ओर अन्धकार था। दिन के समय भी वहाँ प्रकाश की पहुँच न होती थी। वह स्थान ज़मीन से प्रायः बीस फुट नीचे था। हरेक कुलीके पास ज़रा-ज़रा अन्तर पर एक-एक धीमी रोशनी की लालटेन टिमटिमाती थी, जिस से वह भयङ्कर स्थान और भी भयङ्कर हो रहा था।

ईश्वर की लीला! अचानक ही न जाने कहाँ से उस के

भीतर प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित हो उठी। परिणाम यह हुआ कि, और कुलियोंके साथ गुलाब और दौलतका वहाँ इस बुरी हालत में अन्त होगया—उनके घोर पापोंका प्रायश्चित हो गया। वे साँसारिक दुःख-यन्त्रणाओं से मुक्त हो सदाके लिए इस संसार से विदा होगये।

पाठक! अब हमारे उपन्यास का भी अन्तही समझिये।

राजकुमार बी० ए० की परीक्षामें उत्तीर्ण हो, बी० ए० की उपाधि ग्रहण कर अपनी गृहस्थी और ज़मींदारी को बड़ी दक्षता और चतुराई से चला रहा है। उसका विवाह एक सजातीय सुन्दरी रमणीसे होगया है। उसका गार्हस्थजीवन सानन्द कट रहा है। वह बड़ा परोपकारी और धर्मनिष्ठ है, ग़रीब-दुःखियों की सदा ख़बर लेता रहता है, और यथासामर्थ्य उनका दुःख दूर करता है। भगवान् सब किसी को राजकुमारकासा गार्हस्थ-सुख प्रदान करें।

नवाब के साथी जहाँगीर, प्यारे और रामप्रसाद की भी बुरी हालत है। दाने-दाने से तङ्ग हैं। बदन पर कपड़े नहीं, पैरोंमें जूते नहीं। भगवान् ऐसे जीवनसे सबको बचावें।

अब हमारा उपन्यास समाप्ति को पहुँच चुका। जिसने जैसी करनी की उसने वैसा फल पाया। जिन्होंने कुराह को

छोड़ सुराह पर क़दम रक्खा, ईश्वर में ध्यान लगाया, उनका भला हुआ। आशा है, हमारे पाठक पाठिकायें इससे अच्छी शिक्षा ग्रहण करेंगे। बस, अब लेखक भी अपनी लेखनी को विश्राम देता हुआ अपने प्रिय पाठकोंसे विदा होता है।

महाकवि ग़ालिब ।

(दूसरी आवृत्ति)

जिनका उर्दू भाषा के साहित्य से थोड़ा भी लगाव है वे महाकवि ग़ालिब को जानते हैं। महाकवि ने उर्दू भाषा में जो कुछ लिखा है ग़नीमत है। उसी प्रतिभाशाली कवि के सर्वप्रिय काव्य को भावार्थ-सहित हमने प्रकाशित किया है। यही नहीं, पुस्तक के आदिमें महाकवि का जीवन-चरित्र, और उनके काव्य की समालोचना भी विस्तृतरूप से की गई है। भिन्न-भिन्न भाषाओं के काव्य को पढ़कर जो लोग अपनी प्रतिभा और विचार-शक्ति को समुज्ज्वल करना चाहते हैं, उनसे हम इस पुस्तक के पढ़ने के लिए ज़बरदस्त सिफ़ारिश करते हैं। मूल्य प्रति पुस्तक ॥) और डाक-खर्च ≈)

सम्मतियाँ।

"उर्दूवाले जिन ग़ालिब को 'खुदाय सुख़न' या भाषा के भगवान् कहते हैं; इस पुस्तक में उन्हीं ग़ालिब की जीवनी और कविता दी गई है। ** हिन्दी में यह पुस्तक अपने ढङ्ग की पहली है। ग़ालिब की कविता में भाव है; अलङ्कार है; सभी कुछ है। ग़ालिब की कविताओं का पढ़ना खिले हुए पुष्पों से परिपूर्ण उद्यान में विचरण करना है।" **हिन्दी-बङ्गवासी।**

"ग़ालिब उर्दू के नामी शायर थे। शर्मांजी उर्दू कविता के नामी रसिक हैं। आपने ग़ालिब की कविता की खूबी खूब ही दिखाई है। आपकी आलोचना योग्यतापूर्ण है।" **सरस्वती।**

पता—**हरिदास एण्ड कम्पनी,**

२०१ हरिसन रोड, **कलकत्ता।**

सूचना— इसी तरह की दो पुस्तकें **"उस्ताद ज़ौक"** और **"महाकविदाग़"** भी तैयार हैं। देखने-लायक हैं। दाम ।≈) और ॥)